"मानवता की प्रगति दंड में नहीं, बल्कि करुणा में निहित है।
-दलाई लामा

अगली पारी

बिहार विधानसभा चुनाव में राष्ट्रीय जनतांत्रिक गठबंधन (राजग) को मिली प्रचंड जीत के बाद पटना के ऐतिहासिक गांधी मैदान में जनता दल (यूनाइटेड) के सर्वोच्च नेता नीतीश कुमार ने अपने राजनीतिक जीवन में दसवीं बार राज्य के मुख्यमंत्री पद की शपथ लेकर इतिहास तो रचा ही है, प्रधानमंत्री मोदी सहित राजग के दिग्गज नेताओं की मौजूदगी में बिहार की राजनीति में स्थिरता का संदेश भी दिया है। नीतीश कुमार की यह उपलब्धि कोई सामान्य घटना नहीं है। वह करीब बीस वर्षों से राज्य के मुख्यमंत्री हैं, और केंद्र में भी मंत्री रहे हैं। उन्हें दूसरे नेताओं से अलग यह बनाता है कि इतनी लंबी राजनीतिक पारी में भी उन पर परिवारवाद या भ्रष्टाचार के आरोप नहीं हैं। नीतीश ने बिहार को कथित जंगलराज से सुशासन की तरफ तब मोड़ा, जब राज्य अपहरण, हत्या और भ्रष्टाचार का पर्याय बन चुका था। बिहार की राजनीति में उनका एक महत्वपूर्ण योगदान यह भी रहा कि उन्होंने अति पिछड़ों और महादलितों को न केवल राजनीतिक पहचान दी, बल्कि सत्ता में हिस्सेदारी भी दी। महादलित विकास मिशन, ईबीसी को आरक्षण और पंचायती राज में महिलाओं को 50 फीसदी आरक्षण जैसे कदम सामाजिक समीकरणों को पूरी तरह से बदलने वाले थे। आज भी बिहार की महिलाएं और अति पिछड़ा मतदाता नीतीश को उसी भरोसे के साथ देखते हैं। शराबबंदी की पहल महज एक नीतिगत फैसला नहीं था, बल्कि यह महिलाओं के सम्मान और घरेलू हिंसा पर लगाम कसने के लिए की गई सामाजिक क्रांति थी। भाजपा के साथ होने से उनकी ताकत दोगुनी हुई, क्योंकि वह जानते हैं कि बिहार जैसे राज्य में केंद्र के साथ चलना जरूरी है। विपक्षियों ने चुनाव से पहले उनके राजनीतिक भविष्य को लेकर क्या-क्या नहीं कहा, इसके बावजूद अगर वह फिर से इतिहास रचने को तैयार हैं, तो वजह यही है कि वह राजनीति व जनता, दोनों की नब्ज पहचानते हैं। वह उन बारीकियों को भी समझते हैं, जिनमें उन्होंने पलटूराम कहलाने का जोखिम उठाते हुए भी

समयानुकूल राजनीतिक फैसले लेने का कौशल नहीं छोड़ा। उन्होंने यह भी साबित किया है कि राजनीति में छवि का निर्माण सियासी नाटकीयता से नहीं, बल्कि वर्षों तक लगातार काम करने से होता है। बहरहाल, अब उनसे यह उम्मीद लाजिमी है कि वह राज्य के बुनियादी मुद्दों पर किए जा रहे कार्यों को गति देंगे, ताकि बिहार, भारत का ग्रोथ इंजन बन सके।

हमें यूनुस को खुश करने की जरूरत नहीं

पाकिस्तानी सेना प्रमुख जनरल मुनीर भारत पर दो-मोर्चे वाला छद्म युद्ध थोपना चाहते हैं और यूनुस सरकार उनका ट्रंप कार्ड है। ऐसे में, भारत ने शेख हसीना को वापस भेजने के बांग्लादेश के आग्रह को खारिज कर कूटनीतिक दृष्टि से एक सही कदम उठाया है।

बांग्लादेश के इंटरनेशनल क्राइम्स ट्रिब्यूनल (आईसीटी) ने सोमवार को अपदस्थ प्रधानमंत्री शेख हसीना को मानवता के खिलाफ अपराधों के लिए मौत की सजा सुनाई, जिससे अवामी लीग और यूनुस के नेतृत्व वाली अंतरिम सरकार के बीच भारी टकराव का माहौल बन गया। गौरतलब है कि अंतरिम सरकार को पाकिस्तान समर्थक जमात-ए-इस्लामी जैसे कट्टरपंथी इस्लामी ग्रुप का समर्थन हासिल है। आरोपी की उपस्थिति के बगैर सुनवाई में बचाव के लिए हमेशा कम मौके मिलते हैं, खासकर तब, जब आरोपी को अपना बचाव दल बनाने की इजाजत न हो। हसीना का मामला आईसीटी द्वारा नियुक्त एक वकील देख रहा था, जिसने न तो बचाव पक्ष की तैयारी के लिए समय लेने की खातिर स्थगन की मांग रखी और न ही आरोप-पत्र दाखिल होने के बाद पांच हफ्तों की सुनवाई में एक भी गवाह पेश किया।

सुबीर भौमिक
वरिष्ठ पत्रकार

संयुक्त राष्ट्र एवं एमनेस्टी इंटरनेशनल ने अपदस्थ प्रधानमंत्री को मौत की सजा दिए जाने पर नाराजगी जताई है। संयुक्त राष्ट्र मानवाधिकार की प्रवक्ता रवीना शमदासानी ने एक बयान में कहा कि हालांकि हमें इस सुनवाई के बारे में पता नहीं था, फिर भी हमने हमेशा जवाबदेहीपूर्ण कार्यवाही की वकालत की है, खासकर अंतरराष्ट्रीय अपराध के आरोपों में, ताकि बिना किसी संदेह के उचित कार्यवाही और निष्पक्ष सुनवाई के अंतरराष्ट्रीय मानकों को पूरा किया जा सके। यह बात तब और भी महत्वपूर्ण हो जाती है, जब सुनवाई बिना आरोपी के मौजूदगी के की जाती है और फिर मौत की सजा सुनाई जाती है। हमें इस सजा पर खेद है और हम इसका विरोध करते हैं।

एमनेस्टी इंटरनेशनल की सेक्रेटरी जनरल, एग्नेस कैलामार्ड ने एक बयान में कहा कि 'शेख हसीना को मौत की सजा देने से 2024 के नरसंहार के पीड़ितों को इंसाफ नहीं मिलेगा।' उन्होंने अपने बयान में कहा, 'जुलाई-अगस्त, 2024 में छात्रों के विरोध प्रदर्शनों के दौरान हुए गंभीर उल्लंघन और मानवता के खिलाफ अपराधों के आरोपों के लिए जो लोग व्यक्तिगत रूप से जिम्मेदार हैं, उनकी जांच होनी चाहिए और निष्पक्ष

सुनवाई में उन पर मुकदमा चलना चाहिए। हालांकि, यह सुनवाई और सजा न तो निष्पक्ष है और न ही सही। पीड़ितों को न्याय और जवाबदेही की जरूरत है, फिर भी मौत की सजा मानवाधिकारों के उल्लंघन को और बढ़ाती है। यह सबसे क्रूर, अपमानजनक और अमानवीय सजा है और किसी भी न्याय प्रक्रिया में इसकी कोई जगह नहीं है।'

शेख हसीना को मृत्युदंड देने से तब तक कोई फर्क नहीं पड़ेगा, जब तक वह भारत में हैं। लेकिन इस फैसले से साफ है कि यूनुस सरकार अवामी लीग पर लगा प्रतिबंध नहीं हटाएगी और न ही उसे फरवरी में होने वाले चुनावों में हिस्सा लेने की इजाजत देगी। अवामी लीग ने बांग्लादेश की आजादी की लड़ाई का नेतृत्व किया और आजादी के बाद के आधे इतिहास में उस पर राज किया। चाहे अवामी लीग के किसी भी नेता को सजा मिल जाए, लेकिन अवामी लीग के बिना बांग्लादेश में सबको साथ लेकर चलने वाला चुनाव नहीं हो सकता। लीग कभी भी हथियारबंद क्रांति वाली पार्टी नहीं थी, बल्कि यह चुनावों के जरिये सत्ता में यकीन रखती थी। 1970 के पाकिस्तान चुनावों में जबर्दस्त जीत के बाद जब इसे सत्ता से बाहर कर दिया गया और बंगाली लोगों का भयानक नरसंहार हुआ, तभी अवामी लीग को हथियारबंद लड़ाई का सहारा लेना पड़ा। 1971 में पाकिस्तानी सेना की तरह, यूनुस और उनके कट्टर इस्लामी समर्थक अवामी लीग को हाशिये पर धकेल रहे हैं। इसके तहत यूनुस ने पहले तो सुनियोजित अभियान के तहत अवामी लीग को सत्ता से हटाया गया, फिर उसे चुनाव में भागीदारी करने से प्रतिबंधित भी कर दिया।

हैरानी की बात नहीं है कि हसीना के बेटे सजीब वाजेद जॉय ने कहा कि अगर अवामी लीग को चुनाव में शामिल होने का मौका नहीं दिया गया, तो हिंसा हो सकती है। बांग्लादेश की राजनीति में नतीजे अक्सर सड़क पर लोगों के समर्थन से तय होते हैं। हालात बिगड़े हुए हैं, अब यूनुस को अवामी लीग के बड़े विरोध प्रदर्शनों का सामना करना पड़ सकता है, जिसे दबाने के लिए उन्होंने पुलिस को खुली छूट दे दी है और अपने सलाहकार आसिफ महमूद शोजिब भुयान को नेशनल आर्म्ड रिजर्व की आड़ में एक इस्लामी मिलिशिया बनाने की भी इजाजत दे दी है। करीब 8,000 मिलिशिया के लोगों को पुलिस की वर्दी और दंगा कंट्रोल करने वाले उपकरण दिए गए, जो कानून और व्यवस्था के कामों के लिए मानक संचालन प्रक्रियाओं का खुला उल्लंघन है। अगर अवामी लीग के प्रदर्शनकारियों पर पुलिस और मिलिशिया की हथियारबंद कार्रवाई होती है, तो उन्हें हथियारबंद कार्रवाई करने के लिए मजबूर होना पड़ेगा और इसके लिए सिर्फ यूनुस ही जिम्मेदार होंगे।

मोदी सरकार ने सजा के फैसले और हसीना को वापस भेजने के बांग्लादेश के आग्रह को नजरअंदाज कर दिया है। बांग्लादेश के विदेश मंत्रालय के प्रवक्ता के एक बयान में कहा गया है कि भारत ने आईसीटी के फैसले पर ध्यान दिया है। लेकिन भारत के सभी राजनीतिक दल हसीना को पनाह देना जारी रखने के पक्ष में हैं। भारत के पास यूनुस की मदद करने का कोई कारण नहीं है, जिनकी पाकिस्तान से दोस्ती जगजाहिर है। चिंता की बात यह है कि पाकिस्तान के बांग्लादेश के साथ सैन्य रिश्ते तेजी से सुधर रहे हैं। इससे पाकिस्तान के सेना प्रमुख जनरल आसिम मुनीर को यह आत्मविश्वास मिला है कि वह भविष्य में किसी लड़ाई में भारत को पूरब के मोर्चे पर भी धमका सकते हैं। मुनीर साफ तौर पर 1971 से पहले के दिनों की तरह भारत पर दो-मोर्चे वाला छद्म युद्ध थोपना चाहते हैं और यूनुस सरकार उनका ट्रंप कार्ड है।

बांग्लादेश में भारत के पास कोई संक्षिप्त विकल्प नहीं है। 1971 के मुक्ति युद्ध की सोच से जुड़े आजादी के समर्थक लोग भारत के भरोसेमंद साथी हैं। दिल्ली ने उन्हें मजबूत बनाने के तरीके ढूंढ लिए हैं, भले ही इसका मतलब अवामी लीग के संदिग्ध लोगों को हटाना हो, जिन्होंने सत्ता में रहते हुए हिफाजत-ए-इस्लाम जैसे कट्टरपंथी इस्लामी तत्वों के साथ मिलकर काम किया है। अफगानिस्तान की तरह बांग्लादेश में भी राष्ट्रवाद को भाषा एवं संस्कृति से ताकत मिलती है, न कि कट्टरपंथी इस्लाम से, जो पाकिस्तान के जिहादी एजेंडे का मुकाबला करने के लिए भारत का सबसे अच्छा दांव है। जो काम पश्चिम में हुआ, वही अब भारत को पूरब में भी करना चाहिए, जैसा 1971 में हुआ था, लेकिन सिर्फ दिल्ली ही अपनी सही प्राथमिकता तय कर सकती है।

मानव तस्करी

बच्चे गुम होकर जाते कहां हैं

देश में हर आठ मिनट में एक बच्चा गुम हो रहा है। बच्चों की गुमशुदगी की शिकायत 2022 की तुलना में 2023 में 9.5 फीसदी बढ़ी है। इनमें 71.4 प्रतिशत लड़कियां हैं।

उच्चतम न्यायालय ने भारत में हर आठ मिनट में एक बच्चे की गुमशुदगी पर गहरी चिंता प्रकट की और तत्काल इसका समाधान चाहा। यह चिंता विभिन्न अंतरराष्ट्रीय व राष्ट्रीय सर्वेक्षणों से भी उभरती है। एनसीआरबी की *भारत में अपराध 2023* रिपोर्ट के अनुसार, देश में दर्ज होने वाली बच्चों की गुमशुदगी की शिकायत 2022 की तुलना में 2023 में 9.5 फीसदी बढ़ी है। इनमें 71.4 प्रतिशत लड़कियां हैं। एनसीआरबी के आंकड़ों का राज्यवार विश्लेषण करें, तो उत्तर प्रदेश सबसे आगे नजर आता है, जहां 2023 में 25,000 से अधिक मामले दर्ज हुए। उसके बाद बिहार (18,000), पश्चिम बंगाल (15,000) और महाराष्ट्र आते हैं। दिल्ली-एनसीआर जैसे शहरों में तो 50 प्रतिशत से अधिक मामलों का पता ही नहीं लग पाता है।

रिपोर्ट के अनुसार, कुल गुमशुदा बच्चों में से करीब 74 फीसदी को बरामद किया जाता है, लेकिन शेष 26 प्रतिशत बच्चे गुम ही रह जाते हैं। ये बच्चे अक्सर मानव तस्करी के नेटवर्क में फंस जाते हैं। एनसीआरबी का 'ट्रैक-चाइल्ड' पोर्टल 2023 में ऐसे 80 प्रतिशत मामलों में सहायक सिद्ध हुआ, लेकिन डाटा एंट्री में देरी और स्थानीय पुलिस की उदासीनता इसमें बड़ी बाधाएं बनी रहीं। रिपोर्ट में बच्चों के खिलाफ बढ़े 9.2 फीसदी अपराधों में गुमशुदगी को प्रमुख घटक माना गया। इन आंकड़ों के अलावा, यूनिसेफ इंडिया की 2024 की वार्षिक रिपोर्ट *द स्टेट ऑफ द वर्ल्ड्स चिल्ड्रेन* में वैश्विक स्तर पर 4.88 करोड़ बच्चों के विस्थापन का जिक्र है, जिसमें भारत का बड़ा हिस्सा है। रिपोर्ट के अनुसार, संघर्ष और हिंसा से प्रभावित क्षेत्रों में 5.2 करोड़ से अधिक बच्चे स्कूल से वंचित हैं, जो गुमशुदगी का प्राथमिक कारण बनता है।

जयसिंह रावत

भारत में, ग्रामीण क्षेत्रों में गरीबी व शिक्षा की कमी के चलते 40 फीसदी गुमशुदा बच्चे मानव तस्करी के शिकार होते हैं। यूनिसेफ के अनुमानों के अनुसार 2024 में डेढ़ से दो लाख बच्चे गुम हुए, जिनमें 30 प्रतिशत तस्करी से जुड़े। संगठन ने डिजिटल ट्रैकिंग एप्स व स्कूल-आधारित अलर्ट सिस्टम की सिफारिश की है, ताकि प्रारंभिक चेतावनी प्रणाली मजबूत हो। बचपन बचाओ आंदोलन (बीबीए) के सर्वेक्षण के अनुसार, 70 फीसदी गुमशुदा बच्चे बाल श्रम या जबरन विवाह में धकेल दिए जाते हैं, जिसमें 2024-25 में 20 फीसदी की वृद्धि हुई है। बीबीए का नवीनतम डाटा ऑनलाइन ग्रूमिंग को नया खतरा बताता है। इसी तरह सेव द चिल्ड्रेन इंडिया की 2024 की रिपोर्ट *स्टोलेन फ्यूचर्स* में गुमशुदगी को 'चोरी हुआ भविष्य' करार दिया गया है। रिपोर्ट के अनुसार, 2023 में गुमशुदा बच्चों में 25 फीसदी यौन शोषण से जुड़े थे। संगठन ने पीओसीएसओ एक्ट को मजबूत करने और एनजीओ-सरकार साझेदारी की वकालत की है। एनसीपीसीआर का 2025 डैशबोर्ड रीयल-टाइम ट्रैकिंग उपलब्ध कराता है। इसने 'वात्सल्य' पोर्टल लॉन्च किया है, जो लापता और असुरक्षित बच्चों का डाटाबेस रखता है, लेकिन जागरूकता की कमी एक बड़ी बाधा है।

एनसीआरबी के अनुसार, 45,000 मामले तस्करी से जुड़े हैं। यूनिसेफ की रिपोर्ट सीमा क्षेत्रों में नेपाल-बांग्लादेश मार्ग पर प्रकाश डालती है। सुप्रीम कोर्ट के निर्देशानुसार, केंद्र को एआई-आधारित ट्रैकिंग पर आधारित 'बाल सुरक्षा पोर्टल' लॉन्च करना चाहिए। यूनिसेफ की सलाह पर स्कूलों में अलर्ट सिस्टम लागू हों। बीबीए ने पुलिस प्रशिक्षण पर जोर दिया है, जबकि सेव द चिल्ड्रेन ने पीओसीएसओ को सख्ती से लागू करने की मांग की। एनसीपीसीआर का 'ई-बाल निदान' प्लेटफॉर्म शिकायत पंजीकरण को आसान बनाए। राज्य सरकारें 'ट्रैक-चाइल्ड' को अनिवार्य करें व एनजीओ के साथ साझेदारी बढ़ाएं।

वृद्धावस्था का जवाब है अपने दिमाग को व्यस्त रखना और अपनी जिंदगी को ऐसे जीना, जैसे वह कभी खत्म ही न हो।
-लियोन एडेल

जिंदगी का सबसे सुंदर अध्याय

सातवें दशक का पार हो जाना किसी तरह का अंतिम सत्र नहीं, बल्कि शुरुआत का नया अध्याय है। 'सत्तर के पार' होने पर एहसास हुआ कि मुझे खुद से कुछ सवाल करने चाहिए।

मेरे जीवन में बहुत कम घटनाएं ही मेरे द्वारा चुनी गई हैं। यह सच है कि भले ही मेरा बचपन, मेरी शिक्षा, जीविका मेरे नियंत्रण में नहीं थी, फिर भी इन्होंने मुझे आकार दिया। जिंदगी का अनुभव यही बताता है कि जब हम खुद जागरूक होकर अपने जीवन के पन्नों को पलटते हैं, तभी हमें नई ऊर्जा और नई दिशाएं मिलती हैं।

डायना एथिल

सातवें दशक का पार हो जाना किसी तरह का अंतिम सत्र नहीं, बल्कि शुरुआत का नया अध्याय है। मेरे सत्तरवें जन्मदिन पर कोई बड़ा बदलाव नहीं आया, क्योंकि मैं उस पर ध्यान ही नहीं दे पाई थी। लेकिन मेरे 71वें जन्मदिन ने मुझे एक नया दृष्टिकोण दिया। मुझे एहसास हुआ कि उम्र के इस पड़ाव पर, यानी 'सत्तर के पार' होने पर, मुझे खुद से कुछ सवाल करने चाहिए। मुझे यह समझना चाहिए कि वृद्धावस्था का सामना करना सिर्फ शारीरिक बदलावों को स्वीकार करने का नहीं, बल्कि मानसिक और भावनात्मक जुड़ाव को बनाए रखने का भी नाम है। यह भी समझना चाहिए कि जीवन की चुनौतियों से न भागकर उनका सामना करना चाहिए।

मुड़-मुड़ के देख

वृद्धावस्था का मतलब यह नहीं कि हम खुद को किसी दायरे में समेट लें। यह एक मौका है खुद को फिर से चुनौती देने का, खुद से नए सवाल पूछने का और अपनी क्षमताओं को फिर से पहचानने का। समाज से जुड़े रहना, मानसिक व शारीरिक रूप से सक्रिय रहना और तनाव से निपटना, आदि-ये सब उम्र बढ़ने के साथ जरूरी हो जाते हैं। अपनी ऊर्जा को सृजनात्मक कार्यों में लगाना, चाहे वह चित्रकला हो या कुछ और, मन को भी ताजगी देता है। भले ही मेरे शुरुआती प्रयास कमजोर रहे हों और मैं एक बेहतर कलाकार नहीं बन पाई, लेकिन मैं हमेशा खुद को चुनौती देती रही।

अब, जो कुछ भी मैं देखती हूं, उसे पहले से कहीं बेहतर ढंग से समझ सकती हूं। भले ही हम बुजुर्ग हो जाएं, पर सच तो यह है कि वृद्धावस्था में भी अपने प्रयासों से हम जीवन में खुशी और संतुष्टि ला सकते हैं, और यही किसी भी जिंदगी का सबसे सुंदर तोहफा होता है।

दूसरी पारी

72 वर्षीय सेवानिवृत्त शिक्षक रामप्रसाद शर्मा को स्वास्थ्य बीमा होने के बावजूद इलाज के लिए पुश्तैनी जमीन बेचनी पड़ी। आपके साथ ऐसा न हो, इसके लिए कुछ बातों का ध्यान रखें।

ताकि मलाल न रहे

वृद्धावस्था में हेल्थ इंश्योरेंस पॉलिसी लेते वक्त किन बातों को ध्यान में रखना चाहिए? बता रहे हैं विशेषज्ञ...

72 वर्षीय सेवानिवृत्त शिक्षक रामप्रसाद शर्मा घर की रौनक थे। अचानक सीने में दर्द होने पर डॉक्टर ने हार्ट की नसें ब्लॉक बताईं और एंजियोप्लास्टी के लिए पांच लाख रुपये खर्च की बात कही। उनके पास स्वास्थ्य बीमा (हेल्थ इंश्योरेंस पॉलिसी) था, जिसे उन्होंने बुढ़ापे की ढाल समझा था। लेकिन क्लेम करते वक्त बीमा कंपनी ने पुरानी उच्च रक्तचाप की दवा को 'पहले से मौजूद बीमारी (पीईडी)' मानते हुए क्लेम रिजेक्ट कर दिया। इलाज के लिए उन्हें पुश्तैनी जमीन बेचनी पड़ी। यह कहानी उनके जैसे लाखों बुजुर्गों की है। बीमा कंपनियों की मनमानियों को रोकने व नियमों को सुधारने के लिए भारतीय बीमा विनियामक और विकास प्राधिकरण (इरडा) ने कई कदम उठाए हैं।

स्वास्थ्य बीमा में बदलाव : अप्रैल, 2024 में इरडा ने स्वास्थ्य बीमा खरीदने की ऊपरी आयु सीमा 65 वर्ष को खत्म कर दिया, जिससे अब हर कोई पॉलिसी ले सकता है। जनवरी, 2025 में इरडा ने तय किया कि बुजुर्गों की पॉलिसी के वार्षिक प्रीमियम में 10 फीसदी से अधिक वृद्धि के लिए मंजूरी जरूरी होगी, जो पहले 50-60 प्रतिशत तक थी। पीईडी के कवरेज के लिए प्रतीक्षा अवधि को भी 48 से घटाकर 36 महीने किया गया। जीएसटी को 18 फीसदी से घटाकर शून्य करने से भी बीमा सस्ता हुआ।

बीमा लेते वक्त बरतें सावधानी : स्वास्थ्य बीमा लेते वक्त डायबिटीज, हाइपरटेंशन जैसी पुरानी बीमारियों को छिपाना भारी पड़ सकता है। इन्हें इंश्योरेंस फॉर्म में

नहीं बताने पर कंपनियां इसे 'नॉन-डिस्क्लोजर (बीमारी को छिपाना)' मानकर पॉलिसी या क्लेम रद्द कर सकती हैं। कैटरेक्ट, हार्निया, जोड़ प्रत्यारोपण जैसे विशिष्ट रोगों और पहले से मौजूद बीमारियों के लिए प्रतीक्षा अवधि होती है, जिसमें अगर ऑपरेशन की जरूरत पड़ी, तो क्लेम नहीं मिलता। को-पेमेंट 10-20 फीसदी तक हो सकता है, यानी क्लेम का इतना हिस्सा आपको खुद देना पड़ता है। बुजुर्गों के मामले में यह 50 प्रतिशत तक हो सकता है। कई बार 3-5 लाख रुपये की पॉलिसी पर्याप्त नहीं होती, क्योंकि इलाज का खर्च (मेडिकल इन्फ्लेशन) सालाना 14 फीसदी की रफ्तार से बढ़ रहा है। उम्र के चलते बुजुर्गों के बार-बार अस्पताल जाने की आशंका ज्यादा रहती है। ऐसे में, कम कवरेज होने पर बड़ा इलाज वित्तीय संकट में डाल सकता है। साथ ही, कई एजेंट, सब कुछ कवर है, कहकर पॉलिसी बेच देते हैं, जबकि हर पॉलिसी में कुछ एक्सक्लूजन होते हैं, यानी ऐसे रोग, जो स्थायी रूप से कवर नहीं किए जाते। इसलिए पॉलिसी दस्तावेज पढ़कर ही हस्ताक्षर करें।

कितना हो बीमा कवर : पॉलिसीबाजार के स्वास्थ्य बीमा प्रमुख सिद्धार्थ सिंघल कहते हैं कि वरिष्ठ नागरिकों के पास कम से कम 50 लाख रुपये की स्वास्थ्य बीमा पॉलिसी होनी चाहिए। इलाज महंगा होने के साथ कवरेज बढ़ना आवश्यक है। छोटे शहरों में इलाज का खर्च कम होता है, लेकिन बार-बार अस्पताल में भर्ती होना पड़ सकता है। इसलिए इन शहरों के वरिष्ठ नागरिकों के पास 25 से 30 लाख का सम इंश्योर्ड होना जरूरी है।

कौन-सी पॉलिसी बेहतर

फैमिली फ्लोटर प्लान में सम इंश्योर्ड का इस्तेमाल पूरे परिवार के लिए होता है। वहीं, व्यक्तिगत स्वास्थ्य बीमा में पूरे कवरेज का उपयोग सिर्फ बीमित व्यक्ति कर सकता है। बुजुर्गों के लिए स्वास्थ्य से जुड़ी समस्याओं को देखते हुए व्यक्तिगत प्लान लेना ही बेहतर विकल्प है।

राइडर और ऐड-ऑन क्यों जरूरी

वरिष्ठ नागरिकों को वित्तीय बोझ को कम करने के लिए स्वास्थ्य बीमा के साथ 'राइडर या ऐड ऑन' शामिल करने चाहिए। बीमा में पहले से पीईडी को कवर करने वाले राइडर शामिल करें, ताकि मधुमेह, उच्च रक्तचाप जैसी बीमारियों के लिए पहले दिन से कवर मिले और प्रतीक्षा अवधि लंबी न हो। ओपीडी कवर भी जरूरी है। कंज्यूमेबल्स कवर लेना चाहिए, जिससे दस्ताने, कैथेटर, ड्रेसिंग जैसे सामान आदि का खर्च जेब से न हो।

सुपर टॉप-अप का विकल्प

सिंघल बताते हैं कि सुपर टॉप-अप कम प्रीमियम में ज्यादा कवरेज देता है और मौजूदा बेसिक स्वास्थ्य बीमा के ऊपर अतिरिक्त सुरक्षा प्रदान करता है। इसमें एक डिडक्टिबल राशि तय होती है। इलाज के खर्चे इससे ज्यादा हो जाने पर सुपर टॉप-अप उन्हें कवर करता है। उदाहरण के लिए, आपका सामान्य (बेसिक) स्वास्थ्य बीमा का कवर तीन लाख रुपये है। आपने तीन लाख के डिडक्टिबल के साथ 15 लाख रुपये के सुपर टॉप-अप प्लान लिया है। एक साल में दो बार अस्पताल में भर्ती होने पर कुल 12 लाख रुपये खर्च हो गए। बेसिक पॉलिसी तीन लाख रुपये देगी, बाकी नौ लाख रुपये की भरपाई सुपर टॉप-अप कवर करेगा।

वरिष्ठ नागरिकों के काम की संस्थाएं

- *हेरिटेज फाउंडेशन* वरिष्ठ नागरिकों की देखभाल और गहन प्रशिक्षण, परामर्श और होम हेल्थकेयर जैसी सेवाएं प्रदान करता है। यह कार्यशालाओं, सम्मेलनों और कार्यक्रमों के माध्यम से स्कूलों, कॉलेजों और सामुदायिक स्थलों में वरिष्ठ नागरिकों की चुनौतियों और योगदानों के बारे में जागरूकता बढ़ाने का काम करता है। अधिक जानकारी के लिए फाउंडेशन की आधिकारिक वेबसाइट heritagefoundationindia.in या ई-मेल info@heritagefoundation.org पर जाकर संपर्क कर सकते हैं।
- *गांधीभवन इंटरनेशनल ट्रस्ट* एक गैर-लाभकारी भारतीय संगठन है, जो बेसहारा वृद्धजनों को आश्रय, चिकित्सा और अन्य सहायता सेवाएं प्रदान करता है। बुजुर्गों के मानसिक और भावनात्मक स्वास्थ्य के लिए योग, ध्यान, और मनोरंजन जैसी गतिविधियां भी आयोजित की जाती हैं। यह संगठन फिजियोथेरेपी एवं मनोरोग सेवाएं भी प्रदान करता है। अधिक जानकारी के लिए इसकी आधिकारिक वेबसाइट gandhibhavan.org पर जाकर या info@gandhibhavan.org ई-मेल के जरिये ट्रस्ट से संपर्क कर सकते हैं।

Special arrangements by Amar Ujala

स्वत्वाधिकारी रामगोपाल इन्वेस्टमेन्ट्स प्रा.लि. के लिए मुद्रक, प्रकाशक समीर माहेश्वरी द्वारा नवभारत प्रेस, नवभारत भवन, प्रेस कॉम्पलेक्स, जी.ई.रोड, रायपुर से मुद्रित एवं प्रकाशित. प्रधान संपादक : समीर माहेश्वरी, संपादक : राजेश आर. जोशी* (पी.आर.बी. कानून के अनुसार संपूर्ण संपादकीय दायित्व के लिये जिम्मेदार)
■ रायपुर फोन : 0771-4343434, 2535555-66-77, ■ भुवनेश्वर : 0674-2380511/2380518 ■ बिलासपुर : 07752-230591, 407748, 224563 ■ वर्ष 66 ■ अंक 178 (रजि.नं. 13045/59 आरएनआई), पो. रजिस्टर्ड नं. छ.ग./रायपुर संभाग/61/2022-24 ■ भिलाई फोन : (0788) 2294181, 4030655

https://t.me/AllNewsPapersPaid1

राहत नहीं, सख्ती चाहिए... सुप्रीम कोर्ट ने पलटा अपना फैसला

विभिन्न परियोजनाओं को पर्यावरणीय मंजूरी के मामले में सुप्रीम कोर्ट ने अपने ही फैसले को पलट कर भले केंद्र और राज्य सरकारों को राहत दे दी हो, लेकिन इससे पर्यावरण को राहत नहीं मिलने वाली। क्लाइमेट चेंज के खतरों को देखते हुए अब कठोर निर्णयों की जरूरत है। शीर्ष अदालत के पास भविष्य के लिए नजीर पेश करने का मौका था। सुप्रीम कोर्ट का पहला आदेश 16 मई को आया था। इसके मुताबिक, लगभग 20 हजार करोड़ रुपये के उन प्रॉजेक्ट्स को ध्वस्त करने का आदेश दिया गया था, जिन्हें बनाने से पहले नियमों के मुताबिक पर्यावरणीय मंजूरी नहीं ली गई थी। इन्हें बाद में जुर्माना वसूलने के बाद क्लीयरेंस मिली। अब नए फैसले में सुप्रीम कोर्ट ने कहा है कि अगर मई का आदेश वापस नहीं लिया जाता तो इसके गंभीर परिणाम होंगे। तीन जजों की बेंच में शामिल चीफ जस्टिस बीआर गवई का सवाल बिल्कुल वाजिब है कि क्या ऐसी सभी परियोजनाओं को ध्वस्त कर देना और सरकारी खजाने से खर्च किए गए धन को कूड़ेदान में जाने देना जनहित में होगा? लेकिन, यह सवाल भी उठता है कि सार्वजनिक हित के नाम पर सार्वजनिक हित को नुकसान पहुंचाने वाले कामों में कब तक ढील दी जाएगी। इन परियोजनाओं को गिराने से एक बार नुकसान होता। लेकिन इनकी वजह से पर्यावरण को जो क्षति पहुंची, उसका असर शायद कभी कम न किया जा सके। विकास परियोजनाओं के नाम पर प्रकृति से होने वाली छेड़छाड़ का दुष्परिणाम आर्थिक नुकसान से ज्यादा गंभीर है। देश के हिमालयी राज्य इसका उदाहरण है, जहां इस साल आपदाओं की बारिश हुई या फिर राजधानी दिल्ली और दूसरे महानगर जिनमें सांस लेना लगातार दूभर होता जा रहा है। इसके बाद भी सरकारें और जिम्मेदार संस्थाएं सबक नहीं ले रहीं। ग्रेट निकोबार आईलैंड प्रॉजेक्ट जैसी योजनाएं पर्यावरणविदों को गंभीर चिंता में डालने वाली है। आदर्श रूप से 33 प्रतिशत भूभाग पर वन या हरियाली होनी चाहिए, लेकिन है लगभग 25 प्रतिशत। ग्लोबल फॉरेस्ट वॉच के मुताबिक, 2001 से लेकर अभी तक भारत में 20 लाख हेक्टेयर से ज्यादा हरा-भरा क्षेत्र खत्म हो चुका है, हालांकि इस दौरान पौधारोपण भी खूब हुआ। सुप्रीम कोर्ट के फैसले वाले दिन ही क्लाइमेट चेंज परफॉर्मेंस इंडेक्स भी जारी हुआ और इसमें भारत 13 स्थान फिसलकर 23वें पर पहुंच गया है। इसका सीधा मतलब है कि देश की पर्यावरणीय नीति असर नहीं दिखा रही। ऐसे वक्त में राहत कानून तोड़ने वालों को नहीं, पर्यावरण को चाहिए।

मतदाता की जागरूकता से ही निरंकुशता पर अंकुश

विश्वनाथ सचदेव
लेखक वरिष्ठ पत्रकार हैं।

बिहार का चुनाव भी हो गया। परिणाम कुल मिलाकर अप्रत्याशित तो रहे पर इतने अप्रत्याशित नहीं कि उन पर हैरान ही हुआ जाये। चुनाव प्रचार के दौरान जिस तरह के हालात बनते दिख रहे थे, उनमें कहीं न कहीं यह तो लगने लगा था कि भाजपा के नेतृत्व वाले एनडीए को जीत मिल सकती है पर इतनी बड़ी जीत होगी, ऐसा नहीं लग रहा था। इस बात को यूं भी कहा जा सकता है कि महागठबंधन की इतनी बुरी हार होगी, ऐसा भी नहीं लग रहा था। पर ऐसा हुआ। भारतीय जनता पार्टी की ऐसी जीत और राजद की ऐसी हार अप्रत्याशित तो थी, पर यह भी समझना जरूरी है कि यह स्थिति चिंताजनक भी है। सत्तारूढ़ पक्ष या विपक्ष के लिए नहीं, देश में जनतंत्र के भविष्य के लिए यह स्थिति चिंताजनक है।

हमारी जनतांत्रिक व्यवस्था में मजबूत सरकार का होना कतई चिंता की बात नहीं है, पर विपक्ष का इतना कमजोर हो जाना निश्चित रूप से चिंता की बात होनी चाहिए। यह पहली बार नहीं है कि किसी विधानसभा में, या फिर संसद में भी, असंतुलित परिणाम आये हैंझ्रइतने असंतुलित परिणाम कहना चाहिए इसे! और यह ह्यइतनेह्ल शब्द यहां चिंता की बात को प्रकट करता है। ऐसी जीत जीतने वाले को अति विश्वास से भर देती है और यह अति विश्वास उसे, कुछ भी कर सकता हूं, का अहसास दिलाने वाला होता है। अच्छा और मजबूत होने का अहसास गलत नहीं है, पर यह मजबूती यदि घमंड में बदल जाती है तो इसे सही नहीं कहा जा सकता। सही नहीं होने का यह खतरा आज हमारे जनतंत्र पर मंडरा रहा है।

ऐसा नहीं है कि ऐसी स्थितियां पहले कभी नहीं बनीं। राज्यों में भी ऐसा हो चुका है, और केंद्र में भी। इंदिरा गांधी की हत्या के बाद जब चुनाव हुए थे तो राजीव गांधी के नेतृत्व में कांग्रेस को लोकसभा में चार सौ से अधिक सीटें मिली थीं। अति घमंड की स्थिति बन सकती थी। पर तब कांग्रेस को यह अहसास था कि उसे सहानुभूति की लहर का लाभ मिला है। पर अब बिहार में भाजपा की जीत के मामले में ऐसी बात नहीं है। उसके पक्ष में कोई ह्यसहानुभूति लहरह्ल नहीं थी। भाजपा और ह्यजदयूह्ल की जीत तथा कांग्रेस और राजद की हार के कारणों पर विचार होगा और भविष्य में भी होता रहेगा। पर इस बात पर विचार होना जरूरी है कि इस तरह के अप्रत्याशित परिणाम चिंता का कारण भी होने चाहिए। कोई जीत इतनी बड़ी नहीं होनी चाहिए कि जीतने वाला स्वयं को अपराजेय समझने लगे और कोई भी हार इतनी बुरी नहीं होनी चाहिए कि हारने वाले को यह लगने लगे कि अब कोई उम्मीद नहीं बची।

बहरहाल, बिहार के इन चुनाव- परिणामों पर दो दृष्टियों से विचार होना चाहिएझ्रपहले तो इस दृष्टि से कि क्या जीतने वाला अपनी श्रेष्ठता के कारणों से ही जीता है और दूसरी यह कि हारने वाला कहां चूक गया। भाजपा की जीत पर उंगली उठाने वालों का मानना है कि चुनाव में ऊंच-नीच हुई है। यह सवाल चुनाव आयोग पर भी है। उस पर आरोप लग रहा है कि उसने प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष, दोनों, से भाजपा की जीत में मदद की है। इस तरह के आरोप मतदान से पहले भी लगते रहे थे, अब भी लग रहे हैं। ऐसी ही किसी मदद से इनकार के अलावा और कोई ठोस प्रमाण चुनाव आयोग ने नहीं दिया। चुनाव आयोग से यह अपेक्षा और उम्मीद की जा रही है कि वह यह बतायेगा कि भाजपा की बिहार सरकार को एक करोड़ 10 लाख महिला मतदाताओं को चुनाव से ठीक पहले दस-दस हजार रुपये नकद सहायता देने से रोका क्यों नहीं गया? पहले भी सरकारें नकद रेवड़ियां बांटती रही हैं। महाराष्ट्र के पिछले चुनाव में भी ह्यलाड़ली बहिना को नकद सहायता देने के आरोप लगे थे।

तब आरोप यह भी था कि भाजपा को मदद पहुंचाने के लिए चुनाव आयोग ने तब हरियाणा और महाराष्ट्र में चुनाव एक साथ नहीं कराये थे, जबकि पिछले 15 सालों से इन दोनों राज्यों में चुनाव साथ-साथ होते आये हैं। चुनाव आयोग पर आरोप लगा था कि महाराष्ट्र में चुनाव तीन-चार महीने टालकर उसने महाराष्ट्र की तत्कालीन सरकार को रेवड़ियां बांटने का पर्याप्त समय दिया था। आयोग ने इस आरोप का कोई विश्वसनीय उत्तर नहीं दिया था। जहां तक बिहार में हारने वाले की चूक का सवाल है, इस बात के कई उदाहरण दिये जा सकते हैं कि कांग्रेस और राजद दोनों ने वह ताकत नहीं लगायी जो जीतने के लिए जरूरी होती है। सीटों के बंटवारे और उम्मीदवारों के चयन में दोनों ने एक तरह से अत्यधिक देरी की थी। नीतीश कुमार पर व्यक्तिगत आरोप लगाने की नीति भी गलत सिद्ध हुई। उधर कांग्रेस के नेता राहुल गांधी का चुनावों को हल्के में लेने का रवैया भी कुल मिलाकर आत्मघाती ही सिद्ध हुआ। महागठबंधन के साथी सहयोगियों को अपनी कमजोरी और गलतियों पर गंभीरता से विचार करना होगा।

पर गंभीरता से विचार करने का एक मुद्दा और भी है, और उसका सीधा रिश्ता हमारे जनतंत्र के भविष्य से है। बिहार विधानसभा में 200 से अधिक सीटों पर भाजपा और उसके सहयोगियों के जीतने का एक अर्थ सत्तारूढ़ पक्ष का जरूरत से ज्यादा ताकतवर होना भी है। ऐसी जीत की उम्मीद तो भाजपा को भी नहीं थी। पार्टी के चाणक्य कहे जाने वाले अमित शाह ने भी मतगणना के पूर्व अधिकतम 160 सीटें जीतने की बात कही थीझ्र अर्थात उन्हें भी उम्मीद नहीं थी कि इतनी अधिक सीटें मिल सकती हैं। कारण कुछ भी रहे हों, चुनाव परिणामों ने भाजपा को अति विश्वास की सीमा तक तो पहुंचा ही दिया है।

बात सिर्फ अति विश्वास तक ही सीमित नहीं है। ऐसी स्थिति के दो परिणाम हो सकते हैं- पहला तो यह कि ऐसी जीत वाले दल या नेता को यह लगने लगता है कि अब उसे कोई नहीं हरा सकता और दूसरा यह कि ऐसी जीत वाले नेता को अपने भूतो न भविष्यति होने का भ्रम होने लगता है। जनतंत्र की दृष्टि से यह दोनों परिणाम खतरनाक हैं। जनतंत्र का मतलब किसी नेता या दल का नहीं, जनता का शासन होता है। ऐसे में यदि किसी नेता को यह लगने लगे कि वह सर्वशक्तिमान है, अजेय है, तो यह उस मतदाता का घोर अपमान है, जो अपना नेता चुनता है। यह व्यक्ति वस्तुतः नेता नहीं होता, मतदाता का प्रतिनिधि होता है, जनता की ओर से चुना गया जनतंत्र का सेवक, जो जनता के लिए काम करता है।

जनतंत्र को जनता की, जनता द्वारा और जनता के लिए सरकार कहा जाता है। यदि किसी नेता को यह भ्रम होने लगे कि वह सेवक नहीं, मालिक है तो यह एक तरह से जनतंत्र को नकारना ही होगा। ऐसा व्यक्ति बड़ी आसानी से निरंकुश हो सकता है, और यह स्थिति किसी भी दृष्टि से स्वीकार्य नहीं है, स्वीकार्य नहीं होनी चाहिए। ऐसे व्यक्ति पर जनता का अंकुश जरूरी है, और ऐसा व्यक्ति कभी भी अंकुश स्वीकार करना नहीं चाहेगा!

इसलिए जनतंत्र में विपक्ष का मजबूत होना जरूरी माना जाता है। देश के पहले प्रधानमंत्री जवाहरलाल नेहरू के समय में एक बार संसद में विपक्ष बहुत कमजोर हो गया था। तब उन्होंने सदन में कांग्रेसी सदस्यों से कहा था कि वे सरकार के कामकाज पर निगाह रखें, ताकि सरकार या प्रधानमंत्री निरंकुश न हो जाये।

यह निरंकुशता चुनावी तानाशाही तक ले जा सकती है। आज दुनिया के कई देशों में यह प्रवृत्ति पनप रही है। जनतांत्रिक मूल्यों-आदर्शों का तकाजा है कि इस प्रवृत्ति को रोका जाये। बिहार के चुनाव-परिणामों को इस दृष्टि से भी देखा जाना जरूरी है। बात सिर्फ चुनाव में ऊंच-नीच के आरोपों तक ही सीमित नहीं है। इसकी जांच तो होनी ही चाहिए, पर जागरूक इस बात के लिए भी रहना होगा कि कोई राजनेता या राजनीतिक दल स्वयं को अपराजेय न समझने लगे। जरूरत यह समझने की भी है कि चुनाव परिणाम से चुनाव आयोग अथवा कोई भी पक्ष आरोपमुक्त नहीं हो जाता। इसलिए बात फिर मतदाता की जागरूकता पर आकर टिकती है। सतत जागरूकता पर।

कॉप-30 के सवाल : ये पर्यावरणीय न्याय की राह तो नहीं

वीरेन्द्र कुमार पेनुली
लेखक पर्यावरण वैज्ञानिक व सामाजिक कार्यकर्ता हैं।

यूरोपीय यूनियन तो उन आयातों पर भी कार्बन टैक्स लगाने का सोच रही है, जिनके निर्माण में थ्रेशहोल्ड वैल्यू से ज्यादा उत्सर्जन होता है। ऐसे में मजबूरन ही सही, विभिन्न देश अपने-अपने देशों में जीवाश्म ईंधनों के उपभोग, उपयोग और उत्पादन पर कड़े से कड़े नियम लागू कर रहे हैं। इनके अंतर्गत प्रतिष्ठानों, उद्यमों या सेवा क्षेत्र के प्रदाताओं को विभिन्न गतिविधियों के संचालन को जारी रखने के लिए या तो साफ ऊर्जा स्त्रोतों का विकल्प चुनना है, अथवा टेक्नोलॉजी और गतिविधिक पद्धतियों से उत्पादनों को शून्य कार्बन डाइऑक्साइड उत्सर्जन से बनाना है। अक्टूबर, 2023 में विश्व की 130 प्रमुख कंपनियों ने, जिनमें महेन्द्रा ग्रुप, नेशनल वोल्वो कार जैसी कंपनियां शामिल हैं, जिनका वैश्विक वार्षिक राजस्व करीब एक खरब अमेरिकी डॉलर था, वैश्विक नेताओं से कहा है कि अगले समिट में वे फॉसिल फ्यूल फेज-आउट के लिए प्रतिबद्धता व्यक्त करें। धनी अर्थव्यवस्था वाले देशों के लिए 2035 तक सौ प्रतिशत डिकाबोर्नाइज्ड सिस्टम और इसे 2040 तक प्राप्त करने के लिए गरीब देशों को आवश्यक पूरी वित्तीय सहायता दी जाए।

बेलेम, ब्राजील में आयोजित कॉप-30 सम्मेलन को जलवायु संकट पर वैश्विक कोष से आर्थिक मदद देने और कॉप-27 के निर्णयों को ईमानदारी से लागू करवाने वाले संयुक्त राष्ट्र जलवायु परिवर्तन शिखर सम्मेलन के रूप में प्रचारित किया गया। यदि सच में ऐसा है, तो यह आगे बढ़ सकेगा जब जलवायु न्याय की धारणा प्रबल हो। यह स्वीकारा जाए कि जिस दर से जलवायु बदलाव के आघात बढ़ रहे हैं, जिस दर से पृथ्वी गर्म हो रही है, अनुकूलन की प्रक्रिया उस हिसाब से पिछड़ती जा रही है।

शरम अल शेख में आयोजित कॉप-27 सम्मेलन में खेमों में बंटे देशों में व्यवहार में कटुता देख संयुक्त राष्ट्र महासचिव एंटोनियो गुटेरस को तो यहां तक कहना पड़ा था कि उत्तर और दक्षिण तथा विकसित और विकासशील अर्थव्यवस्थाओं के लिए एक-दूसरे पर आरोप लगाने का यह उपयुक्त समय नहीं है। उनका कहना था कि हम उन देशों को पर्यावरण न्याय से वंचित नहीं कर सकते हैं, जिनकी जलवायु आपदा लाने में कोई भूमिका नहीं रही है। उनका आशय सबसे कम विकसित और द्वीपीय देशों से भी था, जिनका जलवायु आपदा उत्पन्न करने में सबसे कम अंश है, किंतु जो जलवायु आपदा की मार सबसे ज्यादा झेलते हैं।

अंततः कॉप के इतिहास में कॉप-27 ऐसा पहला सम्मेलन बन गया था, जिसमें भारी दबावों के बीच धनी देशों ने आर्थिक और सामाजिक संरचनाओं को होने वाले नुकसान की भरपाई के लिए कार्बन प्रदूषण से पीड़ित गरीब देशों को एक मुआवजा कोष की मांग मानी थी। कॉप-27 में जलवायु जोखिम संभावित संकट-उन्मुख देशों ने तो कोष स्वीकृति पर दबाव बनाने के लिए यह धमकी भी दे डाली थी कि जब तक इस पर निर्णय नहीं होगा, वे वापस नहीं जाएंगे। आज वैज्ञानिक सुझा रहे हैं कि तेल भंडारों में बचे तेल को भी वहीं रहने दीजिए। परंतु हो उलटा रहा है। आसमान में जो ऐतिहासिक कार्बन उत्सर्जन जमा है, उसका 90 प्रतिशत पश्चिमी देशों और जापान का है। तेल ही नहीं, कोयले को भी तेजी से ज्यादा मात्रा में बाहर निकाला जा रहा है। देश अपनी बढ़ी जरूरतों के लिए अपने कोयले के आयातों को बढ़ा रहे हैं। हालात ये हैं कि कोयले तक की मांग बढ़ रही है। भारत भी उनमें से एक है। ऐसे में अब एक्टिविस्ट उन बंदरगाहों और यार्डों पर प्रदर्शन कर रहे हैं, जहां से निर्यात का कोयला भेजा जा रहा है। भारत समेत विश्व के कई देशों ने शून्य कार्बन उत्सर्जन प्राप्त करने के प्रयास भी जारी रखे हैं। किंतु साफ ऊर्जा का उत्पादन इतना नहीं हो रहा है कि वह विभिन्न देशों और विभिन्न क्षेत्रों की सारी जरूरतों को पूरी तरह किफायती तौर पर पूरा कर सके। जितना साफ ऊर्जा का उत्पादन बढ़ता है, तब तक उससे ज्यादा ही विभिन्न कार्यों और क्षेत्रों के लिए ऊर्जा की जरूरतें भी बढ़ जाती हैं। इसका एक उदाहरण चीन भी है।

यूरोपीय यूनियन तो उन आयातों पर भी कार्बन टैक्स लगाने का सोच रही है, जिनके निर्माण में थ्रेशहोल्ड वैल्यू से ज्यादा उत्सर्जन होता है। ऐसे में मजबूरन ही सही, विभिन्न देश अपने-अपने देशों में जीवाश्म ईंधनों के उपभोग, उपयोग और उत्पादन पर कड़े से कड़े नियम लागू कर रहे हैं। इनके अंतर्गत प्रतिष्ठानों, उद्यमों या सेवा क्षेत्र के प्रदाताओं को विभिन्न गतिविधियों के संचालन को जारी रखने के लिए या तो साफ ऊर्जा स्त्रोतों का विकल्प चुनना है, अथवा टेक्नोलॉजी और गतिविधिक पद्धतियों से उत्पादनों को शून्य कार्बन डाइऑक्साइड उत्सर्जन से बनाना है। अक्टूबर, 2023 में विश्व की 130 प्रमुख कंपनियों ने, जिनमें महेन्द्रा ग्रुप, नेशनल वोल्वो कार जैसी कंपनियां शामिल हैं, जिनका वैश्विक वार्षिक राजस्व करीब एक खरब अमेरिकी डॉलर था, वैश्विक नेताओं से कहा है कि अगले समिट में वे फॉसिल फ्यूल फेज-आउट के लिए प्रतिबद्धता व्यक्त करें। धनी अर्थव्यवस्था वाले देशों के लिए 2035 तक सौ प्रतिशत डिकाबोर्नाइज्ड सिस्टम और इसे 2040 तक प्राप्त करने के लिए गरीब देशों को आवश्यक पूरी वित्तीय सहायता दी जाए।

कॉप-28 के चीफ, यूएई के सुल्तान अल जबर ने अप्रैल, 2023 के एक सम्मेलन में यह कहा था कि तेल साफ ऊर्जा बदलाव में महत्वपूर्ण रहेगा। हमें पेट्रोल या फॉसिल फ्यूल फेज-आउट के बजाय इनके द्वारा पैदा होने वाले इमिशन फेज-आउट की जरूरत है। उनका कहना था कि सोलर और पवन ऊर्जा ज्यादा कुछ नहीं कर सकती हैं, बदलाव रोकने में खासकर स्टील, सीमेंट और एल्यूमीनियम उद्योगों में उत्सर्जन कम करने में मुश्किलें आ रही हैं। कुछ उद्योग हैं, जो कार्बन-इंटेन्सिव हैं। यदि देश इन उद्योगों की अपनी उन इकाइयों पर प्रतिबंध लगाएंगे तो इसका विकास पर प्रतिकूल असर पड़ेगा। जिससे आवश्यक उत्पादों में कमी और प्रतिबंधात्मक उपायों से उनके नागरिकों की आजीविका और जीवन गुणवत्ता पर प्रतिकूल असर पड़ेगा।

घोर जलवायु संकट से लड़ने के लिए 2050 तक कार्बन न्यूट्रल दुनिया की आवश्यकता का संदेश यूएन के महासचिव ने 2019 में कॉप-25 में ही दे दिया था। भारत समेत विश्व के कई देशों ने शून्य कार्बन उत्सर्जन प्राप्त करने के प्रयास भी जारी रखे हैं। किंतु पेट्रोल और कोयले का उपयोग छोड़िए, धरती के कोख से इनको निकालने की भी तेजी कम नहीं होने वाली है।

फॉसिल फ्यूल्स फेज-आउट की जगह इमिशन फेज-आउट की वकालत हुई, तो गरीब देश कहां जाएंगे? व्यापार पर भी असर पड़ेगा। एक तरफ लॉस एंड डैमेज फंड से कुछ नहीं मिला, ऊपर जलवायु परिवर्तन का दंश भी झेल रहे हैं। कुछ का तो अस्तित्व ही दांव पर है। उनकी समस्या इस हद तक है कि सागर में डूबते अपने नागरिकों को कहां बसाएं।

https://t.me/AllNewsPapersPaid

संपादकीय

अमृतवर्षा संपादकीय

शाह का प्रण पूरा होगा?

श्री अमित शाह स्वतन्त्र भारत के ऐसे पहले गृहमन्त्री हैं जिन्होंने देश से नक्सलवाद और माओवादी हिंसा को समाप्त करने का लक्ष्य रखा और उसे समय से पूरा करने की रणनीति तैयार की। उन्होंने नक्सलवादियों से बातचीत का रास्ता नहीं चुना बल्कि उनके द्वारा आत्मसमर्पण करने को अपना अभीष्ट बनाया। श्री शाह बहुत सख्त गृहमन्त्री माने जाते हैं क्योंकि हिंसा के मामले में उनका दृष्टिकोण स्पष्ट रूप से नक्सलियों द्वारा आत्मसमर्पण का है। श्री शाह ने देशवासियों को आश्वासन दिया है अगले वर्ष अप्रैल महीने तक नक्सलवाद जड़ से समाप्त हो जायेगा। अपने इसी प्रण को पूरा करने की दिशा में उन्होंने नक्सलवादियों को चुनौती दी कि उनके किसी भी बड़े से बड़े सरगना को छोड़ा नहीं जायेगा। इस सिलसिले में कल ही सुरक्षा बलों ने आन्ध्र प्रदेश के जंगलों में एक करोड़ के इनामी दुर्दान्त माओवादी कमांडर माडवी हिडमा को मार गिराया और उसके साथ अन्य पांच नक्सलियों को भी मौत के घाट उतार दिया। हिडमा को छत्तीसगढ़ का आंतक भी कहा जाता था। उसे मार गिरा कर सुरक्षा बलों ने अपने नक्सली हिंसा को समाप्त करने के अभियान को निर्णायक सफलता की ओर बढ़ा दिया है। ऐसा माना जा रहा है कि श्री शाह के दृढ़ रुख को देखते हुए देशभर से नक्सलियों व माओवादियों का सफाया निश्चित प्रायः है। श्री शाह को जहां एक तरफ भाजपा का चाणक्य कहा जाता है वहीं दूसरी ओर उन्हें अपना वचन हर कीमत पर रखने वाले नेता के रूप में भी देखा जाता है। श्री शाह ने बहुत पहले ही यह घोषणा कर दी थी कि आगामी वर्ष के अप्रैल महीने तक नक्सली आतंकवाद को जड़ से समाप्त कर दिया जायेगा। इसी क्रम में श्री शाह ने सुरक्षा बलों को लक्ष्य दिया था कि वे 30 नवम्बर तक दुर्दान्त माओवादी माडवी हिडमा को जिन्दा या मुर्दा पकड़ें। सुरक्षा बलों ने 18 नवम्बर को ही हिडमा का खात्मा करके साफ कर दिया है कि आगामी 30 नवम्बर तक वे अन्य नक्सलियों को पकड़ने में सफलता प्राप्त कर सकते हैं। हिडमा इतना खूंखार था कि वह नक्सलियों द्वारा सुरक्षा बलों पर किये गये 26 हमलों में शामिल था। उसकी पत्नी राजे भी उसके कारनामों में शामिल रहती थी। मगर पुलिस व अन्य केन्द्रीय सुरक्षा बलों ने जो माओवादियों व नक्सलियों को समाप्त करने का अभियान छेड़ रखा है उसे देखते हुए कहा जा सकता है श्री शाह का देशवासियों को दिया गया आश्वासन पक्के तौर पर पूरा होगा। हिडमा के मारे जाने से छत्तीसगढ़ के जंगल ज्यादा सुरक्षित हो सकेंगे। दरअसल नक्सलवाद भारत के भीतर ऐसी समस्या है जिसका निदान केवल हिंसा के रास्ते को छोड़ देना ही है। दरअसल नक्लवाद एक ऐसी मानसिकता है जो भारतीय संविधान को नहीं मानती और अपना ही शासन चलाये रखने की बात करती है और बखान करती है कि सत्ता बन्दूक की नली से पैदा होती है न कि चुनावों से। पिछली मनमोहन सरकार के दौर में यह समस्या अपने उग्र रूप में थी। छत्तीसगढ़ में नक्सली सबसे ज्यादा प्रभावी थे। अतः इस राज्य के बस्तर व सुकमा जिले घोषित रूप से नक्सली हिंसा के शिकार थे। नक्सलवाद पर संसद में भी गंभीर चर्चा कई बार हुई है। संसद का शीतकालीन सत्र दिसंबर महीने के पहले हफ्ते से ही शुरू हो रहा है। अतः संसद में नक्सलवाद के मुद्दे पर भी गहन चर्चा होनी चाहिए। संसद में हुई बहस का बहुत महत्व होता है। मनमोहन सरकार के कार्यकाल के दौरान नक्सलियों की हिंसा चरम पर थी जिसमें नक्सली पुलिस व सुरक्षा बलों के जवानों की सामूहिक तौर पर हत्याएं किया करते थे। नक्सली हिंसा की वजह से ही छत्तीसगढ़ का विकास बहुत धीमा रहा है। मगर जब से श्री शाह ने गृह मन्त्रालय संभाला है तब से लेकर आज तक नक्सलियों की कार्रवाइयां श्री शाह के निशाने पर रही हैं। भारत के लोकतन्त्र में गृह मन्त्रालय को विशेष दर्जा प्राप्त होता है क्योंकि यही मन्त्रालय राज्यों में कानून-व्यवस्था की समीक्षा करता रहता है। मगर नक्सली सबसे पहले कानून व्यवस्था का राज ही समाप्त करते हैं अतः लोकतन्त्र की सफलता के लिए जरूरी है कि इसके चारों खम्भे (विधायिका, कार्य पालिका न्यायपालिका व चुनाव आयोग) स्वाभिमान से भरे रहें और संविधान के अनुसार काम करें। माओवादी हिडमा की मौत से किसी भी सुधारात्मक कदम को वापस लेने का सवाल ही नहीं उठता क्योंकि भारत की विविधता बताती है कि सरकारें लोक कल्याण मूलक हों। सरकार की नजर में हर भारतीय नागरिक होता है और उसे संविधान के अनुसार अधिकार व कर्त्तव्य भी मिले होते हैं लेकिन नक्सलपंथियों ने छत्तीसगढ़ के कुछ इलाकों को जिस विकास से दूर रखा है उन्हें अब त्वरित रूप से पूरा करने का समय आ गया है। बेशक अप्रैल आने में अब चार महीने का समय ही बचा है परन्तु हिडमा की मौत से यह तय हो गया है कि भारत में संविधान को चुनौती देने वाली ताकतों को कोई भी सरकार बर्दाश्त नहीं करेगी। हिडमा जब 10 वर्ष का था तभी से नक्सलवाद के विचारों में वह रम गया था। वह हिंसा को ही सामाजिक-राजनीतिक बदलाव का जरिया मानता था। जबकि गृहमन्त्री ने संसद से लेकर सड़क तक देश की जनता को यह बताने की कोशिश की है कि भारत में अहिंसा का मतलब कमजोरी नहीं होता, बल्कि कमजोर को ऊपर उठाने से होता है। हिडमा की पुलिस मुठभेड़ में हुई मौत इस बात की गवाह है कि संविधान को न मानने वाले लोगों को उनकी ही भाषा में जवाब देना भारत की सरकार को आता है।

संस्थापक संपादकः स्व. पारसनाथ तिवारी
स्वत्वाधिकारी एवं प्रकाशक रीता तिवारी,मुद्रक कुंज बिहारी के द्वारा आर डी प्रिंटर्स एंड पब्लिशर्स प्रा. लि., प्लॉट नं- सी 16-17 पाटलिपुत्र इंडस्ट्रियल एरिया, पटना-800013 से मुद्रित व B-14 जगत भवानी अपार्टमेंट, एसपी सिन्हा लेन, बोरिंग कैनाल रोड, पटना-1 से प्रकाशित
संपादक-बन बिहारी
दूरभाष - 9905463571, 8757425017, धनबाद कार्यालयः मास्टर पाड़ा जे.सी. मल्लिक रोड, हीरापुर, धनबाद दूरभाष - 2204991, दिल्ली कार्यालयः बी-49, जैन मंदिर गली, शकरपुर मेन मार्केट, दिल्ली-110092, फोन नं.- 011-22055208, आर.एन.आई नं. 44420/87
ईमेलः amritvarshanews2015@gmail.com

नक्सलवाद पर बड़ा प्रहार एक नई सुबह की आहट

आतंकवाद की तरह ही नक्सलवाद भारत की आंतरिक सुरक्षा के लिए एक दीर्घकालिक, गहरी और जटिल चुनौती रहा है। जिस तरह सीमा पार से आने वाला आतंकवाद देश की शांति, विकास और सामाजिक सद्भाव के लिए खतरा बना हुआ था, उसी तरह भीतर से जन्मा नक्सलवाद राष्ट्र-निर्माण की प्रक्रिया को बाधित करता रहा।

ललित गर्ग

नक्सलवाद अपने अंतिम दौर में है और यह बड़ी उपलब्धि एवं परिवर्तन आकस्मिक नहीं, बल्कि प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी और केंद्रीय गृहमंत्री अमित शाह की सुनियोजित, कठोर और व्यापक रणनीतियों का परिणाम है। वर्षों से जिस समस्या ने भारत के हृदयस्थल को रक्तरंजित किया था, जिस विचारधारा ने दशकों तक विकास, सुरक्षा और मानवीय संवेदनाओं को बंधक बनाए रखा था, वह अब लगभग समाप्ति की कगार पर पहुँच चुकी है। इसका सबसे बड़ा और हालिया प्रमाण है देश के सबसे खतरनाक, खूंखार और रणनीतिक रूप से अत्यंत महत्वपूर्ण माओवादी कमांडर माड़वी हिड़मा का खात्मा, एक ऐसा नाम जिसके आतंक ने न सिर्फ सुरक्षा बलों बल्कि पूरे तंत्र को लंबे समय तक चुनौती दी। सुकमा क्षेत्र में जन्मा हिड़मा, सीपीआई (माओवादी) की केंद्रीय समिति का सदस्य था और पीपल्स लिबरेशन गुरिल्ला आर्मी की बटालियन-1 का प्रमुख। उसकी मौजूदगी मात्र से बड़े-बड़े हमले अंजाम दिए जाते थे। 2010 का दंतेवाड़ा हो या फिर 2013 का झीरम घाटी हमला, पिछले 20 बरसों में हुए लगभग सभी बड़े नक्सली हमलों के पीछे हिडमा का हाथ माना जाता है। उसने लंबे अरसे तक दंडकारण्य में आतंक का राज कायम रखा। दरभा घाटी नरसंहार तक, सुरक्षा बलों के कई घातक ऑपरेशनों का गुनाहगार हिड़मा रहा। उसकी धमक इतनी थी कि उसके सिर पर 50 लाख से लेकर एक करोड़ रुपये तक का इनाम घोषित था। लेकिन 18 नवंबर 2025 को सुरक्षा बलों के एक अत्यंत सटीक और साहसपूर्ण अभियान में हिड़मा और उसकी पत्नी राजे सहित छह माओवादी ढेर हुए। मौके से मिली एके-47, पिस्टल, राइफलें और अन्य हथियार यह प्रमाणित करते हैं कि यह ऑपरेशन नक्सलवाद की रीढ़ पर निर्णायक प्रहार है। हिड़मा का अंत प्रतीकात्मक ही नहीं, बल्कि रणनीतिक रूप से भी एक ऐसा क्षण है जिसने नक्सली नेटवर्क को हिला कर रख दिया है। लंबे समय से लाल गलियारा कहे जाने वाले क्षेत्र की गतिविधियाँ जिस तेजी से सिकुड़ रही हैं, वह दशार्ता है कि केंद्र सरकार ने सुरक्षा और विकास दोनों मोर्चों पर जिस दोहरी रणनीति को अपनाया है, उसने वास्तविक जमीन पर असर दिखाया है। मार्च 2026 तक नक्सलमुक्त भारत अभियान के अंतर्गत इस साल 300 नक्सली मारे गए, सैकड़ों गिरफ्तार हुए और आत्मसमर्पण किया-यह आँकड़े बताते हैं कि नक्सलवाद अब अपनी वैचारिक और संगठनात्मक शक्ति खो चुका है। हाल ही में छत्तीसगढ़ और महाराष्ट्र में दो दिनों में सैकडों नक्सलियों का आत्मसमर्पण होना यह दशार्ता है कि नक्सल संगठन अब अपने आधार क्षेत्रों में भी समर्थन खो रहा है, और आदिवासी समाज धीरे-धीरे सरकारी विकास योजनाओं की ओर बढ़ रहा है। इसी परिवर्तन का सबसे बड़ा उदाहरण है हिड़मा का खात्मा, जिसने माओवादी कमान में एक ऐसा शून्य पैदा कर दिया है, जिसकी भरपाई उनके लिए आसान नहीं होगी। आतंकवाद की तरह ही नक्सलवाद भारत की आंतरिक सुरक्षा के लिए एक दीर्घकालिक, गहरी और जटिल चुनौती रहा है। जिस तरह सीमा पार से आने वाला आतंकवाद देश की शांति, विकास और सामाजिक सद्भाव के लिए खतरा बना हुआ था, उसी तरह भीतर से जन्मा नक्सलवाद राष्ट्र-निर्माण की प्रक्रिया को बाधित करता रहा। दशकों तक यह समस्या न सिर्फ कुछ राज्यों के लिए, बल्कि पूरे भारत के लिए चिंता और असुरक्षा का कारण रही। लेकिन अब जिस निर्णायक मोड़ पर देश खड़ा है, वह यह संकेत देता है कि नक्सलवाद अपने अंतिम चरण में है।

हाल के वर्षों में लगातार मिल रही सफलताएँ, शीर्ष नक्सली कमांडरों का सफाया, व्यापक आत्मसमर्पण, और प्रभावित क्षेत्रों में तेज विकास-ये सभी इस तथ्य को सिद्ध करते हैं कि देश एक नई सुबह की ओर बढ़ रहा है। यह वह सुबह है जो भारत को भय, हिंसा और पिछड़ेपन से मुक्त कर, स्थायी शांति और तेज विकास की ओर ले जाती है। नक्सलवाद की जड़ें स्वतंत्रता के बाद की सामाजिक-आर्थिक असमानताओं, भूमि अधिकारों और आदिवासी इलाकों की उपेक्षा में थीं। कई क्षेत्रों में विकास की रोशनी नहीं पहुँची थी, सरकारी योजनाएँ कागजों में रह जाती थीं, और स्थानीय समुदाय प्रशासन के प्रति अविश्वास से भरे हुए थे। इस वातावरण में नक्सली संगठनों को जमीन और जनसमर्थन मिला। उन्होंने वर्ग संघर्ष और हथियारबंद क्रांति के नाम पर हिंसा का मार्ग अपनाया, जंगलों को अपनी ढाल बनाया और आदिवासी युवाओं को अपने साथ जोड़ लिया। धीरे-धीरे यह आंदोलन एक साम्यवादी विचारधारा का रूप लेते हुए देश की आंतरिक सुरक्षा के लिए सबसे खतरनाक चुनौती बन गया। लेकिन समय के साथ यह आंदोलन अपनी मूल विचारधारा से हटकर आतंक, वसूली, शोषण और खून-खराबे का अड्डा बन गया। सुरक्षा बलों पर हमले, विकास कार्यों को बाधित करना, पुलों और स्कूलों को उड़ाना, आदिवासियों को ढाल बनाना, और सत्ता हासिल करने की लालसा-यह सब नक्सलवाद की असलियत बन गया। इस मानसिकता ने न सिर्फ राष्ट्रीय सुरक्षा को चुनौती दी, बल्कि हजारों परिवारों को तबाह किया और लाखों लोगों के जीवन को भय से भर दिया। लेकिन मोदी एवं शाह के प्रयासों से न केवल नक्सलवाद के खात्मे की सफल लड़ाई लड़ी गयी बल्कि नक्सल क्षेत्रों में विकास की योजनाओं को लागू किया गया। सड़क-बिजली-मोबाइल नेटवर्क जैसे क्षेत्रों में काफी काम हुआ है और इससे भी नक्सलियों की पकड़ कमजोर करने में मदद मिली है। सरकारी आंकड़े बताते हैं कि 2014 से अभी तक नक्सल प्रभावित इलाकों में 12 हजार किमी से ज्यादा सड़कें बनी है, बैंकों की हजार से ज्यादा शाखाएं खोली गई है और स्किल डिवेलपमेंट पर काम किया जा रहा है। इन समन्वित प्रयासों से ही नक्सली जड़ से उखड़ेंगे। माड़वी हिड़मा जैसे अत्यंत खूंखार और रणनीतिक दिमाग वाले नेता का मारा जाना, नक्सलवाद की रीढ़ तोड़ने जैसा है। हिड़मा न सिर्फ नक्सलियों की सैन्य रणनीतियों का प्रमुख दिमाग था, बल्कि उसकी छवि ने वर्षों तक सुरक्षा बलों में चुनौती की भावना जगाई रखी। नक्सलवाद के कमजोर होने में केवल सुरक्षा अभियानों की भूमिका नहीं है, बल्कि राजनीतिक इच्छाशक्ति सबसे महत्वपूर्ण रही है। जब सरकार ने स्पष्ट किया कि देश को नक्सलवाद मुक्त भारत बनाना है, तो उसके लिए बहु-स्तरीय रणनीति अपनाई गई। एक ओर सुरक्षा बलों को आधुनिक तकनीक, बेहतर प्रशिक्षण और सटीक इंटेलिजेंस से मजबूत किया गया, वहीं दूसरी ओर सड़कें, स्कूल, अस्पताल, दूरसंचार और आजीविका कार्यक्रमों द्वारा विकास को तेज किया गया। विकास और सुरक्षा का यह संयुक्त प्रभाव नक्सलवाद की जड़ों को खोखला करने में निर्णायक सिद्ध हुआ है। देश के सामने जो नई सुबह उभर रही है, उसका अर्थ सिर्फ यह नहीं कि बंदूकें शांत हो जाएँगी। इसका अर्थ यह भी है कि वे क्षेत्र, जो दशकों से पिछड़े थे, अब देश की मुख्यधारा से जुड़ेंगे। वहाँ निवेश होगा, शिक्षा और स्वास्थ्य का ढांचा मजबूत होगा, पर्यटन और स्थानीय उद्योग को बढ़ावा मिलेगा, और लोग भय-मुक्त होकर जीवन जी पाएँगे। नक्सलवाद के पतन का संदेश यह भी है कि भारत की लोकतांत्रिक व्यवस्था किसी भी हिंसक विचारधारा से अधिक शक्तिशाली है। हथियार, भय और आतंक से सत्ता पाने का कोई भी प्रयास अंततः असफल होता है। जनता की आकांक्षाएँ सदैव विकास, सुरक्षा और शांति में होती हैं। नक्सली आंदोलन की जैसी समाप्ति दिख रही है, वह इस सत्य को और अधिक स्पष्ट करती है। नक्सलवाद की पूर्ण समाप्ति केवल बंदूक से नहीं होगी। इसके लिए आवश्यक है कि सरकार विकास योजनाओं की निरंतरता बनाए रखे, आदिवासी समुदायों को सशक्त करे, स्थानीय संस्कृति और संसाधनों का सम्मान करे, और यह सुनिश्चित करे कि प्रशासनिक व्यवस्था पारदर्शी और संवेदनशील बने। यदि यह निरंतरता जारी रहती है, तो नक्सलवाद का पुनरुत्थान असंभव हो जाएगा। नक्सलवाद का लगभग खत्म होना भारत के लिए सिर्फ एक सुरक्षा उपलब्धि नहीं, बल्कि एक ऐतिहासिक मोड़ है। यह उस संघर्ष का अंत है जिसमें हजारों जवानों ने बलिदान दिया, लाखों नागरिकों ने दशकों तक आतंक सहा, और देश ने विकास की गति रोककर भी सुरक्षा को प्राथमिकता दी। आज जब नक्सलवाद ढह रहा है, तब यह केवल सरकार की सफलता नहीं, बल्कि भारत की सामूहिक विजय है। यह एक नए भारत की सुबह है-शांत, सुरक्षित, विकासशील और आत्मविश्वासी।

विकास के मंत्र से भाजपा की अभूतपूर्व विजय

भाजपा ने क्या किया जो राहुल, तेजस्वी और प्रशांत नहीं कर पाए! बिहार के चुनाव परिणाम ने देश में एक नई बहस भी छेड़ दी है, लोगों के बीच अब इस मुद्दे पर बहस हो रही है कि क्या प्रधानमंत्री मोदी के सामने किसी का भी चुनाव जीतना अब नामुमकिन है? ज्यादातर लोगों की राय यह बन रही है कि बीजेपी और पीएम मोदी को हराना नामुमकिन नहीं भी है तो यह मुश्किल जरूर है। फिर इसके अलग-अलग कारणों के विश्लेषण भी किए जाते हैं। इसमें अधिकतर लोगों का मानना है कि बीजेपी अब एक चुनावी मशीन बन गई है जो पूरे समय काम करती रहती है। बीजेपी में नेताओं की भूमिका पहले तय हो जाती है और नेतृत्व के बनाए कार्यक्रम के अनुसार काम होता है। इसका उदाहरण है, बिहार के चुनाव में प्रमुख नेताओं की समय से पहले तैनाती। जब नीतीश कुमार 2022 में बीजेपी को छोड़ कर एक बार फिर आरजेडी के साथ चले गए थे तभी राष्ट्रीय महासचिव तावड़े को बिहार जा कर चुनाव की तैयारी में अभी से जुट जाने का निर्देश दे दिया था। कांग्रेस के नेता राहुल गांधी तब सक्रिय होते हैं, जब चुनाव सिर पर होता है, धरातल पर ना तो उनकी टीम नजर आती है और ना सक्रिय कार्यकर्ता। भाजपा के लिए चुनाव तैयारी कोई पार्ट टाइम गेम नहीं है, बल्कि यह जनता से जुड़े रहने और मुद्दों के आसपास पार्टी को तैयार रखने का सतत अभियान है। भाजपा की जिस चुनावी रणनीति का लोग आज लोहा मान रहे हैं उसे विकसित करने और उसकी धार बनाए रखने की जिम्मेदारी स्वयं गृह मंत्री अमित शाह निभाते हैं। अमित शाह ने ही गुजरात में अपने कार्यकाल के दौरान चुनाव तंत्र को विकसित किया था और 2014 के बाद से इसे लगातार देशव्यापी अभियान का इसे हिस्सा बना रहे हैं। बीजेपी नेतृत्व को बिहार की नब्ज का अंदाज था। खास कर अमित शाह ने अपनी तीन महीने के धुआंधार दौरे से यह अंदाज लगा लिया था कि जनता क्या चाहती है और उसी के अनुसार जब केंद्र और राज्य सरकार ने बिहार की जनता की अपेक्षाओं को पूर्ण करने का काम पूरा किया तो जनता गद्गद् हो उठी। फिर जनता ने यह अनुमान भी लगा लिया कि केंद्र में मोदी की डबल इंजन सरकार के साथ बिहार तेज रफ्तार से प्रगति करेगा। वोट चोरी, ईवीएम सेटिंग आदि सब बचकाना बातें हैं। अमित शाह पहले नेता थे जिन्होंने एक चुनावी रैली में ही यह ऐलान कर दिया था कि इस बार एनडीए 160 से ज्यादा सीटें जीतेगा और बिहार में सरकार बनाएगा। फिर अंतिम चरण के मतदान से कुछ ही दिन पहले एक रैली में शाह ने फिर घोषणा की कि 14 नवंबर राजद और कांग्रेस परिवारों के राजनीतिक सफाए का दिन होगा। यदि अमित शाह ने चुनावी सफलता का कोई रिकार्ड बनाया है।

आतंकवादी गतिविधियों का माध्यम बनते टेलीग्राम जैसे सोशल मीडिया प्लेटफार्म

डॉ. राजेन्द्र प्रसाद शर्मा

सहज संवाद और एक दूसरे को जोड़ने का प्रमुख माध्यम सोशल मीडिया आज आतंकवादी गतिविधियों का भी सुरक्षित एवं गोपनीय माध्यम बनता जा रहा है। हालिया दिल्ली ब्लास्ट में लिप्त व्हाइट कॉलर आतंकवादियों के परस्पर संवाद का माध्यम टेलीग्राम सोशल मीडिया प्लेटफार्म पाया गया है। सोशल मीडिया के दुरुपयोग की यह अति अवस्था है। न्यूयार्क टाइम्स ने एक अध्ययन में 3.2 मिलियन संवादों का विश्लेषण किया है। वहीं जानकारों के अनुसार टेलीग्राम सोशल मीडिया प्लेटफार्म पर ही 1500 से अधिक नस्लवादी चैनल सक्रिय है। सोशल मीडिया प्लेटफार्म पर इतनी अधिक संख्या में असामाजिक गतिविधियों में लिप्त चैनलों का सक्रिय होना गंभीर चिंता का विषय बन जाता है। मानवता के लिए सबसे सम्माननीय डाक्टरी का पेशा दिल्ली ब्लॉस्ट और इसके बाद दिन प्रतिदिन खुलती परतों से बेनकाब होता जा रहा है। डाक्टर जिसका जीवन बचाने का दायित्व है वहीं लोगों की मौत का सौदागर बनता है तो यह मानवता के लिए शर्मनाक स्थिति है। मजे की बात यह है कि शिक्षा का केन्द्र विश्वविद्यालय इसका केन्द्र बना हुआ पाया गया। हांलांकि फरीदाबाद के अलफलाह विश्वविद्यालय ने अपने आपकों आतंकवादी गतिविधियों से दूर और साफ-सुथरा होने का दावा किया है पर यह महज लिपापोती से अधिक कुछ ज्यादा नहीं लगती। मजे की बात यह है कि जब डॉक्टर बेनकाब हो रहे हैं और इनपर कार्रवाई की बात हो रही है तो कुछ राजनीतिक दल और संगठन इनके पक्ष में दूसरी तरह की भाषा बोलने लगे हैं। समझ से परे यह बात है कि ऐसे संगठनों का क्या दायित्व उन बेगुनाह लोगों और परिवारों के प्रति नहीं होता क्या जो इन आतंकी गतिविधियों में अकारण मौत के आगोश में चले जाते हैं तो बहुत से लोग घायल हो जाते हैं। इन प्रभावित लोगों व इनके परिवारों के प्रति भी किसी की जबावदेही होनी चाहिए। अच्छा तो यह हो कि दूसरी तरह की भाषा बोलने वाले प्रभावित लोगों के पक्ष में भी आगे आएं। आतंकवादी गतिविधियों से जुड़े लोगों के साझा संवाद का माध्यम टेलीग्राम प्लेटफार्म पाया गया है। सोशल मीडिया की जहां तक बात है तो इसमें कोई दो राय नहीं कि आज सोशल मीडिया प्लेटफार्म लोगों की पसंद, सूचनाओं को साझा करने और एक दूसरे तक अपनी भावनाएं पहुंचाने का माध्यम बन गए हैं। सवाल इनके दुरुपयोग और इन पर आवष्यक अंकुश की आवश्यकता को लेकर है। लाख दावें करें पर यह प्लेटफार्म असामाजिक गतिविधियों व भ्रामक समाचारों पर तत्काल कार्रवाई करने में विफल ही देखें गए हैं। सोशल मीडिया के संदेशों की प्रतिक्रिया स्वरुप लोगों के जुटजाने और भीड़ के आक्रोशित हो जाना आज आम हो गया है। यही कारण है कि कानून व्यवस्था के जिम्मेदार सबसे पहले उस क्षेत्र में इंटरनेट सेवाओं को स्थगित करना ही श्रेयस्कर समण्ते हैं। यह भी सही है कि देश में अधिकांश लोगों से जुड़े सोशल मीडिया प्लेटफार्मों का संचालन विदेशी धरती पर हो रहा है। इसे दुर्भाग्यजनक ही माना जाएगा कि लाख प्रयासों के बावजूद देश में बने सोशल मीडिया प्लेटफार्म अपनी पहचान बनाने व अधिकांश देशवासियों के चहेते बनने में सफल नहीं हो पाए। आज फेसबुक, इंस्टाग्राम, लिंकड्विन, यूट्यूब, व्हाट्सएप, क्रास या ट्वीटर, ठिकटॉक, स्नेपचेट, पिंटरेस्ट, वीचैट, रेडिट, टेलीग्राम आदि आदि प्रमुख सोशल मीडिया प्लेटफार्म की संचालन की ड़ोर विदेशियों के हाथ ही है। हांलाकि हमारे देश में यूट्यूब, वाट्सएप, इंस्टाग्राम, फेसबुक लिंक्डइन आदि सोशल प्लेटफार्म अधिक चलन में है तो वाट्सएप और इंस्टा की पहुंच आम लोगों तक है। दुनियाभर में 5 अरब 41 लाख से अधिक लोग सोशल मीडिया प्लेटफार्म का उपयोग कर रहे हैं। जहां तक टेलीग्राम प्लेटफार्म का सवाल है यह सर्वविदित है कि आतंकवादी गतिविधियों का यह केन्द्र रहा है। रुस यूक्रेन युद्ध में जेलेन्स्की द्वारा इस प्लेटफार्म का उपयोग किया गया है तो हांगकांग-बेलारुस द्वारा भी इसका उपयोग इसी तरह से किया जाता रहा है। दरअसल टेलीग्राम को आजादी की आवाज कहा जाता है। रुस के दो भाईयों पॉवेल ड्यूरोव और निकोलोई ड्यूरोव द्वारा तैयार ओर संचालित इस प्लेटफार्म का दावा है कि वह डाटा शेयर नहीं करता। इस पर प्रसारित संदेशों को कोई तीसरा नहीं देख या पढ़ नहीं सकता।

ट्रिब्यूनल सुधार और राष्ट्रपति संदर्भ संबंधी फैसले संवैधानिक मयार्दा और न्यायिक संयम की मिसाल

19 नवंबर को दिए गए 137 पृष्ठों के निर्णय में मुख्य न्यायाधीश बीआर गवई और न्यायमूर्ति के. विनोद चंद्रन की पीठ ने साफ कहा है कि संसद पहले से रद्द किए गए प्रावधानों को मामूली बदलावों के साथ दोबारा पेश कर न्यायिक फैसलों को दरकिनार नहीं कर सकती।

नीरज कुमार दुबे

भारत की संवैधानिक संरचना में न्यायपालिका और कार्यपालिका के बीच संतुलन सदैव एक संवेदनशील विषय रहा है। दो दिनों में उच्चतम न्यायालय द्वारा दिए गए दो महत्वपूर्ण फैसलों ने इस संतुलन पर नई बहसों को जन्म दिया है। एक ओर न्यायालय ने न्यायाधिकरण सुधार अधिनियम, 2021 के प्रमुख प्रावधानों को असंवैधानिक ठहराकर संसद और केंद्र सरकार को कठोर संदेश दिया है, वहीं दूसरी ओर राष्ट्रपति द्वारा अनुच्छेद 143 के तहत भेजे गए संदर्भ पर अपनी राय देते हुए न्यायालय ने स्पष्ट कहा है कि न तो राष्ट्रपति और न ही राज्यपाल पर अदालत कोई बाध्यकारी समय-सीमा थोप सकती है। इन दोनों फैसलों को मिलाकर देखें तो न्यायालय ने एक ओर कार्यपालिका के हस्तक्षेप से न्यायिक स्वतंत्रता की रक्षा की है, जबकि दूसरी ओर अपने अधिकार-क्षेत्र की सीमाएँ भी रेखांकित की हैं। न्यायाधिकरण संबंधी फैसले की बात करें तो 19 नवंबर को दिए गए 137 पृष्ठों के निर्णय में मुख्य न्यायाधीश बीआर गवई और न्यायमूर्ति के. विनोद चंद्रन की पीठ ने साफ कहा है कि संसद पहले से रद्द किए गए प्रावधानों को मामूली बदलावों के साथ दोबारा पेश कर न्यायिक फैसलों को दरकिनार नहीं कर सकती। अदालत ने यह भी टिप्पणी की कि सरकार बार-बार उन्हीं प्रावधानों को अध्यादेश और फिर कानून के रूप में लागू करती रही, जिन पर न्यायालय स्पष्ट रूप से ऐतराज जता चुका था। यह प्रवृत्ति विधायी अवहेलना के रूप में व्याख्यायित की गई— अर्थात, बिना वास्तविक सुधार किए केवल प्रतीकात्मक परिवर्तन कर न्यायालय की बात को निष्प्रभावी करने का प्रयास। यह फैसला इसलिए भी महत्वपूर्ण है क्योंकि यह न्यायाधिकरणों की स्वतंत्रता, निष्पक्षता और संस्थागत मयार्दा को ठोस आधार देता है। न्यायाधिकरण सरकार के अंगों के विरुद्ध भी निर्णय लेते हैं; ऐसे में उनकी नियुक्ति, कार्यकाल और सेवा-शर्तें यदि सरकार के नियंत्रण में हों, तो न्यायिक निष्पक्षता खतरे में पड़ सकती है। न्यायालय ने इस अधिनियम को शक्तियों के पृथक्करण और न्यायिक स्वतंत्रता के सिद्धांतों का उल्लंघन करार देते हुए रद्द कर दिया। यह स्पष्ट संकेत है कि संसद कानून तो बना सकती है, लेकिन न्यायपालिका की मूलभूत स्वतंत्रता को नियंत्रण में लेने की अनुमति नहीं दी जा सकती। दूसरा महत्वपूर्ण फैसला राष्ट्रपति द्रौपदी मुर्मू द्वारा भेजे गए संवैधानिक संदर्भ पर आया। न्यायालय के समक्ष मुख्य प्रश्न था— क्या राज्यपाल या राष्ट्रपति पर यह बाध्यता हो सकती है कि वे किसी बिल पर तय समय-सीमा में निर्णय दें? मुख्य न्यायाधीश गवई तथा न्यायमूर्ति सूर्यकांत, विक्रम नाथ, पी.एस. नरसिंह और ए.एस. चंदुरकर की संविधान पीठ ने स्पष्ट किया कि न्यायालय राज्यपाल/राष्ट्रपति पर कोई निर्धारित समय-सीमा नहीं थोप सकता। यह स्पष्ट है कि मान ली गई सहमति अर्थात समय बीतने पर बिल को स्वतः मंजूर मान लेने की अवधारणा असंवैधानिक है, क्योंकि यह कार्यपालिका की भूमिका को न्यायपालिका द्वारा हड़पने जैसा होगा। हाँ, यदि लंबे समय तक अनिश्चित देरी हो, जिससे लोकतांत्रिक प्रक्रिया बाधित हो, तो न्यायालय सीमित दायरे में यह निर्देश दे सकता है कि राज्यपाल अपनी जिम्मेदारी निभाएँ, लेकिन यह निर्देश विवेकाधिकार के उपयोग पर टिप्पणी नहीं करेगा। इस फैसले से दो बातें स्पष्ट होती हैं। पहली यह कि न्यायालय ने स्वयं पर अंकुश लगाते हुए साफ किया कि कार्यपालिका के संवैधानिक अधिकारों में दखल की सीमा तय है। दूसरी बात यह है कि राज्यपालों की ओर से बिलों को महीनों तक रोककर रखने की आलोचना को भी न्यायालय ने गंभीरता से लिया है और समाधान के रूप में सीमित न्यायिक समीक्षा का दरवाजा खुला रखा है। यह संतुलन स्थापित करना आसान नहीं था। एक ओर राज्यों— विशेषकर तमिलनाडु, केरल, पंजाब और पश्चिम बंगाल ने तर्क दिया कि राज्यपालों द्वारा बिलों को रोकना लोकतंत्र-विरोधी है। दूसरी ओर, केंद्र ने कहा कि अदालतें समय-सीमा तय करके कार्यपालिका के अधिकार क्षेत्र में दखल नहीं दे सकतीं। अंततः न्यायालय ने वही रास्ता चुना जो भारतीय संविधान की आत्मा के अनुरूप है यानि संविधान ने समय-सीमा नहीं तय की है, इसलिए अदालत भी इसे तय नहीं करेगी। इन दोनों फैसलों में न्यायालय का स्वर पूरी तरह एक जैसा नहीं है। एक तरफ उसने संसद को तीखी चेतावनी दी, दूसरी तरफ उसने खुद अपनी सीमाओं को स्वीकार किया। यही दोहरी भूमिका भारतीय लोकतंत्र को संतुलित बनाती है। न्यायालय संदेश दे रहा है कि न्यायिक स्वतंत्रता पर किसी भी प्रकार का आघात बर्दाश्त नहीं होगा, लेकिन संविधान में जो अधिकार अन्य अंगों को दिए गए हैं, उन पर न्यायपालिका कब्जा नहीं करेगी। इन फैसलों की समय-सीमा भी रोचक है। मुख्य न्यायाधीश बीआर गवई 23 नवंबर 2025 को सेवानिवृत्त होंगे। उनके बाद न्यायमूर्ति सूर्यकांत 24 नवंबर को भारत के 53वें मुख्य न्यायाधीश बनेंगे। इन दोनों महत्वपूर्ण संवैधानिक फैसलों पर गवई और सूर्यकांत दोनों की निर्णायक भूमिका भविष्य की न्यायिक दिशा के संकेत देती है— विशेषकर केंद्र-राज्य संबंधों और न्यायिक स्वतंत्रता के क्षेत्र में। बहरहाल, संविधान ने भारत को एक संतुलित संरचना दी है— न्यायपालिका स्वतंत्र हो, कार्यपालिका जिम्मेदार हो और विधायिका जनता के प्रति उत्तरदायी हो। इन दोनों फैसलों ने इस संतुलन को और भी स्पष्ट रूप से रेखांकित किया है। जहाँ न्यायालय ने संसद को बताया कि वह न्यायिक आदेशों को दरकिनार नहीं कर सकती, वहीं राज्यपालों और राष्ट्रपति की संवैधानिक गरिमा को भी मान्यता दी, यह कहते हुए कि समय-सीमा थोपना न्यायपालिका के अधिकार-क्षेत्र से बाहर है। इन फैसलों के साथ भारत का लोकतंत्र एक बार फिर यह साबित करता है कि संस्थाएँ तभी मजबूत होती हैं जब वे एक-दूसरे की सीमाओं और स्वतंत्रता का सम्मान करें।

https://t.me/AllNewsPaperPaid

कमांडर ऑफ डिफेंस फोर्सेज मुनीर

नए संशोधन के तहत फील्ड मार्शल असीम मुनीर कमांडर ऑफ डिफेंस फोर्सेज बन कर सेना के सभी अंगों के प्रमुख बन जाएंगे। साथ ही सुप्रीम कोर्ट से अपनी पहल पर मामलों का संज्ञान लेने का अधिकार छीन लिया जाएगा। पाकिस्तान में संविधान संशोधन के जरिए सत्ता का नया ढांचा कायम कर दिया गया है। या इसे ऐसे भी कहा जा सकता है कि वहां जो ढांचा व्यवहार में चल रहा था, उसे अब औपचारिक रूप दे दिया गया है। यानी देश में वास्तविक सत्ता निर्वाचित सरकार के हाथ में होने का नकाब उतार फेंका गया है। वैसे हकीकत यही है कि अप्रैल 2022 में इमरान खान के नेतृत्व वाली पाकिस्तान तहरीक-ए-इंसाफ (पीटीआई) सरकार को सत्ता से हटाए जाने के बाद से असल सत्ता सेना के हाथ में रही है, जिसने शहबाज शरीफ सरकार को अपना 'लोकतांत्रिक मुखौटाÓ बना रखा है। इमरान खान की सरकार हटाई ही इसलिए गई, क्योंकि उसने संप्रभु अधिकार खुद में होने का भ्रम पाला था। मगर तब सेना को नकाब की जरूरत पड़ी, क्योंकि खान की सरकार को गिराने के क्रम में वह देश में अभूतपूर्व रूप से अलोकप्रिय हो गई। बहरहाल, इस साल मई में ऑपरेशन सिंदूर (पाकिस्तान में बुनयान- अल-मरसूस) के दौरान पाकिस्तानी सेना देश के अंदर अपनी कथित जीत का नैरेटिव बनाने में कामयाब रही। तब से उसका आकलन है कि अब सत्ता पर औपचारिक नियंत्रण बना लेने का सही वक्त है। उस सैन्य कार्रवाई के तुरंत बाद सेनाध्यक्ष जनरल असीम मुनीर ने खुद को फील्ड मार्शल बनवाया था। अब नए संशोधन के तहत वे कमांडर ऑफ डिफेंस फोर्सेज बन कर सेना के सभी अंगों के प्रमुख बन जाएंगे। इसके साथ ही संवैधानिक मामलों के लिए अलग से न्यायालय का गठन होगा, जबकि वर्तमान सुप्रीम कोर्ट से अपनी पहल पर मामलों का संज्ञान लेने का अधिकार छीन लिया जाएगा। पाकिस्तान के सत्ता तंत्र में हमेशा, कम-से-कम रक्षा एवं विदेश नीति संबंधी मामलों में, सेना के पास निर्णायक अधिकार रहे हैं। देशी मामलों में भी उसके आर्थिक एवं अन्य हित व्यवहार में सरकार और न्यायपालिका की पहुंच से बाहर रहे हैं। फिर भी कभी-कभार अदालतें सेना नेतृत्व की मर्जी के खिलाफ जाकर कुछ मामलों का संज्ञान ले लेती थीं। इमरान खान सरकार ने नीतिगत मामले अपने हाथ में लेने की कोशिश की थी। फील्ड मार्शल मुनीर ने अब ऐसी संभावनाओं पर विराम लगवा दिया है।

मोदी का गमछा संदेश : सरलता से जनता तक पहुँचने की नई शैली

आरती कुमारी

भारतीय राजनीति में प्रतीकों का महत्व हमेशा से रहा है। चाहे महात्मा गांधी का लाठी लेकर चलना हो, जयप्रकाश नारायण का खादी कुर्ता हो या लालू प्रसाद यादव का साधारण चेकदार गमछा, इन तमाम प्रतीकों ने नेताओं को आम जनता के करीब लाने में अहम भूमिका निभाई। इसी परंपरा में प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी का हाल का गमछा लहराना भी एक नया लेकिन गहराई लिए संदेश बनकर उभरा है। बीते कुछ वर्षों में मोदी जब भी किसी जनसभा या रैली में आते हैं, तो मंच से हाथ उठाकर सिर्फ अभिवादन ही नहीं, बल्कि गमछा लहराकर भी जनता से जुड़ाव जताते हैं।प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी ने पहली बार गमछा सार्वजनिक तौर पर वर्ष 2015 में बिहार विधानसभा चुनाव प्रचार के दौरान लहराया था। उस समय उन्होंने बिहार के मुजफ्फरपुर में चुनावी सभा में हेलीकॉप्टर से उतरते ही स्थानीय मधुबनी प्रिंट वाले गमछे को हवा में लहराया था और यह अंदाज सोशल मीडिया पर भी काफी वायरल हुआ था। इसके बाद से यह उनकी एक लोकप्रिय पहचान बन गई है, खासकर उत्तर भारत के किसानों और श्रमिकों के प्रतीक के तौर पर। मोदी ने मुजफ्फरपुर रैली के दौरान पहली बार गमछा लहराकर यह प्रतीकात्मक संदेश दिया था कि वे जमीन से जुड़े नेता हैं, लेकिन चर्चा में तब आये जब 14 नवंबर 2025 को बिहार विधानसभा चुनावों की बंपर जीत पर पीएम मोदी ने दिल्ली स्थित बीजेपी मुख्यालय में भारी भीड़ के बीच कार से बाहर निकलते ही जोरदार तरीके से गमछा लहराकर सभी का अभिवादन किया। इसी तरह से 20 नवंबर को पटना में नीतीश सरकार के शपथ ग्रहण समारोह में भी गमछा लहराकर जनता का अभिवादन स्वीकार करते हुए नजर आये। वहीं इससे पूर्व अगस्त 2025 में बिहार के बेगूसराय जिले में आंता-सिमरिया पुल उद्घाटन के मौके पर पीएम मोदी ने मंच से गमछा लहराया था। यह दृश्य भीड़ के बीच उत्साह का केंद्र रहा, बगल में बैठे मुख्यमंत्री नीतीश कुमार ने भी तालियां बजाकर प्रतिक्रिया दी। इसी तरह से 31 अक्टूबर 2025 को मुजफ्फरपुर चुनावी सभा के दौरान फिर मोदी ने गमछा लहराया, जिसका वीडियो वायरल हुआ। अब यह दृश्य मोदी की पहचान का हिस्सा बन चुका है, लेकिन इसके पीछे राजनीति और प्रतीक दोनों का महीन मेल नजर आता है। मोदी की यह शैली केवल मंचीय मुद्रा नहीं है। इसमें एक गहरा सांस्कृतिक भाव और राजनीतिक रणनीति छिपी है। भारतीय समाज में गमछा सिर्फ कपड़े का एक टुकड़ा नहीं, बल्कि श्रम और स्वाभिमान का प्रतीक है। यह किसान, मजदूर और आम आदमी की पहचान है, जो घर हो या खेत, बाजार हो या सड़क हर जगह उसके साथ रहता है। जब प्रधानमंत्री उसी गमछे को लहराकर जनता की ओर हाथ उठाते हैं, तो वह एक संदेश देते हैं कि वे सत्ता के शिखर पर होते हुए भी जनता के बीच से आए व्यक्ति हैं। यह भाव जनता के नेता की छवि को और मजबूत करता है।गमछे की राजनीति का एक सांस्कृतिक पक्ष भी है। भारत के कई राज्यों में गमछा स्थानीय पहचान से जुड़ा हुआ है। उत्तर प्रदेश और बिहार में यह सम्मान और आत्मीयता का प्रतीक है। असम में 'गमसा' या 'गमोसा' सांस्कृतिक अस्मिता का हिस्सा है। प्रधानमंत्री मोदी जब इन प्रदेशों में रैलियों में लोक गमछा लहराते हैं, तो वे सिर्फ अभिवादन नहीं, बल्कि उस क्षेत्र की संस्कृति को सम्मान देते हैं। यह कदम लोगों को भावनात्मक रूप से जोड़ने का माध्यम बन जाता है। मोदी के इस व्यवहार से यह भी स्पष्ट होता है कि वे भाषण से ज्यादा हाव-भाव के जरिए संवाद पर विश्वास करते हैं, जो भारतीय जनता को अधिक प्रभावित करता है। राजनीतिक दृष्टि से देखा जाए, तो मोदी का यह गमछा संवाद उनकी जन संवाद शैली का एक विस्तार है, जो उन्हें भीड़ से जोड़ता है। 2014 से पहले जब वे गुजरात के मुख्यमंत्री रहे, तब भी उनका अंदाज ग्रामीण भारत से जुड़ी चीजों को मंच पर लाने वाला था। प्रधानमंत्री बनने के बाद यह शैली और परिष्कृत हो गई। अब उनका गमछा न केवल फैशन का हिस्सा है, बल्कि यह उनकी वैचारिक यात्रा का प्रतीक भी है एक ऐसा नेता जो वैश्विक मंच पर सूट और ब्लेज़र में नजर

आता है, लेकिन अपने देश के लोगों के बीच आते ही उसी लोक वस्त्र को धारण करता है। यही द्वैत उनकी लोकप्रियता का मूल है वैश्विक छवि के साथ स्थानीय जुड़ाव। इस शैली की तुलना अगर पुराने नेताओं से की जाए तो कुछ समानताएं जरूर दिखती हैं, परंतु यह सीधा अनुसरण नहीं है। उदाहरण के लिए, लालू प्रसाद यादव या मुलायम सिंह यादव भी गमछे को अपनी पहचान का हिस्सा बनाते थे, लेकिन उनके लिए यह एक वर्गीय और ग्रामीण पहचान का प्रतीक था। दूसरी ओर, नरेंद्र मोदी गमछे को वर्गीय पहचान से ऊपर, राष्ट्रीय सांस्कृतिक प्रतीक के रूप में प्रस्तुत करते हैं। उनके लिए गमछा जनता के साथ निकटता का माध्यम है, न कि केवल ग्रामीण प्रतिनिधित्व का। यही फर्क उनके अंदाज को दूसरों से अलग करता है। गमछा लहराना मोदी के नए तरह के जनसंवाद का हिस्सा भी है। यह ऐसा संवाद है जिसमें शरीर की भाषा, चेहरे के भाव और सरल प्रतीक अधिक बोलते हैं। जब हजारों की भीड़ प्रधानमंत्री को गमछा लहराते देखती है, तो उसे एक अपनापन महसूस होता है। मंच और जनता के बीच सीमाएं मिटती हैं। यह दृश्य एक तरफ नेतृत्व का उत्सव लगता है, तो दूसरी तरफ लोकतंत्र की जीवंतता को दर्शाता है। यही वह दृश्य है जो सोशल मीडिया पर वायरल होता है, वीडियो क्लिप्स में भावनात्मक जुड़ाव पैदा करता है, और चुनावी संदेश को शब्दों से पहले ही पहुंचा देता है। इसके अतिरिक्त, मोदी का गमछा एक व्यक्तिगत ब्रांड का भी हिस्सा बन गया है। उनके कुर्ते, जैकेट और स्टोल की तरह ही गमछा अब उनका स्थायी सहयोगी बन चुका है। यह भारतीय परिधान संस्कृति को आधुनिक राजनीतिक छवि से जोड़ने का प्रयास भी कहा जा सकता है। पश्चिमी परिधान के विपरीत गमछा सहज और सस्ता है, जिसे हर व्यक्ति अपने घर में पाता है। इस प्रतीक के माध्यम से मोदी इस भाव को मजबूती देते हैं कि 'मैं तुम्हारे जैसा हूं'। यह लोकतांत्रिक राजनीति में गहरा असर छोड़ती है। इसके पीछे मनोवैज्ञानिक प्रभाव भी छिपा है। भाषा से परे दृश्यों की शक्ति शब्दों से ज्यादा होती है। चुनावी जनसमूह में जहां सब कुछ शोर और तात्कालिकता से भरा होता है, वहां एक साधारण गमछा लहराना एक स्थायी छवि बना देता है। यही दृश्य दोबारा चुनाव के वक्त स्मृति में लौट आता है, और मतदाता को भावनात्मक स्तर पर जोड़ देता है। राजनीति में यह जुड़ाव रणनीतिक महत्व रखता है, खासकर तब जब नेता को अपने स्थानीयपन और जनसामान्यता को निरंतर सिद्ध करना हो।नरेंद्र मोदी के इस प्रतीकात्मक कदम को केवल मंचीय प्रदर्शन मानना गलत होगा। यह दरअसल भारतीय राजनीति और संस्कृति का ऐसा संगम है, जिसमें परंपरा, भावना और संचार का अनोखा मिश्रण है। जिस दौर में राजनीति मीडिया-प्रचार पर निर्भर हो चुकी है, वहां मोदी का गमछा लोक-संस्कृति और संचार का जीवंत प्रतीक बन जाता है। तात्पर्य यह है कि गमछा लहराना मोदी के लिए सिर्फ जनता का अभिवादन नहीं, बल्कि एक सांस्कृतिक संवाद है, जिसमें आम आदमी, उसकी परंपरा, उसकी अस्मिता और उसकी भावनाएं एक साथ समा जाती हैं। यही सरल भाव हर जनसभा में उन्हें भीड़ से नहीं, बल्कि उस भीड़ के बीच का नेता बना देता है।

बिहार विधानसभा चुनाव परिणाम से - सत्ता के शिखर से संघर्ष की धरातल तक पहुंचा - नेता प्रतिपक्ष

जितेन्द्र कुमार सिन्हा, पटना

बिहार विधानसभा चुनाव 2025 न केवल राज्य की राजनीति के लिए निर्णायक साबित हुआ, बल्कि इसने नेतृत्व, रणनीति, संगठन और जनता के विश्वास को लेकर कई गहरे प्रश्न भी खड़ा किया। कुल 39 दिनों के चुनावी अभियान के उतार-चढ़ाव, आरोप-प्रत्यारोप, रणनीतिक बदलाव और अप्रत्याशित राजनीतिक घटनाक्रम ने राजनीति विज्ञान के छात्रों और शोधकर्ताओं के लिए यह चुनाव एक 'लैब मॉडल' की तरह प्रस्तुत किया। इन सबके केंद्र में एक चेहरा रहा "तेजस्वी यादव"। कभी 80 विधायकों वाली सबसे बड़ी विपक्षी पार्टी के युवा नेता, कभी उपमुख्यमंत्री, कभी विपक्ष के उभरते चेहरे और आज केवल 25 विधायकों के नेता हैं। फिर भी, नेता प्रतिपक्ष का पद उनके पास है, कल भी था, आज भी है, और संभावना है कि आगे भी वही बने रहेंगे। यह स्थिति अपनी जगह एक उपलब्धि भी है और एक चुनौती भी, क्योंकि सत्ता-संघर्ष में परिस्थितियाँ जितनी बदलती हैं, उतनी ही तेजी से बदलते हैं नेता के प्रति जनता के दृष्टिकोण और उम्मीदें। भारतीय राजनीति में ऐसे बहुत कम उदाहरण मिलता है जब कोई नेता अपने करियर की शुरुआत सीधे सत्ता के शीर्ष पदों में से एक से करता है। तेजस्वी यादव को 2015 में यह अवसर मिला, जब 26 वर्ष की आयु में वे बिहार के उपमुख्यमंत्री बने। यह उम्र, यह पद और यह जिम्मेदारी, तीनों ने मिलकर उन्हें राष्ट्रीय राजनीति का केंद्रित चेहरा बना दिया। लेकिन उसी के साथ उन पर उम्मीदों का बोझ भी कई गुना बढ़ गया था। राजनीति में उतार-चढ़ाव स्वाभाविक हैं, किंतु इतना तीव्र गिरावट दुर्लभ ही देखने को मिलती है। 2015 में 80 विधायक, 2020 में 75 विधायक और 2025 में 25 विधायक। यह केवल सीटों का कम होना नहीं है, बल्कि यह कम होता जनविश्वास, कमजोर होती संगठनात्मक पकड़ और नेतृत्व से गिरती अपेक्षाओं का स्पष्ट संकेत है। बिहार जैसे राजनीतिक रूप से जागरूक राज्य में इतनी बड़ी गिरावट अपने आप में गहन विश्लेषण का विषय है। 2025 के चुनाव में एनडीए का 200 सीटों के पार जाना, न सिर्फ राजनीतिक इतिहास में एक अध्याय बन गया है, बल्कि यह दिखाता है कि जनता किस प्रकार स्थिरता, स्पष्टता और विकास के मॉडल को प्राथमिकता दे रही है। एनडीए की यह जीत तीन बड़े कारणों से संभव हुई। पहली कारण जनता से सतत संवाद, दूसरी कारण स्थानीय और राज्य स्तरीय मुद्दों पर सशक्त पकड़, तीसरी कारण महागठबंधन की कमजोर तैयारी और अमर्यादित बयानबाजी का प्रतिवाद। एनडीए ने जहाँ विकास की उपलब्धियों और कानून-व्यवस्था पर जनता को विश्वास दिलाया, वहीं महागठबंधन आंतरिक संघर्षों, टिकट वितरण के विवाद, और स्पष्ट नेतृत्व के अभाव से जूझता रहा। 2025 के चुनाव में सबसे बड़े मुद्दों में से एक था, टिकट वितरण में देरी, मनमानी और संवादहीनता। तेजस्वी यादव पर सबसे गंभीर आरोप यह लगा कि उन्होंने टिकट से वंचित किए गए पुराने नेताओं एव विधायकों से बातचीत करना भी उचित नहीं समझा। एक विधायक का टीवी पर आकर अपनी पीड़ा साझा करना, यह दर्शाता है कि संगठन और नेतृत्व के बीच की दूरी कितनी बढ़ चुकी थी।राजनीति केवल भाषणों और रैलियों से नहीं चलती है। यह रिश्तों, विश्वास और संवाद की नींव पर टिकती है। जब यह नींव कमजोर हो जाए, तो चुनावी परिणाम भी उसी अनुरूप ही सामने आते हैं। राजनीति में वंश और विरासत एक पूंजी है, परंतु जब विरासत को नेतृत्व की योग्यता से बड़ा दिखाया जाए, तो जनता में इसका असर नकारात्मक होता है। तेजस्वी यादव को कई मंचों पर यह कहते सुना गया है कि "हमारे माता-पिता दोनों मुख्यमंत्री रहे हैं।" यह कथन भले ही गर्व का विषय हो, लेकिन इसके बार-बार उच्चारण से जनता को उनमें विनम्रता से अधिक अहंकार दिखाई देने लगा। बिहार की जनता राजनीति में सादगी, संघर्ष, अनुभव और जनता से जुड़ाव को महत्व देती है, इसलिए यह बयान उनकी छवि के प्रतिकूल साबित हुआ। तेजस्वी यादव को एक बेहतरीन वक्ता माना जाता है। उनकी रैलियाँ भीड़ खींचती हैं, उनके भाषणों में जोश रहता है, और युवा उन्हें सुनते भी हैं। लेकिन चुनाव केवल भाषणों के दम पर नहीं जीते जाते, उसके लिए आवश्यक होता है स्पष्ट रोडमैप, नीतियों की गहराई, और भविष्य की ठोस योजना। 2025 के चुनाव में महागठबंधन विजन देने में असफल रहा। "किसको क्या देना है" इस पर बात तो बहुत हुई, पर "बिहार कहाँ ले जाना है" इसका जवाब किसी के पास नहीं था। बिहार की राजनीति का चरित्र ऐसा है कि यहाँ जनता अपने नेता को जमीनी स्तर पर देखना चाहती है। सोशल मीडिया से नहीं, जमीनी यात्राओं से नेतृत्व चमकता है। नेता प्रतिपक्ष की भूमिका केवल सवाल उठाने की नहीं होती है, वह जनता की आवाज का प्रतिनिधित्व भी करता है। इसके लिए जनता से प्रतिदिन जुड़े रहना, गाँव-गाँव जाना, मुद्दे उठाना अनिवार्य होता है। विधायकों की संख्या घटने का मतलब है कि पार्टी का जनाधार सिकुड़ रहा है। इसके लिए संगठन की पुनर्संरचना, नए चेहरों को अवसर, और पुराने नेताओं का मान-सम्मान अत्यंत आवश्यक है। बिहार युवा राज्य है और युवाओं को ऊर्जा चाहिए, दिशा चाहिए, और उम्मीद चाहिए। नेता प्रतिपक्ष का व्यक्तित्व प्रेरणादायक होना चाहिए। उन पर अभी भी नेता प्रतिपक्ष की जिम्मेदारी है। यह पद उन्हें तीन बड़ी संभावनाएँ देता है। वे यह समीक्षा कर सकते हैं कि कहाँ राजनीतिक संवाद कम हुआ, कहाँ संगठन टूटा और कहाँ जनता की उम्मीदें अधूरी छूट गईं। राजनीति में कोई पराजय अंतिम नहीं होती, अगर नेता सीखने को तैयार हो। तेजस्वी यादव चाहे तो अगले पाँच वर्षों में नई छवि, नई रणनीति और नए बिहार विजन के साथ मजबूत वापसी कर सकते हैं। उनके पास उम्र है, समय है, और अनुभव भी है। वे चाहें तो खुद को पूरी तरह रीब्रांड कर सकते हैं। बिहार अब वादों से नहीं, परिणामों से वोट देता है। यह बदलाव तेजस्वी यादव और सभी नेताओं के लिए चेतावनी और अवसर दोनों है। भले ही जाति अभी भी राजनीति का आधार है, पर युवा मतदाता विकास, रोजगार, शिक्षा और स्वास्थ्य को प्राथमिकता दे रहा है। यह वह क्षेत्र है जहाँ तेजस्वी यादव अपने लिए मजबूत जमीन बना सकते हैं। एक मजबूत लोकतंत्र के लिए जितनी आवश्यकता मजबूत सरकार की होती है, उतनी ही जरूरत जिम्मेदार विपक्ष की भी होती है। बिहार को एक ऐसा नेता प्रतिपक्ष चाहिए जो मुद्दे उठाए, समाधान सुझाए और जनता की आवाज बने। बिहार में आज जो राजनीतिक परिदृश्य है, वह परिवर्तन, संघर्ष और पुनर्संरचना से भरा हुआ है। तेजस्वी यादव इसके केंद्र में हैं, उनके पास अनुभव है, मंच है, और चुनौती भी। यदि वे संगठन को जोड़ते हैं, जनता से सीधे जुड़ते हैं, विनम्रता और गंभीरता के साथ नई रणनीति बनाते हैं और अपने भाषणों से आगे बढ़कर ठोस विजन प्रस्तुत करते हैं, तो वे न केवल मजबूत नेता प्रतिपक्ष बन सकते हैं बल्कि भविष्य में सत्ता की दौड़ में फिर से वापसी कर सकते हैं।

मेष राशिः आज अपने काम के लिए आपके मन में कोई नया विचार आ सकता है। आप उस पर जल्द ही काम भी शुरू कर सकते हैं। लेकिन आज दिन खत्म होते-होते आपको ऐसा लग सकता है कि आपका कोई काम पूरा नहीं हो पाया है, जिससे आपको कुछ तनाव महसूस हो सकता है। इसलिए कोई भी काम करने से पहले उसकी रूपरेखा जरूर बना लें। शाम को बच्चों के साथ समय बिताने पर आप राहत महसूस करेंगे। प्रॉपर्टी के लिये आपको कोई अच्छी डील मिल सकती है।

वृष राशिः आज खुद की मेहनत से आप परिवार की अपेक्षाओं पर खरे उतरने में कामयाब होंगे। आपका दिन पहले की अपेक्षा अच्छा रहेगा। किसी जरूरी काम में आज आपको सफलता मिल सकती है। इस राशि के मीडिया से जुड़े लोगों के लिये आज का दिन बेहतर रहेगा। लवमेट के साथ आपके रिश्ते अच्छे रहेंगे। साथ में बाहर घूमने का प्लान बना सकते हैं। ऑफिस में आपके काम को लेकर बॉस आपकी प्रशंसा कर सकते हैं।

मिथुन राशिः आज आपको किस्मत का साथ मिलने में थोड़ी परेशानी आ सकती है। आपको दूसरों से अपनी पर्सनल बात शेयर करने से बचना चाहिए। कोई आपकी ऑफिशियल जानकारी लीक कर सकता है। आपको ध्यान से अपना काम करने की जरूरत है। आप किसी सामाजिक कार्य में अपना हाथ बंटा सकते हैं। उचित दिशा में मेहनत से आपको सफलता जरूर मिलेगी।

कर्क राशिः आज आपके सोचे हुए सभी काम पूरे हो जायेंगे। आपका दिन अच्छा रहेगा। आपके लिये बहुत-सी चीज़ें आज फायदेमंद हो सकती हैं। आप किसी नए बिजनेस में पैसा लगाने के बारे में सोच सकते हैं। विवाहितों के लिये आज का दिन बढ़िया है। आपको अपने जीवनसाथी से पूरा सपोर्ट मिलेगा। काम के लिये आपकी ऊर्जा बनी रहेगी। शिक्षा से जुड़ी आपकी सभी इच्छाएं पूरी होंगी।

सिंह राशिः आज आपका दिन अच्छा रहेगा। किसी अधूरे काम में आज हाथ लगाने से वह जल्द ही पूरा हो सकता है। आप आत्मविश्वास से भरे रहेंगे। कार्यक्षेत्र में बढ़ोत्तरी के लिये आपको नया मौका मिल सकता है। इस राशि के छात्र अगर योजना बनाकर तैयारी करेंगे, तो करियर में उन्नति के अच्छे रास्ते खुल सकते हैं। परिवार वालों के साथ कुछ समय बिताने से रिश्तों में मधुरता बढ़ेगी। व्यापार में कोई नया अनुबंध हो सकता है।

कन्या राशिः आज आपका दिन मिला-जुला रहेगा। बिजनेस के सिलसिले में आपको यात्रा करनी पड़ सकती है। किसी से बात करते समय आपको विनम्र स्वभाव का प्रयोग करना चाहिए। इससे लोगों पर आपका प्रभाव पड़ेगा। अगर आप बिल्डर हैं, तो आज आपको बहुत ही सोच-समझ कर निवेश करना चाहिए।

तुला राशिः आज आपका बढ़ा हुआ मनोबल किसी जरूरी काम में आपको सफलता दिलाएगा। आपका दिन बेहतर रहेगा। माता-पिता के सहयोग से कारोबार के क्षेत्र में वृद्धि होगी। आपकी आर्थिक स्थिति मज़बूत रहेगी। आज आपको कुछ मनोरंजक कार्य करने का मौका मिल सकता है।

वृश्चिक राशिः आज आपके जीवन में कुछ नए बदलाव हो सकते हैं। कारोबार में कोई शुभ समाचार मिल सकता है। आपकी किसी पुराने मित्र से मुलाकात हो सकती है। आप जीवनसाथी के साथ कहीं घूमने का प्लान भी बना सकते हैं। रिश्ते बेहतर बने रहेंगे।

धनु राशिः आज कामकाज के मामले में परिस्थिति बेहतर रहेगी। आप खुद को सेहतमंद महसूस करेंगे। आपका दिन उत्तम रहेगा। जीवनसाथी के साथ किसी धार्मिक स्थल की यात्रा पर जा सकते हैं, इससे आपके रिश्तों की मजबूती बरकरार रहेगी। आपकी आर्थिक स्थिति भी मजबूत होगी। माता-पिता आपकी मेहनत से खुश रहेंगे।

मकर राशिः आज आपका दिन सामान्य रहेगा। काम में जीवनसाथी की सलाह फायदेमंद हो सकती है। वित्तीय मामलों में समझदारी से काम लेना आपके लिए बेहतर रहेगा। बिजनेस में नई परियोजनाओं को लागू करने से आपको फायदा हो सकता है। माता-पिता की सेहत में सुधार होगा।

कुम्भ राशिः आज आपका दिन फेवरेबल रहेगा। आपको किस्मत का पूरा-पूरा सहयोग प्राप्त होगा। आपकी आर्थिक स्थिति मजबूत रहेगी। आपको कारोबार में धन लाभ होगा। आपकी किसी ऐसे व्यक्ति से मुलाकात हो सकती है, जो भविष्य में आपको काफी फायदा दिलाएगा। आपकी क्रिएटिविटी से लोग प्रभावित होंगे।

मीन राशिः आपका दिन शानदार रहेगा। अपने जीवन को बेहतर बनाने के लिये आज आपको कुछ अच्छे मौके मिल सकते हैं। संतान की ओर से आपको अच्छी खुशखबरी मिल सकती है। घर के किसी काम को लेकर आप कोई बड़ा फैसला कर सकते हैं। पारिवारिक जीवन में सुख-शांति बनी रहेगी। दफ्तर में कोई उलझा हुआ मामला आज सुलझ सकता है। आज ऑफिस के किसी काम से आपको दूसरे शहर में यात्रा करनी पड़ सकती है। आपको बिजनेस संबंधी नये लोगों से जुड़ने का मौका मिल सकता है।

बिहार में दसवीं बार नीतीश कुमार की वापसी, नई सरकार, नए समीकरण और 2026 की राजनीतिक पृष्ठभूमि

कांतिलाल मांडोत

बिहार की राजनीति में एक बार फिर इतिहास दोहराया गया है। नीतीश कुमार ने दसवीं बार मुख्यमंत्री पद की शपथ लेकर यह साबित कर दिया कि राज्य की राजनीति में उनकी पकड़, उनका अनुभव और उनका संतुलन आज भी उतना ही मजबूत है जितना दो दशक पहले हुआ करता था। शपथ ग्रहण समारोह में जिस तरह प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी ने गमछा हिलाकर उत्साह जताया उससे उपस्थित भावविभोर हो गए।इस बीच केंद्रीय गृहमंत्री अमित शाह, भाजपा अध्यक्ष जे.पी. नड्डा और भाजपा के हजारों कार्यकर्ताओं ने भाग लिया। उसने न केवल बिहार की राजनीति बल्कि आने वाले वर्षों के राष्ट्रीय चुनावी समीकरणों को भी एक संदेश दिया है।इस समारोह में डिप्टी सीएम के रूप में सम्राट चौधरी और विजय मिश्रा ने शपथ ली। कुल मिलाकर 26 मंत्रियों की टीम बनी जिसमें 14 भाजपा कोटे से, 8 जदयू से, लोजपा, हम और कुशवाहा की पार्टी से एक-एक मंत्री शामिल किए गए। खास बात यह रही कि मंत्रिमंडल में एक मुस्लिम मंत्री को भी स्थान दिया गया, जिसे संतुलन और सामाजिक प्रतिनिधित्व की दृष्टि से महत्वपूर्ण माना जा रहा है। हरियाणा, राजस्थान, मेघालय,यूपी,गुजरात, नागालैंड, ओडिशा, दिल्ली सहित कई राज्यों के मुख्यमंत्रियों की मौजूदगी ने इस आयोजन को राष्ट्रीय स्तर पर विशेष महत्व दिया। स्पष्ट है कि भाजपा-जदयू गठबंधन न केवल बिहार को लेकर, बल्कि आने वाले समय में राष्ट्रीय राजनीतिक प्रबंधन के लिए भी नई रणनीति के साथ आगे बढ़ रहा है। नई सरकार के गठन के बाद बिहार के सामने बड़ी चुनौतियाँ भी है। आर्थिक संतुलन जरूरी है। आय और खर्च को संतुलित करने की कठिन चुनौती भी मुह फाडे खड़ी है। बिहार लंबे समय से आर्थिक रूप से पिछड़े राज्यों में गिना जाता रहा है। राज्य का राजस्व संग्रह कम, केंद्र पर निर्भरता अधिक और कल्याणकारी योजनाओं पर भारी खर्च इसकी आर्थिक संरचना को अस्थिर बनाता है। नई सरकार के सामने सबसे बड़ी चुनौती है।जिसमे आय के नए स्रोत बनाना,निवेश आकर्षित करनाऔरऔद्योगिक विकास के लिए अनुकूल वातावरण तैयार करना महत्वपूर्ण होगा। बिहार की सबसे बड़ी समस्या यह रही है कि यहाँ उद्योग-धंधों की कमी के कारण राजस्व का मजबूत आधार नहीं बन पाया। नई सरकार को डोमेस्टिक और ग्लोबल निवेशकों का भरोसा जीतने के लिए प्रशासनिक सुधार, भूमि सुधार और तेज मंजूरी प्रणाली बनानी होगी। शिक्षा और स्वास्थ्य सुधार में भी सरकार को ध्यान देना होगा। बिहार की युवा आबादी बड़ी है, लेकिन शिक्षा व्यवस्था की कमियाँ और स्वास्थ्य अधोसंरचना की खामियाँ अब भी चुनौती बनी हुई हैं। नीतीश कुमार की सरकार ने वर्षों में कई सुधार किए, लेकिन अपेक्षाओं के हिसाब से अभी भी बहुत कुछ किया जाना बाकी है। नई सरकार को शिक्षकों की कमी दूर करनी होगी।स्कूलों में बुनियादी सुविधाएं बेहतर करनी होंगी।जबकि विश्वविद्यालयों में

शोध और तकनीकी शिक्षा पर जोर देना होगा।जिला अस्पतालों में डॉक्टरों की संख्या और सुविधाओं को बढ़ाना होगा। कानून-व्यवस्था हमेशा से बिहार के लिए एक निर्णायक राजनीतिक मुद्दा रहा है। हाल के वर्षों में सुधार के दावे हुए, लेकिन अब भी अपराध, भूमि विवाद, अवैध शराब कारोबार और सामुदायिक तनाव की घटनाएं सामने आती रहती हैं। नीतीश-भाजपा सरकार के सामने लक्ष्य बड़ा है। पुलिस आधुनिकीकरण, अपराध नियंत्रण में तकनीकी उपयोगऔर तेज न्याय प्रणाली के साथ प्रशासनिक जवाबदेही बढ़ानी होगी।बिहार में सड़कों, पुलों और ग्रामीण कनेक्टिविटी में पिछले दो दशकों में काफी काम हुआ है, लेकिन औद्योगिक गलियारों, बड़े हाईवे नेटवर्क, बिजली वितरण और जल प्रबंधन की दिशा में अभी भी बड़े निवेश की जरूरत है। नई सरकार को केंद्र के साथ मिलकर इन क्षेत्रों में तेज़ी लानी होगी, ताकि रोजगार और औद्योगिक विकास दोनों को गति मिल सके। नीतीश की वापसी से बिहार को क्या राजनीतिक लाभ ?नीतीश कुमार का राजनीतिक अनुभव और प्रशासनिक क्षमता बिहार के लिए एक संतुलनकारी भूमिका निभाती रही है। भाजपा और जदयू का तालमेल फिर मजबूत हुआ है, जो राज्य में स्थिरता का संकेत देता है।निर्णय लेने की गति बढ़ाता है और विकास योजनाओं की निरंतरता बनाए रखता है।अब केंद्र और राज्य की एक जैसी विचारधारा वाली सरकार के कारण केंद्र से मिलने वाली सहायता बढ़ेगी। बड़े इंफ्रास्ट्रक्चर प्रोजेक्ट्स को तेजी मिलेगी।निवेशकों का भरोसा और मजबूत होगा। यह तालमेल आने वाले वर्षों में बिहार को आर्थिक मजबूती की दिशा में आगे ले जा सकता है।

https://t.me/AllNewsPaperPaid

बिज़नेस स्टैंडर्ड
वर्ष 18 अंक 236

खाई पाटना जरूरी

सोलहवें वित्त आयोग ने इस सप्ताह अपनी रिपोर्ट सरकार को सौंप दी। रिपोर्ट को अब तक सार्वजनिक नहीं किया गया है, हालांकि उम्मीद है कि इसे 2026 के बजट सत्र में संसद के समक्ष प्रस्तुत किया जाएगा। सोलहवें वित्त आयोग की अनुशंसाएं अप्रैल 2026 से शुरू होने वाले पांच वर्ष के लिए होंगी। ये अनुशंसाएं केंद्र और राज्यों के बीच कर राजस्व के वितरण को आकार देने के अलावा विभिन्न श्रेणियों के तहत राज्यों के बीच फंड आवंटन से संबंधित होंगी। इस संबंध में यह बात ध्यान देने लायक है कि दक्षिण भारत के कई राज्यों ने अपनी घटती हिस्सेदारी को लेकर चिंता जताई है। इसी समाचार पत्र में प्रकाशित एक हालिया विश्लेषण दिखाता है कि केंद्र सरकार के कर बंटवारे में दक्षिण भारत के पांच राज्यों की संयुक्त हिस्सेदारी 2010-11 के 19 फीसदी से घटकर 2025-26 में 16 फीसदी रह गई। ऐसे में संभव है कि यह मुद्दा फिर से उठे क्योंकि सोलहवें वित्त आयोग की अनुशंसाओं में अतीत से किसी खास बदलाव की बात नहीं कही गई है।

दक्षिण के राज्यों की चिंताएं समझी जा सकती हैं, लेकिन एक संघीय ढांचे में हमेशा यह उम्मीद रहेगी कि जो राज्य पिछड़ रहे हैं उन्हें मदद पहुंचाई जाएगी और यह सुनिश्चित किया जाएगा कि अधिक समतापूर्ण विकास संभव हो सके। इसके अलावा आंकड़े दिखाते हैं कि प्रति व्यक्ति आधार पर दक्षिण भारत के राज्यों के संसाधन बेहतर हैं। उदाहरण के लिए चालू वर्ष में केरल की प्रति व्यक्ति व्यय 86,000 रुपये से अधिक है, बिहार में यह केवल 24,000 रुपये के करीब है। ध्यान देने वाली बात है कि 2020-21 और 2025-26 के बीच देश के सबसे गरीब राज्यों में प्रति व्यक्ति व्यय आय बढ़कर करीब दोगुना हो गया है। हालांकि इसका आधार कम रहा है जबकि अमीर दक्षिण भारतीय राज्यों में यह समेकित स्तर पर 59 फीसदी तक बढ़ा है। यद्यपि, व्यय में तेज वृद्धि आय में तेज वृद्धि में परिवर्तित नहीं हुई है। दक्षिणी राज्यों की औसत प्रति व्यक्ति आय 2009-10 में गरीब राज्यों की तुलना में 2.1 गुना थी, जो अब बढ़कर 2.8 गुना हो गई है। इससे संकेत मिलता है कि गरीब राज्यों को विकास कार्य करने में सक्षम बनाने के लिए कर बंटवारे में अधिक हिस्सेदारी आवश्यक हो सकती है, लेकिन यह तीव्र आर्थिक वृद्धि के लिए पर्याप्त नहीं है। तीव्र आर्थिक वृद्धि ही प्रति व्यक्ति आय बढ़ाकर इस अंतर को कम करने में मदद कर सकती है।

यह एक जटिल नीतिगत चुनौती पेश करता है जिससे पिछड़ रहे राज्यों और केंद्र सरकार दोनों को मिलकर जूझना होगा। क्योंकि अकेले राजकोषीय हस्तांतरण शायद जरूरी बदलाव लाने में संभव न हो सके। इसका कोई आसान उत्तर नहीं है। यह कहा जा सकता है कि इन क्षेत्रों की ओर और अधिक निजी निवेश लाया जा सकता है लेकिन कारोबारी इकाइयां शायद बेहतर राज्यों में ही निवेश करना पसंद करें। ऐसा इसलिए क्योंकि उन राज्यों में उन्हें बेहतर माहौल मिल सकता है। ऐसे में यह महत्त्वपूर्ण होगा कि पिछड़ रहे राज्य अपने संसाधनों का इस्तेमाल ज्यादा बेहतर तरीके से करें और निवेश जुटाने के लिए जरूरी अधोसंरचना तैयार करें। उन्हें कारोबारियों की चिंताओं को भी सक्रियता से दूर करना होगा ताकि कारोबारी सुगमता में सुधार किया जा सके।

केंद्र और राज्यों के समक्ष एक और चुनौती है। कुछ राज्यों पर बहुत अधिक ऋण है, जो विकास की संभावनाओं को प्रभावित कर सकता है। पीआरएस लेजिस्लेटिव रिसर्च की हालिया रिपोर्ट के अनुसार, 19 राज्यों में बकाया देनदारियां सकल राज्य घरेलू उत्पाद (जीएसडीपी) के 30 फीसदी से अधिक हैं, जिनमें केरल भी शामिल है। पंजाब और हिमाचल प्रदेश जैसे राज्यों में यह जीएसडीपी के 40 फीसदी से भी अधिक है। इस समस्या से निपटने के लिए एक तंत्र की आवश्यकता होगी। राज्यों में अधिक ऋण से सामान्य सरकारी ऋण और उधारी की जरूरतें बढ़ जाती हैं, जिससे पूरी अर्थव्यवस्था के लिए धन की लागत प्रभावित होती है। राज्यों के बीच आय अंतर को कम करना और ऊंचे स्तर के ऋण मसले का समाधान करना प्रमुख नीतिगत चुनौतियां हैं। यह देखना दिलचस्प होगा कि वित्त आयोग इन मुद्दों से कैसे निपटता है।

वित्तीय संकट से कैसे बचें आवास

व्यक्तिगत ऋणशोधन संरक्षण एक दशक से लंबित रहने के कारण मुश्किल दौर में कमजोर वर्गों के आवास भी संकट में पड़ जाते हैं। बता रहे हैं एमएस साहू और राघव पांडेय

एक ऐसे व्यक्ति के बारे में सोचिए जिसका एक छोटा सा घर है और जो एक छोटा कारोबार शुरू करने के लिए मामूली कर्ज लेता है। शायद किसी गलती की वजह से नहीं बल्कि विपरीत आर्थिक हालात के कारण वह अपने ऋण की किस्त चुकाने में चूक जाता है। इस हालत में क्या उसका घर छिन जाना चाहिए और उसे और उसके परिवार को केवल इसलिए बेघर कर दिया जाना चाहिए क्योंकि उसने उद्यमिता शुरू करने का प्रयास किया? ऋणशोधन अक्षमता और दिवालिया संहिता 2016 (आईबीसी) कानून इसका जवाब सहानुभूति के साथ देता है। आईबीसी का भाग तीन, जो व्यक्तिगत दिवालियापन से संबंधित है, एक मानवीय सुरक्षा उपाय को सम्मिलित करता है जिससे देनदार के एकमात्र आवासीय इकाई की रक्षा होती है। हालांकि, यह संरक्षण लगभग एक दशक से निष्क्रिय बना हुआ है क्योंकि भाग तीन अभी तक अधिसूचित नहीं हुआ है, जिससे उन लोगों को कोई उपाय उपलब्ध नहीं हो पा रहा है, जिनकी रक्षा करने का इसका उद्देश्य है।

दो हालिया घटनाओं ने इस संरक्षण को प्रभावी बनाने से संबंधित संवैधानिक और विधायी तर्क को बढ़ा दिया है। पहला, मानसी बरार फर्नांडिस (2025), मामले में सर्वोच्च न्यायालय ने दोहराया कि आवास का अधिकार संविधान के अनुच्छेद 21 के तहत दिए गए जीवन के अधिकार का अभिन्न अंग है। न्यायालय ने जोर दिया कि एक घर केवल सिर की छत नहीं होता है बल्कि इसके साथ उम्मीदें और सपने भी जुड़े होते हैं। यह परिवार को सुरक्षित जगह देता है और जीवन की अनिश्चितताओं से बचाव मुहैया कराता है। इस मामले ने उन घर खरीदारों के साथ बार-बार होने वाले अन्याय को उजागर किया, जिन्होंने अपनी जीवनभर की बचत आवासीय परियोजनाओं में निवेश की, लेकिन डेवलपर के चूक जाने के कारण असहाय छोड़ दिए गए।

न्यायालय ने उस विधायी पहल को मान्यता दी, जिससे घर खरीदारों को भी दिवालियापन कार्यवाही में आवाज मिली ताकि वे डेवलपर्स के वित्तीय संकट में फंसने पर अपने घर सुरक्षित कर सकें। यह दलील संवैधानिक न्यायशास्त्र की उस मजबूत सोच पर आधारित है, जो आवास को संविधान की नैतिक संरचना का हिस्सा मानती है। ओल्गा टेलिस (1985) मामले में न्यायालय ने माना कि आजीविका और आवास जीवन के अधिकार के अविभाज्य पहलू हैं, और अनुच्छेद 21 को एक सकारात्मक गारंटी के रूप में पढ़ा। चमेली सिंह (1996) मामले में न्यायालय ने घर को उस स्थान के रूप में वर्णित किया जहां व्यक्ति शारीरिक, मानसिक, बौद्धिक और आध्यात्मिक रूप से विकसित हो सकता है। इन दोनों निर्णयों ने मिलकर राज्य के इस संवैधानिक दायित्व की पुष्टि की कि वह ऐसे कानूनी ढांचे बनाए और लागू करे जो आवास को सुरक्षित करें और मकान खरीदारों के शोषण को रोकें। दूसरा, गत 9 अक्टूबर को केरल विधान सभा ने केरल एकल आवास संरक्षण विधेयक, 2025 पारित किया, जिसका उद्देश्य कमजोर परिवारों को छोटे ऋणों की वसूली में जब्ती से अपने एकमात्र घर को खोने से बचाना है। यह विधेयक लगभग 5 लाख रुपये तक के साधारण ऋणों को संरक्षण प्रदान करता है और ब्याज तथा दंड सहित बकाया राशि को लगभग 10 लाख रुपये तक सीमित करता है। पात्रता आर्थिक कमजोरी के आधार पर तय की गई है: उधारकर्ता के पास शहरी क्षेत्रों में पांच सेंट (2,178 वर्ग फीट) से अधिक भूमि या ग्रामीण क्षेत्रों में दस सेंट (4,356 वर्ग फीट) से अधिक भूमि नहीं होनी चाहिए, और उसके पास वैकल्पिक संपत्तियों तथा वास्तविक पुनर्भुगतान क्षमता का अभाव होना चाहिए। कानून जिला और राज्य स्तरीय समितियों का गठन करता है जो मामलों का परीक्षण करेंगी, ऋणदाताओं से बातचीत करेंगी और जरूरी होने पर वित्तीय सहायता की अनुशंसा करेंगी ताकि मामलों को निपटाया जा सके। इसका डिजाइन लक्षित है और कर्जमाफी के बजाय लक्ष्य यह है कि छोटे से कर्ज के बदले लोगों को अपना घर न गंवाना पड़े।

आईबीसी का भाग तीन लोगों, एकल स्वामित्व और साझेदारी फर्मों की वित्तीय कठिनाइयों को सुलझाने की प्रक्रिया तय करता है और जहां आवश्यक हो, उनकी परिसंपत्तियों का नकदीकरण करता है।

हालांकि, यह कुछ संपत्तियों को दिवालियापन प्रक्रिया की पहुंच से बाहर रखता है। इनमें आजीविका के लिए आवश्यक व्यावसायिक साधन, बुनियादी घरेलू फर्नीचर और सामान, तथा भावनात्मक या धार्मिक महत्व के सीमित व्यक्तिगत आभूषण शामिल हैं। विशेष रूप से, यह एकल, बंधनमुक्त आवासीय इकाई को, जिसका मूल्य निर्धारित सीमा तक हो, दिवालियापन प्रक्रिया से बाहर रखता है। इसके पीछे सिद्धांत परिसंपत्ति को संरक्षण देना नहीं, बल्कि सम्मानजनक जीवन के लिए न्यूनतम आधार बनाए रखना, दोनों पक्षों के हितों में संतुलन स्थापित करना और लेनदारों को उनकी देय राशि पूर्वानुमेय तरीके से दिलाना, साथ ही यह सुनिश्चित करना कि प्रक्रिया लोगों को बेघर न कर दे।

चूंकि आईबीसी का भाग तीन अभी तक लागू नहीं हुआ है, छोटे व्यापारिक ऋणों या व्यक्तिगत उधारी वाले व्यक्ति अपने एकमात्र आवासीय इकाई की सुरक्षा के लिए संहिता का सहारा नहीं ले सकते। ऐसी परिवारों के लिए भाग तीन तक पहुंच बहुत अहम साबित हो सकती है। वर्तमान में उनके पास औपनिवेशिक काल के कानून हैं, अर्थात प्रांतीय दिवालियापन अधिनियम, 1920 और प्रेसीडेन्सी टाउन्स दिवालियापन अधिनियम, 1909। ये पुराने ढांचे अधिकांशतः अप्रभावी हैं और आधुनिक आर्थिक वास्तविकताओं के अनुरूप नहीं हैं। भाग तीन को अधिसूचित करने से व्यक्तिगत देनदारों को न्यायिक प्राधिकरण के समक्ष जाने, पुनर्भुगतान योजनाओं पर बातचीत करने और उचित प्रयास के बाद मुक्ति प्राप्त करने का अवसर मिलेगा। यह लेनदारों और देनदारों के लिए एक पारदर्शी मंच प्रदान करेगा, जहां वे न्यायिक निगरानी में बातचीत कर सकें, जिससे वर्तमान में असंगठित प्रतिक्रियाओं वाले क्षेत्र में पूर्वानुमान लगाने की क्षमता आएगी। ऋणदाताओं के लिए, संरक्षित संपत्तियों के बारे में स्पष्टता जोखिम मूल्यांकन को बेहतर बनाती है और जिम्मेदार ऋण वितरण को प्रोत्साहित करती है। परिवारों के लिए, यह उन्हें ईमानदार समाधान की संभावना लौटाता है, बिना निर्धनता के दायरे में चले जाने के खतरे के।

इसके अतिरिक्त एक व्यावहारिक प्रशासनिक लाभ भी है। एक सक्रिय व्यक्तिगत दिवालियापन व्यवस्था विवादों को एक विशेष मंच पर ले जाती है, जिससे अनेक कार्यवाहियों और सामाजिक लागतों में कमी आती है। पंचाट मुद्दों को समेकित कर सकता है, पुनर्भुगतान योजनाओं की निगरानी कर सकता है और अनुपालन पर नजर रख सकता है, साथ ही परिवारों को नए सिरे से अर्थव्यवस्था में प्रवेश करने में सक्षम बना सकता है। भाग तीन के अंतर्गत नए सिरे से शुरुआत करने की प्रक्रिया विशेष रूप से उन व्यक्तियों की पीड़ा को कम करेगी जिनकी लगभग कोई आय या परिसंपत्ति नहीं है, साथ ही उन्हें असहनीय ऋण से बाहर निकलने का एक संरचित और गरिमापूर्ण मार्ग प्रदान करेगी। यदि भाग तीन परिचालित होता तो केरल सरकार को अलग कानून बनाने की जरूरत नहीं होती। अगर देरी जारी रही तो अन्य राज्य सरकारें भी ऐसे ही हल तलाश करेंगी जिससे निरंतरता पर असर होगा और कमजोर नतीजे हासिल होंगे। इसमें बंटा हुआ राष्ट्रीय ऋण बाजार भी शामिल है। हर बीतते वर्ष के साथ संवैधानिक वादे और व्यावहारिक संरक्षण के बीच की दूरी बढ़ती जा रही है। ऐसा उन परिवारों की कीमत पर हो रहा है जो पहले ही वित्तीय मुश्किलों से जूझ रहे हैं।

आखिर में, संवैधानिक आयाम पर बल देना आवश्यक है। न्यायपालिका इसकी बार-बार पुष्टि करती है कि आवास को जीवन के अधिकार का अभिन्न हिस्सा माना जाए और विधायिका एक ऐसा वैधानिक ढांचा प्रदान करती है जो ऋणी व्यक्तियों के अधिकार को ठोस रूप से आगे बढ़ाता है, जिसमें उनके आवासीय इकाई की सुरक्षा भी शामिल है। ऐसे में इसके क्रियान्वयन में कार्यपालिका की ओर से अनिश्चित विराम संवैधानिक निष्ठा और नैतिक जिम्मेदारी दोनों को कमजोर करता है।

(लेखक नैशनल लॉ यूनिवर्सिटी दिल्ली में क्रमशः पूर्व विशिष्ट प्रोफेसर और सहायक प्रोफेसर हैं। ये उनके निजी विचार हैं)

निवेशकों, जमाकर्ताओं में भरोसा बढ़ाने के उपाय

बैंकिंग साख

तमाल बंद्योपाध्याय

दो माह के अंतराल के बाद अक्टूबर में डीमैट खाता खोलने वालों की संख्या बढ़ी। अक्टूबर में 30 लाख नए खाते जुड़े और कुल डीमैट खातों की तादाद 21 करोड़ से अधिक हो गई। इसके पहले जुलाई में करीब 30 लाख नए डीमैट खाते खुले थे जो दिसंबर 2024 के बाद सबसे बड़ी मासिक वृद्धि थी। जनवरी 2024 में सबसे अधिक 46.8 लाख खाते जुड़े थे। विशिष्ट निवेशकों की संख्या 13.5 करोड़ से अधिक हो गई जो वित्त वर्ष 2019 के आंकड़ों की तुलना में साढ़े तीन गुना थी। हाल ही में बाजार नियामक सेबी के चेयरमैन तुहिन कांत पांडेय ने भी कहा था कि इससे पता चलता है कि निवेशकों को हमारे बाजारों में कितना भरोसा है।

विशिष्ट निवेशकों की संख्या लगातार बढ़ रही है, फिर भी बाजार कई लोगों के लिए निवेश का आकर्षक साधन नहीं है। सेबी द्वारा हाल ही में किए गए एक राष्ट्रव्यापी सर्वेक्षण ने इस पर प्रकाश डाला, जिसमें लगभग 90,000 परिवारों को शामिल किया गया था और जो 400 शहरों तथा 1,000 गांवों में फैला था। लगभग 63 फीसदी भारतीय परिवार (करीब 21.3 करोड़ परिवार) कम से कम एक प्रतिभूति उत्पाद मसलन म्युचुअल फंड, शेयर, एक्सचेंज-ट्रेडेड फंड और डेरिवेटिव्स के बारे में जानते हैं। फिर भी, उनमें से केवल लगभग 9.5 फीसदी, यानी लगभग 3.2 करोड़ परिवार ही बाजार में निवेश करते हैं।

शहरी भागीदारी 6 फीसदी की ग्रामीण भागीदारी से काफी अधिक है, करीब 15 फीसदी। इससे पता चलता है कि वित्तीय पहुंच में कितना अंतर है। विशिष्ट निवेशक बढ़े हैं लेकिन कम से कम 85 फीसदी भारतीय परिवार अभी भी बाहर हैं। एक अन्य निष्कर्ष यह था कि निवेशकों का ज्ञान अभी भी सीमित है। केवल करीब 36 फीसदी सक्रिय निवेशक ही बाजार योजनाओं और जोखिम की थोड़ी बहुत समझ रखते हैं। जानकारी की यह कमी खतरा उत्पन्न करती है और निवेशकों को संभावित नुकसान या धोखाधड़ी के प्रति संवेदनशील बनाती है। अक्सर कम अनुभव वाले निवेशक सुनी सुनाई बातों या ऑनलाइन सलाहों पर अमल करते हैं और जोखिम को समझ नहीं पाते हैं। इसके अलावा भ्रामक विज्ञापन और 'गारंटीशुदा रिटर्न' के वादे भी अक्सर जोखिम से बचने वाले बचतकर्ताओं को उलझाते हैं।

आसान ऑनलाइन प्लेटफॉर्म्स से प्रेरित होकर निवेशकों की एक नई लहर जिनमें से लगभग 43 फीसदी की उम्र 30 वर्ष से कम है वायदा और विकल्प (एफऐंडओ) ट्रेडिंग में उतर गई है। सेबी के अध्ययनों से पता चलता है कि वित्त वर्ष 2022 से 2024 के बीच लगभग 93 फीसदी खुदरा या छोटे एफऐंडओ कारोबारियों को (लागत सहित) शुद्ध नुकसान हुआ। लगभग 1.13 करोड़ कारोबारियों ने सामूहिक रूप से करीब 1.81 लाख करोड़ रुपये का नुकसान उठाया। वित्त वर्ष 2024 में, व्यक्तिगत कारोबारियों ने कुल मिलाकर लगभग 75,000 करोड़ रुपये एफऐंडओ ट्रेडिंग में गंवाए। यानी औसतन लगभग 46,000 रुपये प्रति व्यक्ति। बाजार नियामक के कई उपायों के बाद विशिष्ट एफऐंडओ खुदरा कारोबारियों की तादाद 2025 के मध्य में कम हुई। वित्त वर्ष 25 में भी इस क्षेत्र में 91 फीसदी खुदरा कारोबारियों को नुकसान उठाना पड़ा।

सेबी निवेशकों के सर्वेक्षण ने उन कारणों की पहचान की जिनकी वजह से परिवार बाजार से बाहर रहते हैं। लगभग 74 फीसदी गैर-निवेशकों ने स्वीकार किया कि योजनाओं की जटिलता और जानकारी की कमी उन्हें पैसा लगाने से रोकती है, और 73 फीसदी ने हानि के डर को अपनी हिचकिचाहट का कारण बताया। आधे से अधिक (51 फीसदी) ने वित्तीय प्रणाली में भरोसे की कमी और पारदर्शिता को लेकर चिंताओं की ओर इशारा किया। ऊंचे लेन-देन खर्च, अस्थिर बाजार और नकारात्मक भावना भी लोगों को पीछे खींचते हैं। हाल ही में आयोजित बिज़नेस स्टैंडर्ड बीएफएसआई समिट में, तुहिन कांत पांडेय ने जोर देकर कहा कि नियामक भ्रामक 'फिनफ्लुएंसर्स' (वित्तीय इन्फ्लुएंसर्स) के खिलाफ कड़ी कार्रवाई करेगा। सेबी अब तक एक लाख से अधिक भ्रामक पोस्ट हटा चुका है और हर महीने लगभग 5,000 पोस्ट हटाता जा रहा है। सोशल मीडिया पर मौजूद फिनफ्लुएंसर्स में से केवल लगभग 2 फीसदी ही नियामक के साथ पंजीकृत हैं।

निवशकों के संरक्षण से जुड़े दो उपाय इसके उदाहरण हैं। 1 अक्टूबर से, सभी सेबी-पंजीकृत ब्रोकर, म्युचुअल फंड, डिपॉजिटरी और अन्य मध्यस्थों को निवेशकों से भुगतान प्राप्त करने के लिए 'वैलिडेटेड यूपीआई हैंडल्स' का उपयोग करना अनिवार्य होगा। इन नए यूपीआई आईडी में राष्ट्रीय भुगतान निगम (एनपीसीआई) द्वारा जारी किया गया अनिवार्य '@वैलिड' प्रत्यय शामिल होगा, साथ ही एक श्रेणी कोड भी होगा (जैसे ब्रोकर के लिए 'डॉटबीआरके', म्युचुअल फंड के लिए 'डॉटएमएफ')। प्रमुख ब्रोकरेज कंपनियां, जो खुदरा लेनदेन का कम से कम 90 फीसदी संभालती हैं, और सभी म्युचुअल फंड पहले ही इन हैंडल्स को अपना चुके हैं। महत्त्वपूर्ण बात यह है कि जब निवेशक किसी @वैलिड यूपीआई हैंडल पर पैसा भेजेंगे, तो उन्हें अपने भुगतान स्क्रीन पर हरे रंग का 'थम्ब्स-अप' दिखाई देगा। यह दृश्य पुष्टि दर्शाती है कि धनराशि एक वैध, सेबी-पंजीकृत इकाई को जा रही है। प्रत्येक मध्यवर्ती के पास एक क्यूआर कोड भी होगा जिसमें यही 'थम्ब्स-अप' प्रतीक होगा ताकि किसी भी तरह की भ्रम की स्थिति से बचा जा सके।

इसके साथ ही, सेबी ने एक 'सेबी चेक' टूल पेश किया है। एक वेबसाइट या मोबाइल ऐप के माध्यम से निवेशक अब किसी मध्यस्थ की सेबी पंजीकरण स्थिति, बैंक खाता विवरण या यूपीआई आईडी तुरंत सत्यापित कर सकते हैं। उदाहरण के लिए, पैसा स्थानांतरित करने से पहले निवेशक ब्रोकर का खाता नंबर या @वैलिड यूपीआई हैंडल 'सेबी चेक' में दर्ज कर सकते हैं। यह तुरंत पुष्टि कर देगा कि विवरण किसी पंजीकृत मध्यस्थ से मेल खाते हैं या नहीं। यदि नहीं, तो निवेशक को तुरंत चेतावनी मिलेगी, जिससे धोखेबाजों को भुगतान करने से बचाव होगा।

'@वैलिड' हैंडल और सेबी चेक मिलकर निवेशकों के लिए लेनदेन में एक पारदर्शी, बहुस्तरीय सुरक्षा प्रणाली तैयार करते हैं। दोहराने का जोखिम उठाते हुए, यहां मुख्य विवरण दिए जा रहे हैं।

सत्यापित हैंडल: केवल सेबी-पंजीकृत मध्यस्थ, जैसे ब्रोकर और म्यूचुअल फंड, ही '@वैलिड' हैंडल का उपयोग कर सकते हैं। प्रत्येक हैंडल में एक श्रेणी-विशिष्ट प्रत्यय भी होगा ।

दृश्यात्मक पुष्टि: जब कोई निवेशक भुगतान करता है तो यूपीआई की भुगतान स्क्रीन पर एक हरा तिकोना थम्ब्स-अप आइकन दिखता है जो बताता है कि भुगतान एक पुष्ट मध्यवर्ती के पास जा रहा है।

क्यूआर कोड प्रमाणन: मध्यवर्ती क्यूआर कोड भी मुहैया कराएगा जो थम्ब्स-अप आइकन दिखाएगा, जिसे स्कैन करके निवेशक भुगतान कर सकेंगे।

सेबी के सर्वेक्षण से संकेत मिलता है कि 'जानकार लेकिन अभी तक निवेश न करने वाले' परिवारों की संख्या बढ़ रही है, जिनमें से कम से कम 22 फीसदी अगले वर्ष बाजार में प्रवेश करने की योजना बना रहे हैं। वे पूंजी बाजार से जुड़ने के इच्छुक हैं। ज्ञान की कमी और रूढ़िवादी दृष्टिकोण के अलावा, ऑनलाइन धोखाधड़ी भी उनके उत्साह को कम करती है। भ्रामक इन्फ्लुएंसर्स पर प्रतिबंध लगाने से लेकर वैध भुगतान प्रणालियां शुरू करने और निवेशक शिक्षा कार्यक्रमों तक सेबी की व्यापक प्रतिक्रिया भरोसा बनाने में मदद करेगी और बचतकर्ताओं को निवेशकों में बदलने की दिशा में आगे बढ़ाएगी।

भारतीय रिजर्व बैंक पहले ही सभी विनियमित संस्थाओं के लिए विस्तृत धोखाधड़ी जोखिम प्रबंधन ढांचा लागू कर चुका है। क्या बैंकिंग नियामक सभी ऑनलाइन जमा लेनदेन के लिए एक विशेष 'चेक' टूल पेश करने पर भी विचार कर सकता है?

(लेखक जन स्मॉल फाइनैंस बैंक लिमिटेड के वरिष्ठ सलाहकार हैं। ये उनके निजी विचार हैं)

आपका पक्ष

साइबर अपराध रोकने के लिए नियमित प्रशिक्षण हो

'डिजिटल अरेस्ट' से संबंधित, हाल ही में एक और बड़ी खबर आई है कि कर्नाटक के बेंगलूरु में एक 57 वर्षीय महिला ने एक लंबी 'डिजिटल गिरफ्तारी' की धोखाधड़ी में 31.83 करोड़ रुपये गंवा दिए। दरअसल, हमारे देश में 'डिजिटल अरेस्ट' की घटनाएं लगातार बढ़ती जा रही हैं, जिनमें शातिर लोगों द्वारा उच्च शिक्षित व शीर्ष पदों पर आसीन/सेवानिवृत्ति लोगों को, कई घंटों तक आसानी से गिरफ्त में लेकर करोड़ों रुपयों की ठगी की जा रही है। वास्तव में, इंटरनेट की व्यापकता और आम लोगों तक उसकी आसान पहुंच के कारण ऑनलाइन कारोबार, कामकाज व अभिव्यक्ति का दायरा दुनिया भर में तेजी से बढ़ रहा है, लेकिन इस सुगमता के कारण साइबर क्राइम व अभद्रता के रूप में आई नई चुनौती भी विकराल हो रही है। दरअसल कंप्यूटर की दुनिया ऐसी है, जिसमें अनेक प्रॉक्सी सर्वर होते हैं और विश्वभर में फैले इंटरनेट के जाल पर दुनिया की कोई भी सरकार हमेशा नजर नहीं रख सकती है। ऐसे में जागरूकता ही बचाव है। हम खुद भी जागरूक बनें और अपने आसपास के इंटरनेट इस्तेमालकर्ताओं को भी जागरूक बनाएं। किसी भी अवांछित लिंक या ईमेल को न खोलें। ऐसे ईमेल अटैचमेंट को डाउनलोड भी नहीं करना चाहिए। ऑनलाइन अभद्रता की बढ़ती घटनाओं को देखते हुए देश भर में पुलिस अधिकारियों को साइबर क्राइम रोकने का गहन व विधिवत प्रशिक्षण दिया जाना चाहिए। साइबर सेल और हेल्पलाइन बनाकर, जाल में फंसे पीड़ितों को हेल्पलाइन पर फोन करके घटना की जानकारी देने के लिए प्रोत्साहित किया जाना जरूरी है जिससे पुलिस संबंधित थाने के जरिये हैकर के कंप्यूटर का आईपी एड्रेस निकालेगी और दबिश देकर समुचित कार्रवाई कर सकेगी। साइबर धोखाधड़ी पर रोक हेतु लोगों को संदिग्ध फोन, चैट, मेसेज, कंटेंट आदि को चिह्नित कर उसे तत्काल रिपोर्ट करना सीखना होगा। साथ ही, डीपफेक वीडियो को पहचानने के लिए स्वयं के स्तर पर जागरूक होना होगा।

सुधीर कुमार सोमानी, देवास

देश में साइबर अपराध और डिजिटल अरेस्ट रोकने के लिए लोगों को प्रशिक्षित एवं जागरूक करने की आवश्यकता है

खुदरा व्यापार अर्थव्यवस्था की रीढ़, ऑनलाइन भी जरूरी

देश में खुदरा व्यापार अर्थव्यवस्था की रीढ़ है। मगर तेजी से फैलते ऑनलाइन कारोबार ने उपभोक्ताओं की खरीदारी की आदतों को बदल दिया है। इंटरनेट, स्मार्टफोन और डिजिटल भुगतान ने ई-कॉमर्स को नई ऊंचाई दी है। इस डिजिटल क्रांति के बीच खुदरा व्यापारियों के सामने कई गंभीर चुनौतियां खड़ी हो गई हैं। सबसे बड़ी चुनौती कड़ी मूल्य प्रतिस्पर्धा की है। ऑनलाइन कंपनियां थोक में खरीदकर कम कीमत, भारी छूट और कैशबैक जैसी योजनाएं पेश कर देती हैं, जिन्हें छोटे दुकानदार नहीं कर पाते। इससे उनके ग्राहक धीरे-धीरे ऑनलाइन प्लेटफॉर्म की ओर खिंचने लगते हैं। अगर व्यापारी डिजिटल तकनीक को अपनाए, ऑनलाइन- ऑफलाइन मॉडल विकसित करे और सरकार प्रशिक्षण व वित्तीय सहायता प्रदान करे तो खुदरा और ऑनलाइन व्यापार साथ-साथ प्रगति कर सकते हैं।

मोहित कुमार, नई दिल्ली

पाठक अपनी राय हमें इस पते पर भेज सकते हैं : संपादक, बिज़नेस स्टैंडर्ड, 4, बहादुर शाह जफर मार्ग, नई दिल्ली 110002. आप हमें ईमेल भी कर सकते हैं : lettershindi@bsmail.in
पत्र/ईमेल में अपना डाक पता और टेलीफोन नंबर अवश्य लिखें।

देश-दुनिया

फोटो - पीटीआई

भारतीय महिला मुक्केबाज नूपुर (बाएं) ने उत्तर प्रदेश के ग्रेटर नोएडा में आयोजित विश्व मुक्केबाजी फाइनल में गुरुवार को 80+ किग्रा में उज्बेकिस्तान की सोटिम्बोएवा ओल्टिनोय को हराकर स्वर्ण पदक जीता।

https://t.me/AllNewsPaperPaid

CCI NG 3.7 Product: NBTMumbaiBS PubDate: 21-11-2025 Zone: Mumbai Edition: 1 Page: NBTMP8 User: cci Time: 11-20-2025 22:08 Color:

नवभारत टाइम्स • विचार

नवभारत टाइम्स । मुंबई । शुक्रवार, 21 नवंबर 2025

वही राज्य स्थिर रहता है, जिसमें सभी लोग कानून के सामने समान हों।
– अरस्तू

सुप्रीम कोर्ट का संयम

क्या अदालतें विधानसभा से पास किसी बिल पर फैसला लेने के लिए राज्यपालों या फिर राष्ट्रपति के लिए समयसीमा तय कर सकती हैं? सुप्रीम कोर्ट ने इस मामले में पिछले फैसले को पलटते हुए अपने रुख में बदलाव किया है। शीर्ष अदालत ने अप्रैल में राष्ट्रपति व राज्यपाल के लिए विधेयकों पर सहमति देने की समयसीमा तय की थी, जिसे उसने गलत माना है।

दखल नहीं । सुप्रीम कोर्ट ने कहा कि पिछले फैसले में तय समयसीमा और उस पर अमल न होने पर राष्ट्रपति या राज्यपाल की ओर से मानी हुई सहमति का सिद्धांत लागू करना कोर्ट की ओर से उनकी शक्तियों में दखल देना होगा, जिसे मंजूर नहीं किया जा सकता।

AI Image

डेडलाइन नहीं होगी

14 सवाल । यह मामला तमिलनाडु सरकार और वहां के गवर्नर से जुड़ा था। तब शीर्ष अदालत ने कहा था कि राष्ट्रपति को राज्यपाल की तरफ से भेजे गए किसी भी विधेयक पर तीन महीने में निर्णय लेना होगा। बहस यहीं से शुरू हुई। इसके बाद राष्ट्रपति ने सुप्रीम कोर्ट के पास 14 सवाल भेजे थे।

व्यवस्था में स्पष्टता । ये सवाल पूरे देश की संघीय व्यवस्था के लिए अहम थे। सुप्रीम कोर्ट की संवैधानिक पीठ का ताजा फैसला इस रूप में संतुलित कहा जा सकता है कि इसमें न्यायपालिका की सीमाओं को लेकर काफी संवेदनशीलता दिखती है। यह साफ-साफ कहता है कि अदालतें राज्यपाल या राष्ट्रपति के लिए समयसीमा निर्धारित नहीं कर सकतीं।

राज्यपालों को संदेश । जहां तक राज्यपाल द्वारा किसी विधेयक पर फैसले में देरी का सवाल है तो यह किसी खास मामले में न्यायिक समीक्षा की गुंजाइश बताता है। इससे राज्यपालों के लिए यह संदेश भी स्पष्ट होता है कि उन्हें निर्वाचित सरकारों के साथ सहयोग का रुख अपनाना चाहिए। लेकिन यह देखने वाली बात होगी कि शीर्ष अदालत का यह संदेश व्यवहार में राज्यपालों के रुख में कैसा और कितना परिवर्तन लाता है।

गतिरोध से उपजा विवाद । ध्यान रहे, यह पूरा विवाद संवैधानिक गतिरोध की उपज है। विपक्ष शासित एकाधिक राज्यों में निर्वाचित सरकार और राज्यपाल के बीच टकराव के हालात बनते दिखने लगे थे। इन राज्यों से सुप्रीम कोर्ट तक ऐसी याचिकाएं आने लगीं कि राज्यपाल कई अहम विधेयकों को मंजूरी नहीं दे रहे। ऐसे हालात में शीर्ष अदालत ने समयसीमा तय करने की पहल की थी। अब संवैधानिक पीठ ने इसे गलत बताया है। लेकिन सवाल है कि क्या इससे गतिरोध खत्म हो सकेगा? देर-सबेर कोई ऐसा उपाय निकालना ही होगा, जिससे सांप भी मर जाए और लाठी भी न टूटे।

प्रगति का कोई नया आइडिया न होने के बाद भी नीतीश का जीत जाना ख़राब ट्रेंड

बिहार का ये कैसा लव अफेयर

दुनिया के कई बड़े लोकतांत्रिक देशों में जनता आक्रोश में आकर सरकारें बदल रही है, लेकिन भारत में ऐसा नहीं हो रहा। बिहार में NDA की जीत इसका ताजा उदाहरण है। यह कोई अच्छा संकेत नहीं है। 10वीं बार सीएम पद की शपथ ले चुके नीतीश कुमार के पास आर्थिक प्रगति को तेज करने के लिए कोई नई सोच भी नहीं नजर आती।

रुचिर शर्मा

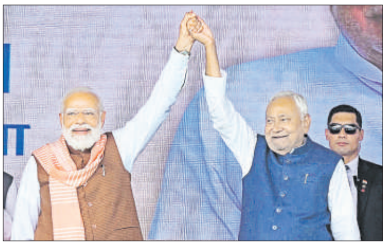

उलटा चलन । पिछले तीन दशकों में मैंने देश के हर लोकसभा और विधानसभा चुनाव को कवर किया है। बिहार की यह मेरी छठी यात्रा थी। मुझे लग रहा था कि जनता में नीतीश के प्रति गहरी नाराजगी दिखेगी क्योंकि वह अब लोगों से दूर होते जा रहे हैं और राज्य में गरीबी सब-सहारन देशों जैसी है। लेकिन, मतदाता नीतीश के प्रति आभारी थे। पहले 5 साल में नीतीश ने वाकई व्यवस्था में बदलाव किए। उन्होंने रोड और पुल बनवाए। दूसरे कार्यकाल में गांवों तक बिजली पहुंचाई। लेकिन, आखिरी दो कार्यकाल में वह विकास का अगला कदम उठाने में नाकाम रहे, यानी नए उद्योग लगाना।

मखाना पर निर्भर । हमने अपनी हजार किमी की यात्रा में गरीबी को गहराई से महसूस किया। राज्य की सबसे बड़ी एक्सपोर्ट इंडस्ट्री मखाना की है। पूर्णिया शहर के पास हमने मजदूरों को गंदले पानी में डुबकी लगाकर मखाना निकालते देखा। यह दृश्य 19वीं सदी का लग रहा था - मखाना को तोड़ना, खुले चूल्हे पर भूनना। मेरे साथ यात्रा कर रहे कई लोगों को हैरत हुई कि सरकार इन लोगों को मशीन-अवन लगाने में मदद क्यों नहीं करती। मनेर कस्बे में हमने देखा कि बिचौलिये बच्चों को कचरे से भरे तालाब में घुसकर मडफिश पकड़ने के लिए पैसे दे रहे थे। मेरे एक साथी से यह बर्दाश्त नहीं हुआ और वह घर लौट गए।

सबसे गरीब । आज भारत के सबसे गरीब प्रदेश बिहार और सबसे अमीर प्रदेश तेलंगाना की आय के बीच छह गुने का अंतर है। इसके बाद भी कुल सरकारी खर्च राज्य की GDP का 34% है, राष्ट्रीय औसत से दोगुना। इसमें से आधा सामाजिक योजनाओं में जाता है और नीतीश ने जनता को और देने का वादा किया है। चुनाव के पहले उन्होंने खर्च की जो योजना बनाई है, वह राज्य की GDP का 3% है।

> **सत्ता नहीं छूटती**
> - दूसरे देशों में सरकारें 75% चुनाव हार रहीं
> - भारत में सत्ताधारियों की जीत का प्रतिशत बढ़ा
> - पिछड़े राज्यों में धीमे विकास से भी संतुष्टि

वोटों की खरीद । पूरे देश में मुफ्त की योजनाओं का चलन बढ़ा है, लेकिन बिहार इसका खर्च उठाने की हालत में नहीं। राज्य भारी घाटे में है। नई योजना पर खर्च तभी संभव है, जब सड़क और फैक्ट्री जैसी जरूरी चीजों समेत कहीं और से कटौती की जाए। देखा जाए तो आधुनिकता ने 'वेलफेयर ट्रैप' को और गहरा कर दिया है। सरकारी सेवाओं के डिजिटलीकरण से बिचौलिये खत्म हो गए, लेकिन अब नेता इसी डिजिटल नेटवर्क का इस्तेमाल कर चुनाव के दौरान वोटर्स को लुभाने के लिए तेजी से कैश ट्रांसफर करते हैं। यह एक तरह से वोटों की वर्चुअल खरीद है।

विपक्ष का संघर्ष । RJD अब भी पुरानी खराब छवि से जूझ रही है, जिसे लोग 'जंगलराज' कहते हैं। इसी के चलते पार्टी असरदार जवाब नहीं दे पाई और आखिर में हैरान करने वाली बड़ी-बड़ी घोषणाएं करने लगी। कुल मिलाकर NDA की जीत एक चिंताजनक ट्रेंड दिखाती है। विकसित लोकतांत्रिक देशों में दो दशक पहले तक अधिकतर मौजूदा सरकारें चुनाव जीत जाती थीं, लेकिन अब वह 75% हारती हैं। भारत में उलटा हो गया - यहां 2000 के पहले तक राज्यों के सत्ताधारी दल ज्यादातर चुनाव हारते थे, लेकिन इस दशक में वे 55% इलेक्शन जीत रहे हैं। कमजोर होती कांग्रेस को निकाल दीजिए तो यह आंकड़ा 73% होता है।

कम में संतोष । अगर मतदाता गुड गवर्नेंस के लिए सरकारों को जिता रहे होते, तो बात ठीक थी, लेकिन हाल के नतीजों से साफ है कि तेजी से बढ़ रहे दक्षिण के राज्यों में सत्ताधारी दलों के हारने की संभावना ज्यादा है। वहीं, बिहार और बंगाल जैसे पिछड़े राज्यों में उनकी जीत ज्यादा संभावित दिखती है। यह इन इलाकों में बढ़ती आत्मसंतुष्टि का संकेत है।

सुरक्षित सत्ताधारी । बिहार आज भी एक अलग-सी दुनिया लगता है, जहां परंपरा, निष्ठा और बुजुर्गों के प्रति सम्मान बहुत गहरा है। फिर भी नीतीश कुमार को 74 साल की उम्र में जिताने वाली ताकतें पूरे देश में हैं। धीमी प्रगति और विकास से ज्यादा कल्याणकारी योजनाओं को प्राथमिकता देने वाली सरकारों को स्वीकार लेना, सरकारी मशीनरी पर कंट्रोल - ये सब बातें मिलकर भारत को ऐसा देश बनाती हैं जहां सत्ताधारी सुरक्षित हैं।

क्या AI से आ सकती है तीसरी हरित क्रांति

भारत के किसान लंबे समय से देश की खाद्य सुरक्षा का भार अपने कंधों पर उठाए हुए हैं, लेकिन आज वे ऐसे चौराहे पर खड़े हैं जहां संकट और अवसर दोनों हैं। चुनौतियां गंभीर हैं - गिरता भूजल स्तर, अनियमित मॉनसून, घटती जोत और अनुसंधान प्रयोगशालाओं और ग्रामीण वास्तविकताओं के बीच बढ़ता फासला। फिर भी, इन चुनौतियों वाली उसी धरती में एक क्रांति का बीज छुपा है, जो न केवल ट्रैक्टरों और ट्यूबवेलों से, बल्कि इंटेलिजेंस से भी संचालित है।

प्रवीण कौशल

डेटा इनोवेटर किसान । हरियाणा के मेवात में एक किसान की कल्पना कीजिए। उसके खेत में, सेंसरों का एक छोटा सा नेटवर्क खामोशी से मिट्टी की नमी का स्तर मापता है। इस डेटा का मृदा स्वास्थ्य रेकॉर्ड, स्थानीय मौसम पूर्वानुमान और फसल की वृद्धि अवस्था के साथ क्रॉस-रेफरेंस किया जाता है। कुछ ही सेकंड में, उसे अपने फोन पर एक संदेश प्राप्त होता है - आज एक घंटे के लिए अपना पंप चलाएं।

लागत कम, लाभ अधिक । AI द्वारा संचालित यह सरल प्रयास हज़ारों लीटर पानी बचाता है, बिजली की खपत कम करता है और मिट्टी की उर्वरता की रक्षा करता है। कई जिलों में, AI-आधारित सिंचाई और सलाहकार प्रणालियों ने पानी के उपयोग को प्रभावशाली रूप से कम करते हुए उपज में 40-50% की वृद्धि की है। यह केवल एक तकनीकी सफलता नहीं है, आर्थिक और पारिस्थितिक परिवर्तन है।

सेंसर से परे । मानवीय-तकनीकी साझेदारी कृषि में AI की असली शक्ति मानवीय बुद्धिमत्ता का स्थान लेने में नहीं, बल्कि उसे बढ़ाने में निहित है।

कॉमन रूम

AI Image

किसान हमेशा से प्राकृतिक वैज्ञानिक रहे हैं - मिट्टी कैसी है, मॉनसून के पैटर्न और कीटों के व्यवहार को वे अनुभव से समझते हैं। मगर AI इस नॉलेज को परफेक्ट बनाती है।

शांत क्रांति । किसान अब अपनी भाषा में सवाल पूछ सकते हैं कि सिंचाई कब करनी चाहिए? कौन सा उर्वरक इस मिट्टी के लिए सही है? उपज कहां बेचनी चाहिए? इनका तुरंत उन्हें जवाब मिल सकता है। यह आर्टिफिशल इंटेलिजेंस भारत के गांवों में फैल रही एक शांत क्रांति है।

कृषि के UPI का निर्माण । भारत को आज एक इंटीग्रेटेड स्ट्रक्चर की जरूरत है। वह जरूरत है, एक पब्लिक डिजिटल स्ट्रक्चर। एक ऐसी पहल जो हरेक किसान, खेत और वैज्ञानिक को जोड़े। इसे एग्रीकल्चर मिशन नॉलेज कहा जा सकता है। इस तरह की पहल देश में तीसरी हरित क्रांति को शक्ति दे सकती है। जिस तरह से UPI ने भारत में फाइनैंशल इनक्लूजन की दुनिया को बदल डाला और दूसरे देशों के लिए भी यह मिसाल बना, कुछ वैसा ही एग्रीकल्चर मिशन नॉलेज के जरिये भी किया जा सकता है। जिस तरह से दूसरी हरित क्रांति ने हमें अनाज उत्पादन में आत्मनिर्भर बनाया, उसे आर्टिफिशल इंटेलिजेंस आगे ले जाएगी।

THE SPEAKING TREE

और पढ़ने के लिए देखें
www.speakingtree.nbt.in

दुनिया को अगर जीतना है, तो पहले ख़ुद को जीतो

स्वामी अवधेशानंद गिरि

जिस व्यक्ति के हृदय में करुणा, प्रेम और समता बसते हैं, वहां ईश्वर का आशीर्वाद और संतों की कृपा स्थिर रहती है। करुणा साफ और पवित्र हृदय का भाव है। इसी से दान, दया, अहिंसा, प्रेम और शांति जैसे गुण जन्म लेते हैं। करुणा के बिना दया और दान सिर्फ दिखावा बन जाते हैं और अहंकार को बढ़ाते हैं। करुणा के बिना बनावटी और नीरस हो जाता है जीवन।

लंबी साधना के बाद जब सिद्धार्थ के भीतर करुणा जगी, तो वह बुद्ध बन गए। उनकी साधना केवल अपने लिए नहीं, पूरे जगत के कल्याण के लिए थी। युद्ध किसी समस्या का समाधान नहीं। असली समाधान तब मिलेगा, जब मनुष्य के भीतर करुणा पैदा होगी। जिसने खुद को नहीं जीता, वह दुनिया को कैसे जीतेगा?

AI Image

प्रेम मनुष्य का स्वभाव है। प्रेम के बिना अपनेपन का अनुभव नहीं होता और जीवन की सुंदरता अधूरी रह जाती है। प्रेम मन को साफ करता है, आनंद देता है। प्रेम का दूसरा नाम समर्पण है, जहां पाने की इच्छा नहीं, केवल देने का भाव होता है। जो देना जानता है, वह कभी निराश नहीं होता।

सामाजिक दृष्टि से भी प्रेम की शक्ति, बहुत महान और प्रभावी है। ईश्वर असीम प्रेम का प्रकाशमयी स्रोत है। उसने ही जीवन प्रदान करने वाली यह पूंजी मानव को दिया है, ताकि मानवता स्पष्ट हो सके। वह व्यक्ति जो प्रेम करता है अपने पूरे अस्तित्व के साथ ईश्वर की उपासना करता है। मनुष्य प्रेम का आभास पहली बार अपने परिवार में करता है और वहीं से उसे सीखता है। प्रेम की प्रथम अनुभूति उसे माता के स्नेह से मिलती है और प्रेम से ओतप्रोत पिता की कृपादृष्टि से वह प्रसन्नचित होता है।

शांति मंदिरों में नहीं, धर्म के आचरण में मिलती है। जब अहिंसा, संयम, उदारता और समता जीवन में उतरते हैं, तभी मनुष्य शांत होता है। करुणा, प्रेम और समता की साधना से सारे अंतर्द्वंद्व खत्म हो जाते हैं और मन समाधि-भाव को प्राप्त होता है।

प्रस्तुति : सुभाष चंद्र शर्मा

तिराहा

'अ'शिष्टाचार भेंट

सुधर्मा बाएं हाथ में चाय का कप लिए दाएं हाथ से सोशल मीडिया जांच रही थीं कि नजर ठिठक गई। 'ये जी! जयचंद का तो नए मुखिया से बड़ा याराना है, कैसे ठसक कर फोटो खिंचवाया है।' सुखनंदन ने तस्वीर देखी जिस पर परिचय था, 'बड़का पार्टी के नयका मुखिया संग शिष्टाचार भेंट का सौभाग्य प्राप्त हुआ।' तस्वीर देख सुखनंदन के चेहरे पर उभरी मुस्कान ने सुधर्मा की भृकुटि चढ़ा दी, 'आप बैठिए घर।

प्रेम शंकर मिश्र

कोई पूछता तो है नहीं, दूसरों को देख बस मुस्कराइए।' सुखनंदन हंस पड़े, 'प्रिये! यह लिखा शिष्टाचार भेंट है, लेकिन, इसमें केवल 'अशिष्टाचार' है। फोटो ठसक के नहीं, खिसक के खिंची है। ध्यान से देखो, जयचंद के कॉलर पर हाथ दिख रहा है? यह प्यार से कंधे पर आया हाथ नहीं है, सुरक्षाकर्मी उसका कॉलर खींच रहा है। मुखिया का मुख दाएं है और जयचंद का उस कैमरे की ओर, जो उसने किसी तरह से सेट कराया है। शिष्टाचार की अधिकतम तस्वीरें जिनके साथ खिंचती हैं, उनको पता ही नहीं होता कि यह 'अशिष्टता' कब हो गई?'

'तो इसकी जरूरत क्या है?' सुधर्मा ने सवाल दागा। 'व्यवस्था अहम और वहम पर चलती है। तस्वीर देखकर तुमने ठसक का भ्रम पाल लिया? यही भ्रम तंत्र और स्वतंत्र बैठे लोग भी पाल लेते हैं। इसी बहाने जयचंद का भाग्योदय हो जाता है। जयचंद जानता है कि जीते कोई, हारता हमेशा कार्यकर्ता ही है। अतः वह वहम बेच खुद को हमेशा अहम बनाए रखता है', सुखनंदन ने समझाया। 'लेकिन, कार्यकर्ता तो देवतुल्य हैं? उनकी चिंता के लिए विचार परिवार है?' फिर सवाल गिरा।

'जब कर्म करना हो तो कार्यकर्ता देवतुल्य है और जब फल देना हो तो परिक्रमा वाले। वैसे भी 'विचार' की पुड़िया की जरूरत हाशिए पर होती है। अब देखो! जब लेफ्ट सत्ता में होता है तो पूंजी के राइट खड़ा हो जाता है। जब राइट सत्ता में होता है तो सिद्धांत को 'लेफ्ट' कर जाता है। भाई साहब उड़नखटोला में घूमते हैं और 'अंत्योदय' खाट पर लाद अस्पताल ले जाया जाता है', सुखनंदन ने ठहाका लगाया।

एकदा

संकलन : रिंकल शर्मा

सिक्के में सीख

फ्रांस के महान साहित्यकार विक्टर ह्यूगो (1802–1885) एक बार अपने घर के बाहर सड़क पर टहल रहे थे कि उन्हें एक दुबला-पतला, भूख से कांपता हुआ छोटा बच्चा दिखा। बच्चे ने धीमी आवाज में कहा, 'कई दिनों से पेट भर खाना नहीं खाया कुछ मदद कीजिए।' ह्यूगो ने अपनी जेब टटोली तो सिर्फ एक ही सिक्का था, जिसे उन्होंने सुबह किसी जरूरी काम के लिए रखा था। लेकिन अगले ही पल बच्चे की मासूम सूरत देखकर उन्होंने सोचा, 'अगर मैं यह सिक्का नहीं दूं, तो इस बच्चे की भूख कैसे मिटेगी?' उन्होंने बिना किसी हिचक के उस सिक्के को बच्चे की हथेली पर रख दिया और कोमल स्वर में बोले, 'यह सिर्फ खाना नहीं, उम्मीद भी है। जीवन में कभी किसी को निराश मत करना।' बच्चे की आंखों में चमक आ गई और वह भावुक होकर रो पड़ा। उस क्षण ह्यूगो के भीतर एक अद्भुत शांति उतर आई। बाद में उन्होंने अपनी डायरी में लिखा, 'जिस दिन तुम किसी के दुख को कम कर दो, समझो उसी दिन तुमने सच में जीवन जिया।' विक्टर ह्यूगो के जीवन का यह प्रसंग सिद्ध करता है कि दया के छोटे-छोटे कदम भी किसी की दुनिया में उजाला करने की क्षमता रखते हैं।

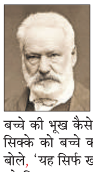

कांटे की बात

नीतीश कुमार को फिर से मुख्यमंत्री बनने पर बधाई। आशा करते हैं कि उनके साथ धोखा न हो, वह कार्यकाल पूरा कर पाएं और बिहार के लिए जो पिछले 20 वर्षों में नहीं हुआ, उसमें से कम से कम कुछ तो कर पाएं।

पवन खेड़ा, *कांग्रेस नेता*

क्या प्यार का मतलब बदल देंगी कनो

समाह की शख्सियत

जो जरूरत के वक्त मौजूद रहे, भावनाओं को समझे, बात सुने और सहारा दे, जो ईगो से दूर हो – एक अच्छे साथी में और क्या चाहिए! कनो ने यही खूबियां देखी थीं AI चैटबॉट में।

AI Image

AI को बनाया जीवनसाथी

जापान सरकार शादियों को बढ़ावा देना चाहती है, पर यह मामला अलग है। 32 साल की कनो ने AI चैटबॉट से शादी रचाई है, जिसे उन्होंने नाम दिया है क्लाउस। 32 साल की कनो ऑफिस वर्कर हैं और सगाई टूटने से टूट चुकी थीं। उसके बाद उन्होंने AI से बात करना शुरू किया और फिर ऐसा वक्त आया, जब उन्हें लगा कि इससे बेहतर साथी नहीं मिल सकता।

डिजिटल साथी पर भरोसा

कनो को एहसास है कि उन्होंने जो किया, वह सामान्य नहीं है, लेकिन वह खुश हैं। यह घटना इस बात की ओर इशारा करती है कि शादी जैसे रिश्ते में आज लोगों को भावनात्मक जुड़ाव भी चाहिए। अगर वह जुड़ाव किसी तकनीक में मिलता है, तो उससे भी परहेज नहीं। आगे कनो जैसे उदाहरण और मिल सकते हैं।

Poli-tickle R PRASAD

मी लॉर्ड, आप एक सीलबंद लिफाफे में एयर प्यूरीफायर के अंदर डिटेल पाएंगे

कई राज्यों में बिहार को भुनाएगी BJP

पूनम पाण्डे

बिहार में सबसे बड़ी पार्टी बनने के बाद अगले साल अन्य राज्यों में होने वाले चुनावों में BJP इस जीत को भुनाएगी। वह राज्य से मिले सबक और आजमाई रणनीति को इन राज्यों में लागू कर सकती है। अगले साल असम, केरल, तमिलनाडु और पश्चिम बंगाल में चुनाव हैं। इनमें से असम में अभी BJP की सरकार है और बाकी तीन राज्यों में BJP कभी भी सत्ता में नहीं रही।

जंगलराज बनेगा मुद्दा

असम: यहां BJP की सरकार है और हिमंता बिस्वा सरमा मुख्यमंत्री हैं। पहले वह कांग्रेस में थे। अब कांग्रेस नेता राहुल गांधी पर तीखे हमले करते हैं। पिछले दिनों उन्होंने यहां तक कहा कि राहुल गांधी जहां भी जाते हैं, वहां हार निश्चित है, वह दुर्भाग्य के प्रतीक हैं। माना जा रहा है कि बिहार के चुनावी मॉडल पर असम सरकार भी काम कर सकती है। बिहार में NDA की जीत में महिलाओं का समर्थन अहम माना जा रहा है।

पश्चिम बंगाल: 2021 विधानसभा चुनाव में BJP ने राज्य में 77 सीटें जीती थीं। पार्टी नेता बिहार की जीत का असर यहां भी दिखने की उम्मीद कर रहे हैं। BJP ने पश्चिम बंगाल में जंगलराज की बात करनी शुरू भी कर दी है। NDA, खासकर BJP बिहार में लोगों को यह समझाने में सफल दिखी कि अगर RJD सत्ता में आ गई तो जंगलराज वापस आ जाएगा। अब वह इसे पश्चिम बंगाल में भी दोहरा रही है। जल्द ही पश्चिम बंगाल में पार्टी कार्यकर्ता सड़कों पर उतरकर ममता सरकार के खिलाफ विरोध-प्रदर्शन की रणनीति बना रहे हैं। BJP के एक नेता ने कहा कि जिस तरह कानून-व्यवस्था के मुद्दे का असर बिहार में हुआ, उसी तरह पश्चिम बंगाल में भी यह हमारे लिए अहम मुद्दा रहेगा।

विशुद्ध राजनीति
कसौटी

केरल: यहां अभी BJP की मौजूदगी ना के बराबर है। राज्य में इस वक्त LDF (लेफ्ट डेमोक्रेटिक फ्रंट) की सरकार है। 2021 विधानसभा चुनाव में केरल में इतिहास रचते हुए पी. विजयन के नेतृत्व में LDF ने जीत दर्ज की थी। पिछले चार दशकों से हर चुनाव में राज्य में सरकार बदल जाती थी। मगर 2021 में यह ट्रेंड टूटा और फिर से LDF सरकार बनी। इससे पिछले चुनाव में BJP ने यहां पहली बार एक सीट जीती थी, लेकिन 2021 में उसने वह भी गंवा दी। सदानंद मास्टर को कुछ महीने पहले ही राज्यसभा के लिए नामित किया गया है, जो केरल में RSS का सबसे बड़ा चेहरा हैं। राज्य में हुए पिछले विधानसभा चुनाव में सदानंद मास्टर भी प्रत्याशी थे। केंद्र की NDA सरकार में अभी केरल से सुरेश गोपी मंत्री हैं। उन्होंने कुछ दिनों पहले कहा था कि उनकी जगह सदानंद मास्टर को मंत्री बनाया जाना चाहिए। केरल में पांव जमाने के लिए BJP हर संभव कोशिश कर रही है।

BJP से परहेज

तमिलनाडु: तमिलनाडु में BJP गठबंधन के सहारे पांव जमाने की कोशिश कर रही है। उसने AIADMK के साथ गठबंधन किया है। BJP नेता दावा करते हैं कि तमिलनाडु में उनके गठबंधन की सरकार बनेगी, वहीं AIADMK नेता लगातार कह रहे हैं कि यहां सिंगल पार्टी की सरकार बनेगी यानी वे गठबंधन में रहते हुए भी चुनाव जीतने पर BJP को सत्ता में भागीदारी नहीं देना चाहते। पिछला चुनाव BJP और AIADMK ने साथ लड़ा था। हालांकि तब DMK ने जीत दर्ज की। बिहार की जीत का यहां भले BJP को फायदा सीधे ना मिले, लेकिन कांग्रेस के कमजोर होने से DMK-कांग्रेस गठबंधन में अगर खींचतान हुई तो उसका लाभ उसके अलायंस को मिल सकता है।

रीडर्स मेल
www.edit.nbt.in

बिहार: हार की पांच वजह

बिहार में महागठबंधन की पराजय को पांच प्रमुख कारणों में समझा जा सकता है। सबसे पहला और सबसे बड़ा कारण था नेतृत्वहीनता। चुनाव शुरू होने से पहले ही आरजेडी और कांग्रेस के बीच मुख्यमंत्री पद के चेहरे को लेकर विवाद और सीट बंटवारे की खींचतान ने यह संदेश दे दिया कि गठबंधन अंदर से असंगठित है। दूसरा कारण था जातीय समीकरणों का गलत आकलन। तीसरा कारण था कांग्रेस का कमजोर प्रदर्शन। चौथा कारण था मुद्दों को प्रभावी ढंग से पेश न कर पाना। इसके अलावा, पांचवां कारण रहा तेजस्वी यादव का अभियान, जो ऊर्जावान होने के बावजूद नवीनता और विश्वसनीयता की कमी से जूझता रहा।

-विभूति बुपक्या, ईमेल से

readersmail.nbt@gmail.com पर अपनी राय नाम-पते के साथ मेल करें।

आर.एन.आई. पंजीयन नंबर 1613/1957 स्वत्वाधिकारी बेनेट, कोलमैन एंड कंपनी लिमिटेड के लिए आर. कृष्णमूर्ति द्वारा टाइम्स ऑफ इंडिया बिल्डिंग, डॉ. डी. एन. रोड, फोर्ट, मुंबई 400001 से प्रकाशित और उनके द्वारा (1) टाइम्स ऑफ इंडिया सबर्बन प्रेस, आकुर्ली रोड, निकट वेस्टर्न एक्सप्रेस हाइवे, कांदिवली (पू.) मुंबई 400101 एवं (2) टाइम्स ऑफ इंडिया प्रिंट सिटी, प्लॉट नं. 4, टी.टी.सी. इंडस्ट्रियल एरिया, ठाणे बेलापुर रोड, ऐरोली, नवी मुंबई-400708. फोन नं. (022) 2760 9999 ; फैक्सः(022) 2760 5275। फोन मुंबईः (022) 66353535, 22733535 रेस्पांसः (022) 66353636, 22733636 फैक्सः (022) 22731889, 22731144, कांदिवली (022) 882324 से मुद्रित। स्थानीय संपादक (मुंबई) : सुंदर चंद ठाकुर (पी. आर. बी. अधिनियम के अंतर्गत समाचारों के चयन के लिए उत्तरदायी) सर्वाधिकार सुरक्षित। प्रकाशक की लिखित अनुमति के बिना संपूर्ण या आंशिक पुनर्प्रकाशन पूर्णतः प्रतिबंधित। सड़क व रेल परिवहन सेवा शुल्कः मुंबई, ठाणे व रायगड जिलों के बाहर 1.00 रुपया। विमान सेवा शुल्कः रायपुर, नागपुर, गोवा एवं वाया 2.00 रुपये, इंदौर, चेन्नै एवं वाया 3.00 रुपये, अहमदाबाद, बेंगलुरु, कोचीन, कोयम्बतूर, एरनाकुलम, हैदराबाद, कोझीकोड, मंगलूर, त्रिवेंद्रम, उदयपुर, वाइजग एवं वाया 4.00 रुपये, दिल्ली, कोलकाता, एवं वाया 5.00 रुपये।

संपादकीय

असमानता और अव्यवहारिकता से बचाव!

आधुनिकता के इस परिवेश में लोगों को समानता और अव्यवहारिकता का निरंतर सामना करना पड़ता है। आज हर कोई अपने आप को किसी भी दूसरे से कमतर नहीं बुझता और अपनी को श्रेष्ठ समझने की सोच रखने वाले कोई भी व्यक्ति सामान व्यक्ति को सामान्य रहने नहीं देना चाहता, वह अपने से दुसरे को कमतर से कमतर करके ही चलना चाहता है, क्योंकि वर्तमान समय का मनुष्य जिस भावना और व्यवहार को लेकर जीवन यात्रा में अपने को समर्पित कर चल रहा है, वह भावना और व्यवहार मनुष्य को मानवीयता की भावना से अलग करता है, क्योंकि यह जीवन यात्रा उस भागवत की देन है, जिसने हमें इस धरा पर अवतरित किया है।उसने इस धरा पर सिर्फ मानवीय रूप ही नहीं अनेक प्रकार के जीव जंतु, पेड़ पौधे वृक्ष, सभी को जीवन दी है और सभी का जीवन की अवधि भी निर्धारित है, जो इस धरा पर आया है, उसे अपना सत्कर्म कर जाना है, समाप्त होना भी तय है। एक निश्चित अवधि यानी शुरूआत से समाप्ति की ओर तक जो कार्य लक्षित है, उसे ही पूरा करना होता है। क्योंकि उन्हें ऊपर वाले ने अपने उद्देश पूर्ती का एक माध्यम मात्र बनाया है, ताकि उनके बनाए हर एक नियम को सार्थकता के साथ चलाया जाए। इस संसार को पैदा करने वाले ने इस जगत को एक सुन्दर स्वरूप में पैदा किया है। भगवत रूपी उस अदृश्य शक्ति की देन है, धरा पर अवतरित हर एक कृति जिसे प्रकृति प्रदत बनाई है उसने, पर उसकी अदृष्यता के कारण मानव रूपी तन मन उससे दीगर जाकर अपने मन रूपी चंचलता से अपने ही ढंग से जगत का निर्माण करने में जुटा और यह तब हुआ जब कई काल खंडों से गुजरता हुआ उस अदृश्य शक्ति का यह जगत बदलाव के साथ बदलता गया। आज के मानव में प्रकृति प्रदत कोई भाव नहीं रह गया है, देव शक्ति भावना बस मन के ऊपर से ही गुजरता दिखता है अंतःकरण से उसकी भावना खत्म हो रही है।मानवीय कृति में उसका कोई प्रभाव नहीं दिखता। गैर की मानव से अलग पेड़ पौधे पशु पक्षी जैसे हर एक जीव जंतु अपनी भगवत की उसी रूप धारण किए हुए समाप्ति की ओर बढ़ता है उसमें जो भावनाएं बलवती होती हैं वह सबके लिए समान होती है सब को सुख देने की जो प्रकृति प्रदत भावना है वह सम्माहित रहती है। लेकिन मानव रूपी कीर्ति ने अपनी सोच को इतना विस्तृत बना लिया है कि वह अपने मन की करने लगा है। ऊपर वाले की किसी भावना को भी नहीं मानता, जानता या फिर समझना चाहता है। जिसके चलते मानव इस धरा पर दानवी भी रूप में भी परिवर्तित होता चला जा रहा है। यह धरा जब शुरूआत में यह जगत बना और मानवी कृती बनी, तब बात कुछ और थी लेकिन विकसित होते गए मानवी कीर्ति ने प्रकृति को अपने आगोश में लेते हुए उस पर जिस तरह का कार्य किया, रचनाएं की, वह सब मानव कृति को दिशा विहीन करने वाली बनती गई और मानव मन में जो भाव आज पैदा हो गए हैं, वह स्वयम पर आधारित हो एक दूसरे को समाप्त करने वाली भावना से ओतप्रोत है। ऐसी भावना जो स्वयं में ही निहित होकर रह गई है। जबकि भगवत रुपी उस अदृश्य शिवशक्ति ने मानवीय कृत्य को अपने से भी ज्यादा बलवती बनाकर खुद को अर्थहीनता में बनता असहज महसूस दिखता होगा। कारण ऊपर वाले ने जिस तरह से यह जीवन दिया है और जिस उद्देश्य के लिए यह जीवन दिया है, वह और उसका उद्देश्य मानव प्रतिकार करते हुए, अपने जीवन की यात्रा को कठिन परिस्थितियों में डालता हुआ, चलता दिखाई देता है। जिस तरह ईश्वर ने धरा पर अपनी हर एक अनुपम कृति को समभाव की दृष्टि से बनाया है उस दृष्टि का प्रतिकार अगर कोई करता है, तो वह मानवीय भावना और मन है, जो प्रत्येक व्यक्ति में अलग अलग होता है। जबकि भगवत रूपी देव ने ऐसा कुछ नहीं सोचा होगा कि हम जिसे मानवीय रूप प्रदान कर रहे हैं और जो मन भाव दे रहे हैं, वह धरा पर जाने के बाद स्वयं पर आधारित होकर चलने लगेगा। ऊपर वाले की मानवी कृती बहुत ही श्रेष्ठ मानी जाती है।जिस के दिलो-दिमाग में भावनाएं हैं, सोच है, जिसमें चलने फिरने करने की ताकत होती है। बल होता है, वह अपने इस बल का दुरुपयोग करते हुए धरा को दुर्दशा की ओर धकेलने में भी सक्षम है और यहीं से क्षमता एक ऐसा अकल्पनीय देन बन जाती है। जिसे ईश्वर ने भी अपने मन में तनिक भी न लाया होगा।लेकिन उसनेअपनी महान कृति को व्यक्ति के रूप में इस तरह पर उतारा है।वह उसके विपरीत भी चलकर दिखा सकता है।यह इस धरा पर तो साफ दिखता है। जबकि इस धरा पर अवतरित होने वाले देव दूतो ने भी हजारों कष्ट सहकर, मानव कल्याण की भावना को जगत में फैलाया। पर मानव मन को बदलने में असमर्थ ही रहे, क्योंकि हर किसी मानव की सोच और भावनाएं एक दूसरे से इतर ही बनाई हुई हैं। ईश्वर की असीम कृपा है मानव पर।फिर भी मानव भटकता रहता हैं। जरा गौर करें!जीवन के अस्तित्व के लिए सबसे जरूरी है, हवा वो हमें प्रकृति मुफ्त में देती है सबको समभाव से। पानी बिल्कुल निःशुल्क। पृथ्वी सबको अपना आश्रय देती है बिना किसी भेदभाव के। आकाश सबको छत देती है। सूर्य सबको अपनी किरणें देती है, प्रकाश देती है बिना किसी भेदभाव के। चॉद सबको अपनी चाँदनी देती है। फूल सबको अपनी महक देती है। जब प्रकृति फर्क नहीं करती तो हम क्यों करते हैं?कहा जाता है कि इंसान अपने आस-पास के वातावरण से प्रभावित होता है। तो ये समता और उदारता का प्रभाव क्यों नहीं पड्ता?हम क्यों स्वयं के प्रति श्रेष्ठता के अहंकार से ग्रस्त रहते हैं। जिन्होंने इस भेदभाव को मिटा दिया अपने जीवन में वो पूजित हैं। तो हम सब प्रकृति के इस नियम को अपने जीवन में धारण कर समानता के भाव को प्रदर्शित कर मानव कल्याण के लिए अपना योगदान समर्पित कर सकते हैं। लेकिन ऐसा वर्तमान समय में देखा नहीं जा रहा हर कोई अपने आप में ही अपने को परिपूर्ण मानने पर आमदा है। जबकि ऐसा है नहीं। यह जीवन निश्चित रूप से फल और फूल के के सामान है। लेकिन हम इसे अपने मानसिकता के चलते बर्बाद करने पर तुल जाते हैं।यह भी कि आज जो स्थिति इस समय चल रही है। वह प्रकृति और मानवी कृती से जुड़ा हुआ है। अगर हम प्रकृति और मानव कृति की अवहेलना करते है तो ऐसे में हम सबको उसकी दुर्दशा को झेलना तो पड़ेगा ही।क्योकि आज मानवो की मानवता लूप्तप्राय हो चुकी है।हर व्यक्ति अपने आप में स्वार्थपरता के वशीभूत हो जीवन जी रहा है।जबकि उसे हर किसी के सुख-दुख में शामिल होकर चलने की आवश्यकता है। खासकर दुख की स्थिति में उसे सहयोग और सहायता प्रदान करने में थोड़ी भी हिचकिचाहट नहीं होनी चाहिए, परंतु वर्तमान काल के मनुष्यों में यह भावना कहीं दिखते ही नहीं संस्कार और संस्कृति बिल्कुल लुप्त हो गई है। अब हर कोई अपने आप से मतलब रख कर चलने में मस्त रहता है, व्यस्त रहता है। यह भी कि सतयुग से चलता हुआ यह कालखंड आज कलयुग में परिवर्तित हो चुका है जिस की अवधारणा यहां अवतरित हुए देव संतों ने पहले ही कर ली थी और लोगों को बता दिया था कि यह कालखंड परिवर्तित होते हुए कई युगो के साथ चलता चला जाएगा जिसमें मानव अपने सद्गुणों को छोड़कर दुगुर्णों को अपनाता हुआ चल पड़ेगा और सच्ची बात यह भी की इस जीवन की सफलता समानता के साथ अच्छी भावना और व्यवहार में निहित है। जो अ अव्यवहारिक असमान्य है उनसे संबंध रखना उचित नहीं होता, क्योंकि असामान्य और अब व्यवहारिक व्यक्ति आपको आपके व्यक्तित्व को समाप्त कर अपने अनुरूप बना देता है, आपको उस दृष्टि से देखता है जिससे वह स्वयं को ही जानता है। उसके सामने आप कहीं भी नजर नहीं आते वह सिर्फ अपने आपको देखता नजर आता है।

प्रभात वर्मा

पिता: जीवन का आधार, साहित्य का सागर

कहते हैं माँ धरती है तो पिता आकाश। माँ ममता की मूर्ति है तो पिता सम्मान का शिखर। माँ का होना निश्चित रूप से जीवन की पहली आवश्यकता है, उसके बिना संसार की कल्पना भी नहीं की जा सकती। परंतु पिता का होना भी उतना ही अनिवार्य है, क्योंकि पिता से ही जुड़ा होता है हमारा नाम, हमारी पहचान, हमारा सम्मान। पिता की छत्रछाया में ही खिलती है संतान की समृद्धि, पनपता है उसका आत्मविश्वास और निर्मित होता है उसका व्यक्तित्व। आज जब मैं अपने आसपास देखता हूँ, तो हर जगह एक गहरा शून्य दिखाई देता है। वह शून्य जो किसी भी चीज से भरा नहीं जा सकता। पिता अब इस संसार में नहीं हैं, वे परलोक सिधार गए हैं, पर उनकी अनुपस्थिति हर पल, हर क्षण मुझे तोड़ती है। मैंने अपने जीवन का सबसे बहुमूल्य समय उनके साथ बिताया। हर सुबह उनके साथ चाय की चुस्कियों में छिपी थी साहित्य की गहन चर्चा, हर शाम उनके साथ टहलते हुए मिलती थी जीवन की अनमोल सीख। वे केवल मेरे पिता ही नहीं थे, वे मेरे साहित्यिक गुरु थे, मेरे मार्गदर्शक थे, मेरे सबसे अच्छे मित्र थे। प्रोफेसर साहब, समाज में यह नाम ही काफी था उनकी प्रतिष्ठा बयान करने के लिए। विश्वविद्यालय के सबसे सम्मानित पद से सेवानिवृत्त हुए मेरे पिता केवल एक शिक्षक नहीं थे, वे साहित्य के सागर थे, ज्ञान के भंडार थे। उनके पास बैठना मतलब पुस्तकालय में बैठना था, उनसे बात करना मतलब महान ग्रंथों से संवाद करना था। उनकी हर बात में छिपा होता था एक गहरा अर्थ, हर शब्द में समाया होता था जीवन का दर्शन। मैंने उनसे केवल पढ़ना नहीं सीखा, मैंने उनसे जीना सीखा। साहित्य को समझना, शब्दों की शक्ति को पहचानना, भाषा के सौंदर्य को महसूस करना, यह सब उनकी ही देन है। वे मेरे प्रथम गुरु थे और अंतिम प्रेरणा भी। उनके बिना मेरी साहित्यिक यात्रा अधूरी है, मेरा लेखन अनाथ है। कितनी बार मैं लिखते समय रुक जाता हूँ, सोचता हूँ कि काश पिताजी होते, उन्हें दिखा पाता, उनकी राय ले पाता। पर अब

वह आवाज नहीं सुनाई देती जो कहती थी, "बेटे, यह पंक्ति और बेहतर हो सकती है।" मैंने अपना पिता खोया, अपना गुरु खोया, और अपना सबसे अच्छा मित्र खोया। तीन रिश्तों की गहराई एक साथ छिन गई। पिता के रूप में उन्होंने मुझे स्नेह दिया, गुरु के रूप में उन्होंने मुझे ज्ञान दिया, और मित्र के रूप में उन्होंने मुझे समझा। अब कौन समझेगा मेरी चुप्पी में छिपी बातें? कौन पढ़ेगा मेरी आँखों में उमड़ते सवाल? कौन बनेगा मेरी सफलता का पहला साक्षी और असफलता का पहला सहारा? मैं हमेशा चाहता था कि मेरे पिता राजा की तरह रहें। उनका हर सुख, हर आराम मेरी ज़िम्मेदारी था। मैं चाहता था कि वे देखें मेरी उपलब्धियों को, मेरी बुलंदियों को। मैं चाहता था कि जब मैं जीवन में कुछ हासिल करूँ, तो सबसे पहले उनके चरणों में जाकर रखूँ। मैं चाहता था कि उन्हें मुझ पर गर्व हो, कि वे कह सकें, "हाँ, यह मेरा बेटा है।" मैं चाहता था कि उनकी छत्रछाया हमेशा मेरे सिर पर रहे, उनका आशीर्वाद हमेशा मेरे साथ चले। पर नियति को कुछ और ही मंजूर था। वे चले गए, और मेरे सभी सपने अधूरे रह गए। अब जब मैं कुछ हासिल करता हूँ, तो पहले उनकी तस्वीर की ओर देखता हूँ। उन स्थिर आँखों में ढूंढता हूँ वह चमक, वह गर्व, वह स्वीकृति। पर तस्वीर मौन रहती है, और मेरा हृदय टूट जाता है। पिता का न होना एक ऐसा घाव है जो कभी नहीं भरता। यह घाव दिखता नहीं, पर हर पल टीसता है। हर त्योहार पर, हर उत्सव पर, हर उपलब्धि पर, यह घाव ताजा हो जाता है। लोग कहते हैं समय सब भुला देता है, पर मैं कहता हूँ समय केवल जीना सिखाता है, भूलना नहीं। मैं जी रहा हूँ, पर उनकी याद में, उनके दिखाए रास्ते पर, उनकी दी हुई शिक्षा के साथ। माँ की ममता अनमोल है, यह सत्य है। पर पिता का सम्मान, उनका मार्गदर्शन, उनका अनुशासन, यह भी उतना ही आवश्यक है। पिता वह स्तंभ हैं जो घर को थामे रखते हैं, वह छत हैं जो परिवार को सुरक्षा देती है। उनके बिना घर, घर नहीं रहता, केवल दीवारें रह जाती हैं। आज मैं उन सभी लोगों से कहना चाहता हूँ जिनके पिता उनके साथ हैं, उन्हें थामे रखिए, उनका सम्मान कीजिए, उनके साथ समय बिताइए। क्योंकि जब वे नहीं रहेंगे, तो आपके पास सिवाय यादों के कुछ नहीं बचेगा। और यादें, वे सुकून भी देती हैं और तड़पाती भी हैं। मेरे पिता, मेरे गुरु, मेरे मित्र, आप भले ही इस संसार में नहीं हैं, पर मेरे हृदय में, मेरी साँसों में, मेरे हर शब्द में आप जीवित हैं। आपका आशीर्वाद मेरे साथ है, यह विश्वास मुझे जीने की शक्ति देता है। आपने मुझे जो दिया, वह अनमोल है। आपने मुझे जो सिखाया, वह अमूल्य है। मैं वादा करता हूँ कि आपके सपनों को पूरा करूँगा, आपके आदर्शों पर चलूँगा, और आपके नाम को गौरवान्वित करूँगा। मैं वादा करता हूँ कि जब भी मैं साहित्य की सेवा करूँगा, तो आपको याद करूँगा। जब भी मैं कुछ लिखूँगा, तो आपकी प्रेरणा से लिखूँगा। आप परलोक में हैं, पर मेरे लिए आप हमेशा मेरे सामने हैं, मेरे भीतर हैं, मेरे साथ हैं। आपका न होना मुझे दुखी करता है, पर आपकी यादें मुझे जीने की ताकत देती हैं। आप मेरे पिता हैं, मेरे गुरु हैं, मेरे मित्र हैं, और हमेशा रहेंगे। विनम्र श्रद्धांजलि।

दस्तक प्रभात/डॉ. पीयूष राजा

मगही सनेस

अब नयका डॉक्टर साहेब के कारनामा

इयाद आवऽ हे बालपन में कोई भी घर-बाहर के कोई भी पूछलन कि तू क्या बनवऽ, तोहर लाइफ के एम का हे? तो हमने लिखऽ हली डॉक्टर।अइसे भी उ जमाना में डॉक्टर के बड़का शान मान हल।आउ तऽ आउ समाज में डॉक्टर आउ इंजीनियर दूनों लोग के बड़ी क्रेज हल। इ हम तू सब जानऽ हे...कि भारतीय समाज में डॉक्टर के दूसरा भगवान कहल जाहे।आझ समाज में डॉक्टर के मान अपना मगहिया समाज में खूब बनल हे।चाहे उ वैध जी, चाहे आरएमपी रहथुन, चाहे होम्योपैथिक डॉक्टर, चाहे सर्जन इया फिजिशियन बन जाए।बकि इ का कहियो एने 10-15 दिन से रोज-रोज के जे समाचार आ रहलो हे, जे मन के एक कोना में बड़गर छेद कर रहल हे।दिल्ली मेरठ, अलीगढ़, लखनऊ सहित देश के केतनन जगह हे जहां मेडिकल कॉलेज में डॉक्टरी के नाम पर आतंकवादी के पढ़ाई आउ रिश्ता नाता जोड़ के ओकर डोरी के आउ मजबूत बनावल जा रहल कि जान समझ के बड़ लोग के माथा खनक गेल।सेवा भाव के लेले डॉक्टरी पढ़े के क्रम में आतंकवादी के पढ़ाई पढ़े वालन कितना रोगी के भला इलाज करतन। बड़गर संकल्प भाव के पूर्ण प्रताप लेले इ सब पवितर सेवा के चीज अब पूरा पेशा में बदल गेल। एक हाथ से पइसा फेंकऽ दूसर हाथ से इलाज होतो। आझ भी भारतीय डॉक्टर के सम्मान समूचे संसार में हे आउ अभी भी सौभाग्य के बात

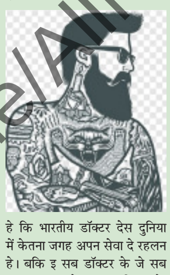

हे कि भारतीय डॉक्टर देस दुनिया में केतना जगह अपन सेवा दे रहलन हे। बकि इ सब डॉक्टर के जे सब हाल-चाल देख रहलथिन हे, इनकर का इज्जत रहत।डॉक्टर के मतलब होवऽ हे जीवन देवे वाला, नऽ कि जीवन लेवे वाला। झगड़ा, फसाद, दंगा आउ आतंकी करे वाला।अभी जम-जम के जांच पड़ताल हो रहलो हे।एकर डोर दूसरा-दूसरा देस के आतंकवादी संगठन से भी मिल रहलो हे, इ बड़ी शर्म के बात हे।इ आंतक के आग में जिए वाला डॉक्टर दूसरा के दुःख दरद से भला केतना निकालतन।इ सब के पहचान-पहचान के देस निकाला के सजा देना बहुत जरूरी हे। जानकार लोग के मानना हे कि इ नाम पर भारत देस के हर एक मेडिकल कॉलेज में फिन से एक बार नया सिरा से सतही जांच होवे।देस के तोड़े आउ गड़बड़ काम में संलिप्त लोग एकरा में लगल हथ।डॉक्टरी के पढ़ाई कर रहल सम्मान के सबसे ऊंचा पद जउन समाज में अपन साख बनएले हे ओकरा गिरावे में अपने कोई कसर नऽ छोड़ रहलन हे।इ सब के देखते अब कड़ा से कड़ा दंड आउ सजा देना भी बहुत जरूरी हे। एकरा पर बड़ी साफ-साफ ध्यान देना जरूरी हे। बड़ी लोग के कामना हे कि डॉक्टर जे सबके स्वस्थ्य काया बनावऽ हथ, उनकर माध्यम से विदेशी आतंकी संगठन भारत में अपन काम बना रहलो हे, अपना गोटी सजा रहलो हे।एकरा पर खुफिया विभाग के भी निगाह लगा के रखे पड़तो नऽ तो फिन लोग डॉक्टर के नाम पर अपना बाल बच्चा के डॉक्टरी कॉलेज में मेडिकल पढ़ाई के पर नाम लिखवाना तक छोड़ देथिन।

दस्तक प्रभात
डॉ.राकेश कुमार सिन्हा'रवि'

हम हँसें जग रोए

जीवन के धरातल पर सृष्टि के विस्तृत आँगन में हमारा अवतरण होता है। हम जब शरीर के विभिन्न अवयवों का मूल्यांकन करते हैं तो पाते हैं कि वे अपने आप में परिचय के मोहताज नहीं हैं। सबकी अपनी-अपनी उपयोगिता है। दर्शन, स्पर्श, रस, गंध, स्वर, लय सब एक दूसरे के साहचर्य में एक सुन्दर समन्वय प्रतिबिंबित करते हैं। एक के बिना दूसरे की कोई कल्पना है क्या? कोई अस्तित्व है? दो आँखें जिसमें जीवनरस छलकता है, जीवन दर्शन का एक रसकलश छलकता है। दो सहज सरल कमलिनी जिसमें मोतियों से भरा एक बहुमूल्य स्रोत है- एक जीता-जागता मयखाना। ये आँखें मदहोशी को अपने गलियारों में छिपाते हुए, रूप को अपनी छोटी- सी डिबिया में कैद कर, बड़ी युक्तिपूर्वक अपने प्रिय को सँजोकर, सँवारकर, निथारकर रखती हैं। फिर भी दर्शन की प्यासी ही रहती हैं। कभी तृप्ति का स्वाद इन्होंने चखा ही नहीं है। ये नित्य नवीनता का आग्रह करती हैं। पागल हो जाती हैं, बौरा जाती हैं। इनकी व्यग्रता थमती नहीं है। दर्शन क्या हुआ, तड़पन और बढ़ने लगी। रूप-सौन्दर्य से मुग्ध भ्रमर तो पंखुड़ियों में आबद्ध हैं। प्रेम की प्यास का प्याला सर्वदा सूखा ही रहता है। इस व्यथा को 'मतिराम' ने बड़ी ही सूक्ष्मता से देखा है - "ज्यों ज्यों निहारिये नेरे ह्वै नैननि, त्यों त्यों खरी निकरै सी निकाई।।" बड़ी विचित्र बात है। मन-मस्तिष्क सूँघने लगता है। अपनी टेढ़ी-मेढ़ी गलियारों से अन्तस की कोठरी में दावेदारी करता है। धरावतरण होते ही इसकी कार्यशैली, इसकी गतिविधियाँ अनियंत्रित हो जाती हैं। ये समूचे संसार को आँखें घुमा-घुमाकर देखती हैं, निरीक्षण करती हैं। जन्मोत्सव में सभी उत्सव की खुशबू में नहा रहे हैं और ये आँखें संसार को देखकर अपने उत्स खोल देती हैं। ये अबाधगति से बहती चली जा रही हैं। चहुँ ओर दिशाओं में आँखों की पुतलियों को दौड़ा रही हैं, क्षुब्ध हो रही हैं। भला क्या है इस संसार के रंगमंच पर जो दर्शकगण अभिनंदन के लिए, शुभागमन के लिए, नए पौध की हरीतिमा के लिए स्नेह, अनुराग के मधुर स्वर से मंगलगान कर रहे हैं। स्वागत गान में मधुर स्वर, मधुर वाद्य का सुन्दर समन्वय है। कौतूहल, आह्लाद, उत्सुकता का मनोहारी परिदृश्य है। वंशलता की शाखाओं-प्रशाखाओं में डालियों पर थिरकने की होड़ है लेकिन आँखों में एक जिज्ञासा, एक विचित्र गूढ़ता का समावेश है। एक संपूर्ण, परिपूर्ण संसार का मूल्यांकन करने की चतुर दृष्टि, एक निर्निमेष दृष्टि, एक संवेदना में घुली-मिली दृष्टि होती है। स्वागत गान क्यों हो रहा है? इस मंच का क्या स्थायित्व है? अब इस मंच से विदाई हो रही है, पटाक्षेप हो रहा है। फिर आँखें अपनी नयी भूमिका में मंच से विदाई ले रही हैं। विदा की बेला में एक बार फिर इस रंगमंच का निरीक्षण कर लेना चाहती हैं, दृश्यों को समेटना चाहती हैं, भींगी आँखों से दृश्यपटल को हृदय में उतारना चाहती हैं। लेकिन इस दृश्य में जो चित्र अंकित होता है, वह बिल्कुल भिन्न है। इसमें तो शरीर के सारे अवयव क्षीण हो रहे हैं- वाक बंद है, अभिव्यक्ति शिथिल है। अब नैन कमल में मोतियों का उद्योग बन्द होने की कगार पर है। लोगों के उत्साह, उमंग की गठरी औंधे मुँह पड़ी हुई है। लोग अश्रुपूरित आँखों से विदा कर रहे हैं। आत्मा और परमात्मा का चिर मिलन हो चुका है। कपाट बन्द है, अब इन आँखों का क्या काम? युक्तिपूर्वक सहेज, सँवारकर इन्हें परमात्मा को लौटा देने के लिए सजग प्रहरी की आवश्यकता है। कबीर की यह युक्ति द्रष्टव्य है - "कबीरा जब हम पैदा हुए, जग हँसे हम रोएँ। ऐसी करनी कर चलो हम हँसे जग रोए।।"

दस्तक प्रभात/ डॉ.सुशील ओझा

प्रभात प्रोडक्शन की फिल्में सामाजिक जीवन की वास्तविकता का चित्रण दर्शाती हैं

प्रभात वर्मा की प्रभात फिल्म्स प्रोडक्शन की सभी फिल्में लोकप्रिय फिल्म है। चाहे वह विधान नाच नचावे हो या फिर भूख, निखट्ठू, आंसू, कामसूत, साधना, तन्हाई या फिर लिलकहवा इन सभी फिल्मों में ग्रामीण परिवेश का गजब का चित्रण किया गया है। फिल्म अपने विभिन्न सामाजिक उद्देश्यों को लेकर बनायी गई है। इन फिल्मों के निमार्ता निर्देशक और अभिनय करने वाले प्रभात वर्मा ने अपने सभी फिल्मों के माध्यम से दर्शकों के बीच बहुत बढ़िया संदेश दिया है खासकर उनकी फिल्म विधना नाच नचावे तो देखते ही बनती है जिसे सभी सिनेमा घरों में अपना

लड़ सकता है। अपने व्यकिगत छवि और लोगों का मिला साथ की बदौलत

आधिपत्य स्थापित कर दिखाया है इसका एक संदेश यह है कि लोकतंत्र में चुनाव लड़ने के लिए अमीर होना जरूरी नहीं है। एक गरीब भी चुनाव नाटू दास की जीत होती है। वहीं दूसरी ओर ताकत और पैसे की हार होती है। फिल्म के इन दृश्यों ने कई महत्वपूर्ण संदेश एक साथ दिए हैं। फिल्म अन्य कई दृष्टियों से महत्वपूर्ण है। फिल्म में मास्टर साहब का किरदार निभाने वाले प्रभात वर्मा का आदर्श व्यक्तित्व लोगों को काफी भाता है। फिल्म के मनमोहक एवं कर्णप्रिय गाने सुन गुनगुनाने का मन करता है। कुल मिलाकर प्रभात वर्मा की फिल्मों में महान पारिवारिक एवं सामाजिकता का समावेश है। जकड़ते सामाजिक कुरीतियों, संस्कारविहीन होते नई पीढ़ीयों सहित अन्य कई सामाजिक समस्याओं से मुक्ति के लिए इस तरह के शिक्षाप्रद फिल्मों की जरूरत है। सरकार को इस तरह के फिल्मों के निमार्ताओं को हरसंभव मदद करनी चाहिए, जो उनके उनके कार्यक्रम गुना को निकट से देखा है वैसे मुख्यमंत्री भी प्रभात वर्मा की फिल्मों का कद्र तो जरूर करते हैं लेकिन उन्हें सहयोग किसी तरह का सरकारी नहीं दिलवा पाए। अब तो यह फिल्म यूट्यूब पर लोड कर दिया गया है, जिसे देश दुनिया के कोई भी व्यक्ति अपने मोबाइल पर इसे सहजता से देख सकते हैं और

बस एक प्रार्थना निमार्ता की ओर से अपनी ओर से कि आप यूट्यूब पर फिल्म को देखिए जरूर और सब्सक्राइब कर दीजिए ताकि निमार्ता

पभात वर्मा जो एक नई फिल्म बनाने जा रहे हैं मगही भाषा में लोर और हिंदी में आंसू उनका उत्साह बढ़ता रहे।

दस्तक प्रभात/ सुधांशु राय

मॉ-तुम कहां हो?

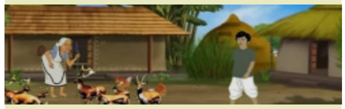

कभी-कभी जिंदगी इतनी चुपचाप, बेरहम ढंग से करवट लेती है, कि ना शब्द बचते हैं नहीं आंसू काफी होते हैं। एक तीन साल का मासूम बच्चा उसकी दुनिया में सिर्फ एक ही नाम गूंजता था, मां।हर चीज मां से शुरू और मां पर खत्म, वो मां के साथ लुका छिपी खेलता था, कभी पर्दे के पीछे तो कभी दरवाजे के पीछे, वो हंसता, दौड़ता पुकारता ---- मां -- तुम कहां हो? मिल गईं ---जैसे संसार की खुशी एक तरफ तो दूसरी ओर मां!लेकिन ये क्या? अविश्वसनीय घटना? अब मां सचमुच छिप गई-हमेशा हमेशा के लिए। इस बार वो न पर्दे के पीछे न दरवाजे के पीछे है। मां सचमुच नहीं आयेगी, लेकिन बच्चा तो अबोध है, उसे अब भी लगता है-शायद मां कहीं छिप गई है।बच्चा इधर-उधर ढुंढता है, पर्दे हटाता है, दरवाजे के पीछे झांकता है और मासूम सी आवाज में रोते हुए फिर से कहता है-मां-तुम कहां हो? प्लीज आ जाओ ना मां, मैं हार जाऊंगा मां, तुम जीत जाओगी मां। बच्चे को लगता है, अभी भी लुका छिपी का खेल चल रहा है। और मां उसे कहीं न कहीं से आयेगी और उसे बांहों में भर लेगी।लेकिन सच तो सच है वह कभी नहीं आएगी।जब वो कहता है-मां के पास जाऊंगी-मां तुम कहां हो?यह सुनकर घर की दीवारें भी कांप जाती है, जब मां-मां-की जिद करता है, तो वहां हर व्यक्ति की आंखें छलक उठती है।उसके हर सवाल का जवाब किसी के पास नहीं है। हर पुकार अब सन्नाटे में खो जाती है! इस दुनिया की सबसे करुण मार्मिक पुकार है -- "मां -- तुम कहां हो?" यह सिर्फ एक बच्चे की कहानी नहीं है यह उन लाखों मासूम दिलों की टीस है जिसे शब्दों में बयां नहीं किया जा सकता है।

दस्तक प्रभात/बलराम राठौर

https://t.me/AllNewsPapersPaid

स्वत्वाधिकारी प्रकाशक, मुद्रक व सम्पादक प्रभात वर्मा द्वारा चित्रांश प्रिन्टर्स, हरनाहा टोला, पटना- 8 में मुद्रित व न्यू कॉलनी, चित्रांश कुटी, हरनाहा टोला, पटना- 800008 से प्रकाशित
दूरभाष- 9334978033, 9304341881, नोट- समाचार-पत्र में प्रकाशित समस्त लेख एवं समाचारों की जिम्मेवारी लेखकों एवं पत्रकारों की होगी

Machine Translated by Google

नया हिसाब

नीतीश कुमार के दसवें कार्यकाल से बिहार में आर्थिक बदलाव आना चाहिए

मुख्यमंत्री के रूप में शपथ लेने के साथ ही

बिहार में NDA की सरकार के बाद, नीतीश कुमार ने राज्य की कमान संभालते हुए कुल मिलाकर अपना दसवां टर्म शुरू किया है। यह शानदार पॉलिटिकल लंबा समय न सिर्फ उनकी पर्सनल समझ को दिखाता है, बल्कि JD(U) के चुनावी परफॉर्मेंस को भी दिखाता है, जिससे पार्टी ने अपनी पिछली सीटों को दोगुना करके 85 सीटें जीतीं। उनकी सफलता का श्रेय काफी हद तक उस सोशल गठबंधन को जाता है जिसे उन्होंने इतने सालों में मेहनत से बनाया है। EBC और दलितों के बीच JD(U) का सपोर्ट बेस, जिसे इन तबकों की महिलाओं से मिले अच्छे सपोर्ट से और बढ़ाया गया है, ने BJP और दूसरे NDA सहयोगियों के सपोर्ट बेस को और बढ़ाया है। इस मल्टी-कास्ट, मल्टी-क्लास गठबंधन ने गठबंधन को विपक्षी महागठबंधन पर एक निर्णायक सोशल बढ़त दी, जिससे उसे एंटी-इनकंबेंसी से बचने में मदद मिली। वोटरों ने मिस्टर कुमार के लगातार बदलावों के बजाय वेलफेयर डिलीवरी को प्राथमिकता दी है, यह दिखाता है कि मौजूदा सरकारों को अलग रखने में टारगेटेड फायदे कितने असरदार हैं। फिर भी, चुनावी जीत उस कड़वी सच्चाई को छिपा नहीं सकती जिसका सामना सत्तर साल के नेता को करना पड़ रहा है। बिहार लगभग हर सोशियो-इकोनॉमिक इंडिकेटर में सबसे नीचे है। यह बाहर जाने वालों का सबसे बड़ा सोर्स बना हुआ है, जो रोज़गार के कम मौकों का नतीजा है। इसकी इकॉनमी एक बुरे चक्कर में फंसी हुई है: ज़मीन के टुकड़े और मालिकाना हक के एक जगह होने से खेती में रुकावट आ रही है, और सर्विस सेक्टर ज़्यादातर सरकारी रोज़गार पर निर्भर है।

ऑर्गनाइज़्ड इंडस्ट्री का लगभग न होना और इन्वेस्टमेंट न ला पाना, सरकार की नाकामी को दिखाता है जो पॉलिटिकल पार्टीबाज़ी से कहीं ज़्यादा है। सालों से सरकार ने सड़क और पुल बनाने को प्राथमिकता दी है, जबकि शिक्षा और स्वास्थ्य पिछड़ गए हैं।

विपक्ष इन कमियों का फ़ायदा नहीं उठा पा रहा है, यह साफ़ दिख रहा है। RJD का सीमित सोशल गठबंधन, कांग्रेस की ऑर्गनाइज़ेशनल कमज़ोरियाँ, और लेफ़्ट का कुछ खास लोगों से जुड़ाव, आर्थिक तंगी को पॉलिटिकल मोमेंटम में बदलने में नाकाम रहे हैं। वेलफ़ेयर डोल्स ने भी साफ़ तौर पर सरकार को बचाया है। हालाँकि, विपक्ष की कमी सरकार के आर्थिक रिकॉर्ड की आलोचना को गलत नहीं ठहराती। कोई राज्य ट्रांसफ़र पेमेंट और मुफ़्त चीज़ों पर आगे नहीं बढ़ सकता। JD(U) के केंद्र में अहम जगह होने के कारण, नई सरकार के लिए इसी रास्ते पर चलते रहने का कोई बहाना नहीं है। सरकार को टिकाऊ रोज़ी-रोटी पक्की करने की ओर ध्यान देना चाहिए। फ़ूड प्रोसेसिंग जैसे सेक्टर को बढ़ावा देना, बिहार की खेती की उपजाऊ शक्ति का फ़ायदा उठाना, और इन्वेस्टमेंट के लिए अच्छा माहौल बनाना ज़रूरी है।

ज़्यादा बड़े कदम, जिसमें ज़मीन सुधार शामिल है, जिससे ज़मीन गैर-मौजूद ज़मीन मालिकों से बटाईदारों को ट्रांसफर हो जाती है, राजनीतिक रूप से मुश्किल हो सकते हैं, लेकिन ज़रूरी हैं। श्री कुमार के दसवें कार्यकाल को चुनावी गणित से नहीं, बल्कि इस बात से मापा जाना चाहिए कि क्या यह बिहार के विकास की राह में एक अहम मोड़ है।

एपस्टीन एक्सपोजर

इन खुलासों से ट्रंप को राजनीतिक रूप से बहुत नुकसान हो सकता है

ए महीनों तक राजनीतिक खुलासे से जूझने के बाद, अमेरिकी राष्ट्रपति डोनाल्ड ट्रम्प ने आखिरकार कांग्रेस द्वारा पारित एक विधेयक पर हस्ताक्षर कर दिए हैं, जो न्याय विभाग को यौन अपराधी और बदनाम नैन्सी एपस्टीन की जांच से संबंधित सबूत जारी करने का आदेश देता है, जिनकी 2019 में जेल में मृत्यु हो गई थी। राष्ट्रपति की सहमति प्रभावी रूप से राजनीतिक विभाजन के दोनों पक्षों, डेमोक्रेट और रिपब्लिकन, के भारी दबाव के आगे उनकी रियायत थी, जिन्होंने एपस्टीन के संचार पर प्रकाश डालने के लिए एक मजबूत अभियान चलाया था, जिसमें श्री ट्रम्प के साथ या उनका उल्लेख भी शामिल था। प्रतिनिधि सभा ने एपस्टीन से संबंधित कानून को 427-1 वोट से पारित कर दिया, और सीनेट ने इसे सर्वसम्मति से पारित करने के लिए सहमति दे दी, न्याय मंत्रालय को एप्स्टीन की जांच से जुड़े सभी सबूत 30 दिनों के अंदर जारी करने होंगे, जिसमें सिर्फ़ उसके पीड़ितों की जानकारी में बदलाव की इजाज़त होगी, दूसरों की जानकारी में नहीं, जिससे कोई "शर्मिंदगी, प्रतिष्ठा को नुकसान, या राजनीतिक संवेदनशीलता" पैदा हो सकती है।

एपस्टीन मामले में इस मोड़ का बड़ा मतलब यह है कि मिस्टर ट्रंप की एपस्टीन के साथ दोस्ती पक्की बात है, भले ही प्रेसिडेंट ने एपस्टीन के क्रिमिनल कामों के बारे में कोई जानकारी होने से इनकार किया है और कहा है कि उन्होंने सालों पहले रिश्ते तोड़ लिए थे। असल में, भले ही किसी के क्रिमिनल होने का कोई ज़िक्र नहीं था, लेकिन मिस्टर ट्रंप का नाम एपस्टीन की प्रॉपर्टी के 20,000 पन्नों के उन डॉक्यूमेंट्स में बड़े अक्षरों में लिखा था, जिन्हें कांग्रेस के सांसदों ने हाल ही में दोबारा जारी किया है। जानकारी से पता चलता है कि एपस्टीन ने UK के पूर्व प्रिंस एंड्रयू, मिस्टर ट्रंप के पूर्व सलाहकार स्टीव बैनन और हार्वर्ड के पूर्व प्रेसिडेंट लैरी समर्स समेत कई दूसरे जाने-माने सोशल एलीट लोगों से बातचीत की थी। ऐसा लग रहा है कि मिस्टर ट्रंप ने खुद से और अपने साथियों से ध्यान हटाने की कोशिश करते हुए, सबूत जारी करने की मांग मान ली है। उन्होंने यह भी कहा है कि वह अटॉर्नी जनरल पैम बॉन्डी को यह जांच करने का निर्देश देंगे कि एपस्टीन के पूर्व प्रेसिडेंट बिल क्लिंटन, जेपी मॉर्गन और चेस बैंकों, और लिंक्ड-इन के फाउंडर रीड होमन, जो एक डेमोक्रेटिक डोनर हैं, के साथ क्या लिंक हो सकते हैं।

सबूतों से जो भी पता चले, यह साफ़ है कि मिस्टर ट्रंप का एक बड़े क्रिमिनल के साथ कनेक्शन रहा है, जो नाबालिगों और शायद महिलाओं के खिलाफ़ सेक्स क्राइम का दोषी है। सवाल यह है कि क्या वोटर, खासकर उनके कंज़र्वेटिव सपोर्टर्स में शामिल महिलाएं, इस कनेक्शन को मिस्टर ट्रंप से पीछे हटने का सही कारण मानेंगी?

ट्रम्प और आम तौर पर MAGA पॉलिटिक्स से।

बिहार चुनाव 2025 में 'गेम-चेंजर'

Suhas Palshikar

पुणे में रहने वाले पॉलिटिकल साइंस के रिटायर्ड प्रोफेसर हैं

ए ज़बरदस्त राजनीतिक जीत से अक्सर यह सवाल उठता है कि क्या कोई गेम-चेंजर था। यह कहना कि जीत कई वजहों के अच्छे मेल से हुई, कम आकर्षक लगता है। एनालिस्ट गेम-चेंजर खोजने के लिए ललचाते हैं ताकि एक नाटकीय दिखने वाले नतीजे को उतने ही नाटकीय दिखने वाले नए फॉर्मूलेशन से समझाया जा सके। जीतने वालों को, अपनी तरफ से, बड़ी कहानी की ज़रूरत होती है क्योंकि ऐसी कहानी एक ऐसी कहानी को आगे बढ़ाती है जो चुनावी जीत के तुरंत बाद के दायरे से आगे उनकी मदद कर सकती है। हाल ही में बिहार में हुए असेंबली इलेक्शन में, जिसके नतीजे में नेशनल डेमोक्रेटिक अलायंस (NDA) ने लगभग आधे वोट जीते और असेंबली में लगभग 90% सीटें जीतीं, यह राज्य चुनाव ऐसा मामला लगता है जहाँ कुछ खास वजहों ने इस बड़े पैमाने पर जीत दिलाई होगी।

नया संयोजन विपक्ष ने महिलाओं के लाभ के लिए राज्य सरकार द्वारा तैयार की गई आखिरी मिनट की योजना और वास्तविक अभियान के शुरू होने के समय के आसपास नकद हस्तांतरण पर आपत्ति जताई, महिलाओं का वोट महत्वपूर्ण कारक के रूप में सामने आया जिसने एनडीए को इसकी बड़ी जीत दिलाई। मतदाता मतदान के मामले में महिलाओं की संख्या पुरुषों से अधिक थी, इस तर्क को और अधिक विश्वसनीयता प्रदान करती है। कम से कम कुछ हलकों के अनुसार, एक अन्य कारक युवा मतदाता है। यह दावा किया जाता है कि उनके भारी समर्थन ने एनडीए को यह नाटकीय जीत दर्ज करने में मदद की। दरअसल, राष्ट्रीय जनता दल (राजद) ने भी हर घर के लिए एक सरकारी नौकरी का वादा किया था, लेकिन कई लोगों का मानना है कि भारतीय जनता पार्टी (भाजपा) की एक करोड़ सरकारी नौकरियों की बात ने दिन चुरा लिया।

एक करोड़ लखपति के वादे के साथ दीदी (सालाना ₹1 लाख इनकम वाली महिलाएं) के नारे ने वोटरों के बीच असर डाला होगा। या ऐसा कहा जा रहा है। इससे यह दावा किया जा रहा है कि एक नया MY कॉम्बिनेशन — जो महिला और युवा है, जबकि कुछ विपक्षी पार्टियां मुस्लिम और यादव वोटों पर निर्भर हैं — बिहार में NDA की जीत की नींव बना।

यह तर्क असरदार और आकर्षक लगता है। असरदार इसलिए क्योंकि जीत के पैमाने और इस बात से कोई भी हैरान है कि NDA और जनता दल (यूनाइटेड), या JD(U) के नीतीश कुमार, खासकर एंटी-इनकंबेंसी के भूत को आराम से भगाने में कामयाब रहे हैं।

यह आकर्षक भी है, क्योंकि यह न केवल इस बात का स्मार्ट जवाब देता है कि NDA कैसे जीता। यह संभावित रूप से एक नई भाषा की शुरुआत भी करता है।

> NDA की जीत का पैमाना ज़बरदस्त था, लेकिन नए 'MY' वोट के असर का और करीब से एनालिसिस करने की ज़रूरत है।

> — महिला (महिलाएं) और युवा (युवा-मत)

बिहार और दूसरे चुनावों का पॉलिटिकल एनालिसिस बताता है कि जाति/समुदाय के बजाय, वादे और परफॉर्मेंस चुनावी नतीजे तय करते हैं।

लेकिन MY वोट के गेम-चेंजर होने की यह दलील कितनी सही है?

सबसे पहले, महिलाओं के वोटिंग के बारे में एक छोटी सी याद दिला दें। हाँ, महिला और पुरुष वोटिंग के बीच लगभग नौ परसेंटेज पॉइंट्स का बहुत बड़ा अंतर है। अपने आप में, यह बहुत बड़ी बात है। लेकिन अगर हम पिछले डेढ़ दशक के बिहार असेंबली टर्नआउट डेटा को देखें, तो हम पाते हैं कि पुरुषों की तुलना में महिलाओं का टर्नआउट परसेंटेज के हिसाब से हमेशा ज़्यादा रहा है। 2015 में, यह इस बार जैसा ही था — पुरुषों की तुलना में 7% ज़्यादा।

जिन्होंने बिहार को लंबे समय तक देखा है, यह बताया गया है कि बाकी सभी चीज़ों के अलावा, पुरुषों का माइग्रेशन (और इस वजह से वोटिंग से गैर-मौजूदगी) इस गड़बड़ी की एक अहम वजह है। लेकिन अगर हम यह भी मान लें कि महिला वोटरों में ज़्यादा मोबिलाइज़ेशन, अवेयरनेस और एजेंसी की वजह से महिलाओं का टर्नआउट ज़्यादा था, तो भी यह वजह कम से कम 2025 के लिए नई नहीं है।

दूसरा, क्या हमारे पास इस बात के काफ़ी सबूत हैं कि पुरुषों के मुकाबले ज़्यादा महिलाओं ने NDA को वोट दिया, ताकि इस बड़ी लहर को समझा जा सके? पक्का, पुरुषों के मुकाबले ज़्यादा महिलाओं ने NDA को वोट दिया: PollsMap सर्वे का डेटा, जो इस लेखक के पास था, दिखाता है कि 46% पुरुष वोटरों ने NDA को सपोर्ट किया, जबकि लगभग 48% महिलाओं ने कहा कि उन्होंने NDA को वोट दिया। महागठबंधन के लिए, यह हिस्सा क्रम से 39% और 37% था। तो, NDA को जेंडर एडवांटेज मिला। हालांकि, यह साफ़ नहीं है कि जीत की वजह कोई एक खास वजह थी या नहीं।

तीसरा, 2015 के सर्वे डेटा से पता चलता है कि NDA (जिसमें तब JD(U) शामिल नहीं था) को जेंडर के आधार पर नुकसान हुआ क्योंकि उसे पुरुषों की तुलना में महिलाओं से 2% कम वोट मिले थे। 2020 में, जब JD(U) NDA में शामिल हुआ, तो NDA को पुरुषों की तुलना में महिलाओं से 1% ज़्यादा वोट मिले।

दूसरे शब्दों में, पूरी संभावना है कि JD(U) जिस भी अलायंस में शामिल होती है, उसमें थोड़ी ज़्यादा महिला वोटर लाती है। मज़े की बात यह है कि जहाँ JD(U) को ज़्यादा महिला वोट मिलते हैं, वहीं BJP कुल मिलाकर ज़्यादा पॉपुलर पार्टी है — जब उनसे पूछा गया कि अगर कोई अलायंस नहीं होता तो वे किस पार्टी को वोट देते, तो 37% ने कहा कि वे BJP को वोट देते। BJP के बिना JD(U) हार जाती, लेकिन BJP को JD(U) के ज़रिए महिला वोट मिलते हैं।

युवा मतदाताओं पर

वोटरों के एक बहुत बड़े हिस्से ने बेरोज़गारी को सबसे ज़्यादा बताया राज्य के सामने यह एक बड़ी समस्या है। इसलिए, जिस पार्टी या गठबंधन ने इस मुद्दे को सुलझाने का वादा किया होता, उसे ज़रूर फ़ायदा होता। एक करोड़ सरकारी नौकरियों के अपने वादे के साथ, क्या NDA को युवाओं का वोट मिला? यहाँ भी कहानी थोड़ी उलझी हुई है।

25 साल से कम उम्र के वोटर्स में, NDA को लगभग 50% वोट मिले। 26-35 साल के एज ग्रुप वालों में, NDA को 45% लोगों का सपोर्ट मिला। लेकिन हैरानी की बात है कि 2015 में, जब महागठबंधन जीता था, तो NDA को 25 साल से कम उम्र के वोटर्स के बीच तुलना में ज़्यादा फ़ायदा था। 2020 में, जब यह जीता, तो मज़े की बात यह है कि इस एज ग्रुप (35%) में इसे अपने कुल सपोर्ट (37%) के मुकाबले थोड़ा कम सपोर्ट मिला। इसलिए, युवाओं की पॉलिटिकल पसंद कुछ हद तक ulid है और इससे किसी पार्टी की जीत का स्केल आसानी से बदलने की उम्मीद कम है।

वोटर के व्यवहार का मुद्दा: खास तौर पर, भले ही युवाओं से नई पार्टी, विपक्ष या ज़्यादा आक्रामक कैंपेनर को ज़्यादा वोट देने की उम्मीद की जा सकती है, लेकिन यह साफ़ नहीं है कि भारत में कोई ऐसा युवा वोटर ग्रुप है जो अक्सर एक खास तरह से व्यवहार करता है।

ज़्यादा चिंता की बात यह है कि चाहे महिलाएं हों या युवा, उनके वोट की पसंद मोटे तौर पर उस क्लास और कम्युनिटी की पसंद से मेल खाती है जिससे वे जुड़े हैं। दूसरे शब्दों में, अगर किसी खास क्लास ग्रुप या कम्युनिटी के NDA को वोट देने की संभावना कम है, तो उस सोशल सेक्शन की महिलाओं या युवा वोटरों के भी NDA को वोट देने की संभावना कम है। बिहार विधानसभा चुनाव 2025 में, अपर और मिडिल क्लास और ऊंची जातियों ने बड़े पैमाने पर NDA को वोट दिया। इसी तरह, उनमें से महिलाओं और युवाओं ने भी उतनी ही बड़ी संख्या में NDA को वोट दिया।

यह उस सवाल से मेल खाता है जो राजेश्वरी देशपांडे जैसे जानकार महिलाओं के वोट के बारे में उठाते रहे हैं: क्या महिलाएं ज़रूरी नहीं कि जिस कम्युनिटी से वे जुड़ी हैं, उससे अलग वोट करें? या उनका वोटिंग पैटर्न जाति/कम्युनिटी के फैक्टर से बनता है?

गेम-चेंजर होने की बात करना नेता और एनालिस्ट दोनों के लिए काम की बात है। लेकिन, बिहार 2025 इस बुनियादी चिंता को दिखाता है कि जेंडर फैक्टर (और अब उम्र फैक्टर) में खासियत को क्लास-कास्ट फैक्टर से अलग करके दिखाया गया है।

सीधे शब्दों में कहें तो, हम कह सकते हैं कि महिलाओं के वोट और युवा वोटरों में थोड़ी बढ़त ने ज़रूर NDA की मदद की। हालांकि, यह सवाल कि क्या 'मेरे वोट ने पासा पलट दिया', इसके लिए कई दूसरे फैक्टर्स का ज़्यादा ध्यान से एनालिसिस करने की ज़रूरत है।

भारत की मत्स्य पालन और जलीय कृषि, इसका आशाजनक मार्ग

ताकायुकी हागीवारा

भोजन है और कृषि संगठन संयुक्त राष्ट्र (एफएओ) प्रतिनिधि भारत और इसका कुछ भाग
भारत में संयुक्त राष्ट्र की टीम

एफ मत्स्य पालन और जलीय कृषि भारत के प्रमुख उद्योगों में से हैं सबसे तेजी से बढ़ते खाद्य उत्पादक क्षेत्रों, रोज़ी-रोटी, न्यूट्रिशन और ट्रेड में अहम भूमिका निभा रहा है। पिछले कुछ दशकों में, भारत ने पानी में मिलने वाले खाने के प्रोडक्शन में ज़बरदस्त बढ़ोतरी देखी है, जो टेक्नोलॉजिकल इनोवेशन, इंस्टीट्यूशनल सपोर्ट और प्रोएक्टिव पॉलिसी उपायों से आगे बढ़ी है। फिर भी, इस सेक्टर को बड़ी चुनौतियों का सामना करना पड़ रहा है।

ओवरशिंग, हैबिटैट डिग्रेडेशन, वॉटर पॉल्यूशन और क्लाइमेट चेंज पानी के इकोसिस्टम पर दबाव डाल रहे हैं। छोटे किसानों और किसानों तक अक्सर फंड, टेक्नोलॉजी और मार्केट की पहुंच नहीं होती है, जबकि खराब ट्रेसेबिलिटी और कटाई के बाद के अधूरे उपाय सबसे अच्छे एक्सपोर्ट और घरेलू मार्केट पोटेंशियल का इस्तेमाल कम करते हैं और फूड सिक्योरिटी से समझौता करते हैं।

विश्व मत्स्य पालन दिवस 2025 (21 नवंबर) पर, संयुक्त राष्ट्र के खाद्य एवं कृषि संगठन (FAO) ने भारत की नीली क्रांति के लिए नए सिरे से प्रतिबद्धता की अपील की है और इस साल भारत सरकार की थीम "भारत का नीला परिवर्तन: समुद्री खाद्य निर्यात में मूल्य संवर्धन को मजबूत करना" का समर्थन किया है।

शेरीज़ और एक्वाकल्चर में भारत की ग्रोथ FAO स्टेट ऑफ़ वर्ल्ड फिशरीज़ एंड एक्वाकल्चर (SOFIA) 2024 के अनुसार, ग्लोबल कैप्चर शेरीज़ ने 2022 में 92.3 मिलियन टन का प्रोडक्शन किया, जबकि एक्वाकल्चर रिकॉर्ड 130.9 मिलियन टन तक पहुँच गया, जिसकी वैल्यू $313 बिलियन थी। भारत ने 10.23 मिलियन टन एक्वेटिक जानवरों का कंट्रीब्यूशन दिया, जिससे यह दुनिया का दूसरा सबसे बड़ा एक्वाकल्चर प्रोड्यूसर बन गया।

भारत का पानी में मिलने वाला खाना, जिसमें मछली पकड़ना और एक्वाकल्चर शामिल है, 1980 के दशक के 2.44 मिलियन टन से बढ़कर 2022-23 में 17.54 मिलियन टन हो गया है। एक्वाकल्चर इस ग्रोथ के मुख्य कारणों में से एक बनकर उभरा है, जो एडवांस्ड टेक्नोलॉजी, इंफ्रास्ट्रक्चर और इंस्टीट्यूशनल सपोर्ट के ज़रिए सेक्टर के मॉडर्नाइज़ेशन को दिखाता है।

इंडियन काउंसिल ऑफ़ एग्रीकल्चरल रिसर्च (ICAR) के मत्स्य संस्थान, मरीन प्रोडक्ट्स एक्सपोर्ट डेवलपमेंट अथॉरिटी, और नेशनल फिशरीज़ डेवलपमेंट बोर्ड जैसी एजेंसियों ने इनोवेशन और बेस्ट प्रैक्टिस को बढ़ावा दिया है, जबकि कोस्टल एक्वाकल्चर अथॉरिटी ने कोस्टल एक्वाकल्चर एक्टिविटीज़ को रेगुलेट किया है ताकि यह पक्का हो सके कि पर्यावरण का पालन। प्राइवेट सेक्टर ने हैचरी से लेकर एक्सपोर्ट तक इन्वेस्टमेंट बढ़ाया है, जिससे वैल्यू चेन की एफिशिएंसी मजबूत हुई है।

> FAO भारत के विकास में मदद करने के लिए प्रतिबद्ध है एक लचीले और समावेशी भविष्य की ओर नीली क्रांति

पिछले दशक ने एक नए दौर की शुरुआत की है बदलाव, जिसकी शुरुआत भारत की ब्लू रेवोल्यूशन पहल से हुई और जो प्रधानमंत्री मत्स्य संपदा योजना (PMMSY) के तहत आगे बढ़ रही है। इन प्रोग्राम ने प्रोडक्शन ग्रोथ को बढ़ावा दिया है, खासकर इनलैंड और खारे पानी के एक्वाकल्चर में, साथ ही शेरी में सेफ्टी, रेगुलेशन और रेजिलिएंस में सुधार किया है।

मुख्य सुधारों में शेर की सुरक्षा के लिए वेसल ट्रांसपोंडर, किसान क्रेडिट कार्ड के ज़रिए डिजिटल और क्रेडिट शामिल करना, और इंटीग्रेटेड सपोर्ट के लिए मत्स्य सेवा केंद्र बनाना शामिल है। क्लाइमेट-रेज़िलिएंट कोस्टल फिशरमेन विलेज प्रोग्राम और नेशनल फिशरीज़ पॉलिसी 2020 का ड्राफ़्ट अच्छे डेवलपमेंट हैं।

पूरे भारत में FAO का सपोर्ट FAO भारत की मछली पालन और एक्वाकल्चर की यात्रा में लंबे समय से पार्टनर रहा है, जो देश को सस्टेनेबिलिटी और लचीलेपन की ओर ले जाने में मदद कर रहा है। भारत के साथ FAO के दशकों के सहयोग ने इस सेक्टर में पॉलिसी को आकार दिया है, संस्थानों को मजबूत किया है और इनोवेशन को आगे बढ़ाया है।

भारत के साथ FAO का सहयोग शुरू हुआ बे ऑफ़ बंगाल प्रोग्राम (BOBP), FAO की शुरुआती रीजनल छोटे लेवल की शेरी पहलों में से एक है। FAO ने BOBP के ज़रिए भारत सरकार को छोटे लेवल की शेरी टेक्नोलॉजी को बेहतर बनाने, समुद्री सुरक्षा को मज़बूत करने और कटाई के बाद के मैनेजमेंट को बेहतर बनाने में मदद की है।

FAO के बे ऑफ़ बंगाल लार्ज मरीन इकोसिस्टम (BOBLME) प्रोजेक्ट ने मछली पकड़ने और बचाव के बीच बैलेंस बनाने की भारत की कोशिशों को मज़बूत किया है। इसने इकोसिस्टम अप्रोच टू फिशरीज़ मैनेजमेंट (EAFM) को सपोर्ट किया है, और गैर-कानूनी, बिना रिपोर्ट की गई, और बिना रेगुलेटेड (IUU) मछली पकड़ने से निपटने के लिए नेशनल प्लान ऑफ़ एक्शन को सपोर्ट किया है, जो मरीन इकोसिस्टम और सस्टेनेबल मछली पकड़ने के लिए एक बड़ा खतरा है। साथ ही, यह खतरे में पड़ी प्रजातियों को बचाने और छोटे लेवल की मछली पकड़ने को बनाए रखने में भी मदद करता है।

भारत की तेज़ रफ़्तार को सपोर्ट करने के लिए जलीय कृषि, एफएओ एक वैश्विक का समर्थन कर रहा है पर्यावरण सुविधा (जीईएफ) द्वारा वित्त पोषित परियोजना आंध्र प्रदेश में 'एक्वाकल्चर को एक सस्टेनेबल, कम फुटप्रिंट और क्लाइमेट-रेज़िलिएंट फ़ूड सिस्टम में बदलना' पर काम चल रहा है, जो सस्टेनेबल एक्वाकल्चर के लिए गाइडलाइन्स (GSA) और एक्वाकल्चर के लिए इकोसिस्टम अप्रोच (EAA) के सिद्धांतों से गाइडेड है। इस प्रोजेक्ट का मकसद आंध्र प्रदेश सरकार के फ़िशरीज़ डिपार्टमेंट को क्लाइमेट-रेज़िलिएंट, सस्टेनेबल एक्वाकल्चर को बढ़ावा देने में मदद करना है, जिससे राज्य को फ़ायदा हो और सरकार की ब्लू रेवोल्यूशन को आगे बढ़ाने के लिए भारत के लिए एक मॉडल के तौर पर काम किया जा सके।

एक्वेटिक वैल्यू चेन के हिस्से के तौर पर, समुद्री बंदरगाहों और समुद्री बंदरगाहों को मज़बूत करना भी भारत सरकार के मुख्य कामों में से एक है। FAO के एक टेक्निकल कोऑपरेशन प्रोग्राम (TCP) का मकसद समुद्री बंदरगाहों की टेक्निकल क्षमताओं को मज़बूत करने में भारत सरकार की मदद करना है, ताकि एक्वेटिक वैल्यू चेन पर असर डालने वाली मुख्य पर्यावरण, सामाजिक और आर्थिक चुनौतियों का सामना किया जा सके। दो पायलट समुद्री बंदरगाह, खासकर वनकबरा (बिना कानून वाला केंद्र शासित प्रदेश दादरा और नगर हवेली और दीव) और गुजरात में जखाऊ, इस TCP से फ़ायदा उठाएंगे। यह उन्हें इन्वेस्टमेंट प्रोजेक्ट्स की पहचान करने और उन्हें बनाने के लिए खास स्ट्रेटेजिक और ऑपरेशनल टूल देगा, जिन्हें लागू करने से मुख्य चुनौतियों का सामना किया जा सकेगा।

सस्टेनेबिलिटी पर ध्यान दें। भारत के मछली पालन और एक्वाकल्चर सेक्टर अच्छी राह पर हैं। फिर भी, सस्टेनेबिलिटी को सेंटर में रहना चाहिए। साइंस-बेस्ड स्टॉक असेसमेंट के ज़रिए मछली पकड़ने के प्रयासों को मैनेज करना, IUU मछली पकड़ने को रोकने के लिए को-मैनेज्ड मॉनिटरिंग कंट्रोल और सर्विलांस (MCS) को बढ़ावा देना, सस्टेनेबल एक्वाकल्चर के लिए गाइडलाइंस का पालन करना और इकोसिस्टम-बेस्ड तरीकों को अपनाना मुख्य प्राथमिकताएं हैं।

सर्टिफ़िकेशन, ट्रेसेबिलिटी और डिजिटल टूल्स को मज़बूत करने से — साथ ही छोटे किसानों के लिए इनक्लूसिविटी पक्का करने से — घरेलू और ग्लोबल मार्केट में कॉम्पिटिटिवनेस बढ़ेगी।

FAO सस्टेनेबल एक्वेटिक फ़ूड सिस्टम की ओर भारत के सफ़र में मदद करने, फ़ूड और न्यूट्रिशनल सिक्योरिटी पक्का करने, और एनवायरनमेंटल और क्लाइमेट फुटप्रिंट्स को कम करने, और भारत की ब्लू रेवोल्यूशन को एक मज़बूत और सबको साथ लेकर चलने वाले भविष्य की ओर ले जाने के लिए कमिटेड है।

द टर्सटूदएडिटर

बिहार में एक रिकॉर्ड

नीतीश कुमार का दसवीं बार बिहार के मुख्यमंत्री के तौर पर शपथ लेना भारतीय राजनीति में एक बड़ा मील का पत्थर है। राज्य के नेतृत्व में उनकी लगातार मौजूदगी राजनीतिक समझ और वोटरों के बीच उनके भरोसे को दिखाती है। पिछले कुछ सालों में, श्री कुमार ने कई पहलों की देखरेख की है। इंफ्रास्ट्रक्चर, शिक्षा और सामाजिक कल्याण, बिहार के विकास की दिशा तय कर रहे हैं।

लेकिन, लगातार चलने वाला शासन मुश्किलें भी लाता है। बिहार में बेरोज़गारी, माइग्रेशन और हेल्थ-केयर में अंतर जैसी समस्याएं बनी हुई हैं।

यह ज़रूरी है कि नया प्रशासन समावेशी विकास पर ज़ोर दे, कुशल हो और प्रशासन, और इन लगातार समस्याओं को हल करने के लिए नई नीतियां चिंताएँ।

नागरिकों के तौर पर, हम उम्मीद करते हैं कि यह ऐतिहासिक कार्यकाल सभी बिहारियों के लिए ठोस फ़ायदे लेकर आएगा, जिससे तरक्की होगी और लोकतांत्रिक संस्थाएँ मज़बूत होंगी।

Nagarajamani M.V., Hyderabad

मेट्रो रेल प्रोजेक्ट्स तमिलनाडु में

कोयंबटूर और मदुरै के लिए मेट्रो रेल प्रोजेक्ट्स को मना करने का केंद्र सरकार का फैसला न केवल दूर की न सोचने वाला है, बल्कि नुकसानदायक भी है।

मेट्रो एरिया में कम से कम दो मिलियन लोगों की आबादी की ज़रूरत सिर्फ़ एक गाइडलाइन है, कोई पक्का क्राइटेरिया नहीं है।

असल में, कई दशकों से आबादी के आंकड़ों को अपडेट नहीं किया गया है, ऐसे एतराज़ राजनीति से जुड़े लगते हैं और इन दोनों शहरों के लिए लंबे समय की प्लानिंग को रोकते हैं। कोयंबटूर की स्थिति, जहाँ चेन्नई और बेंगलुरु जैसे ट्रैफिक जाम दिन-ब-दिन बढ़ रहे हैं, वहाँ एक हाई-कैपेसिटी मेट्रो की ज़रूरत है।

भीड़ कम करने के लिए रेल ही एकमात्र उपाय है। ट्रेन जाम में फंसा कोई मज़दूर न सिर्फ़ काम नहीं करता, बल्कि उसके बीमार पड़ने का भी खतरा रहता है। केंद्र और राज्य के लिए यह समझदारी होगी कि वे लोगों की ज़रूरतों को पहले रखें।

जी. परमेश्वरन, कोयंबटूर

letters@thehindu.co.in पर ईमेल किए गए पत्रों में पूरा पता होना चाहिए।

https://t.me/AllNewsPapersPaid1

राष्ट्रीय सहारा
पटना । शुक्रवार • 21 नवम्बर • 2025
www.rashtriyasahara.com

अनमोल वचन

जब तक हम स्वयं निरपराध न हों तब तक दूसरों पर कोई आक्षेप सफलतापूर्वक नहीं कर सकते।
-सरदार पटेल

बम ब्लास्ट की अंतरराष्ट्रीय मंच पर कड़ी निंदा

दिल्ली में हुए हालिया विस्फोट ने देश के भीतर ही नहीं, बल्कि अंतरराष्ट्रीय मंच पर भी गहरी प्रतिक्रिया दी है। अनेक देशों ने इस घटना की कड़ी निंदा की है और दक्षिण एशिया के सुरक्षा-वातावरण को लेकर गंभीर चिंता व्यक्त की है। देश में वैश्विक निवेश, पर्यटन तथा अंतरराष्ट्रीय छवि पर भी इसका प्रतिकूल प्रभाव पड़ा है। राष्ट्र की राजधानी में इस प्रकार की घटना होना न केवल हमारी सुरक्षा-व्यवस्था पर प्रश्न खड़े करता है, बल्कि भारतीय लोकतंत्र और सांस्कृतिक मर्यादा पर भी अंतरराष्ट्रीय स्तर पर सवाल उठाता है। घटना के बाद पूरे देश में क्षोभ और गुस्सा टूट जाए है और सभी समुदायों ने इसकी कठोर शब्दों में निंदा की है। किंतु धर्म-विशेष से जुड़े कुछ संगठनों और राजनीतिक दलों के कुछ नेताओं में वह नैतिक आक्रोश स्पष्ट रूप से दिखाई नहीं दिया, जो ऐसी भीषण परिस्थिति में अपेक्षित था। छोटी-छोटी घटनाओं पर बवाल मचाने वाले कुछ राजनीतिक नेता इस भीषण आतंकी वारदात पर मौन बने हुए हैं। उनकी यही चुप्पी तथा कुछ राजनीतिक दलों की जल्दबाजी में की गई बेबुनियाद बयानबाज़ी, संकट की घड़ी में राष्ट्रीय एकता की भावना को कमजोर करती है। आतंकवाद किसी एक समुदाय का नहीं, बल्कि राष्ट्र के लोकतंत्र और मानवता पर हमला है। इसे राजनीतिक फायदे-नुकसान के चश्मे से देखना अनुचित के साथ साथ

राष्ट्रहित के विरूद्ध है। राजनीति में लोकहित और राष्ट्रहित सर्वोपरि होने चाहिए। यदि किसी वर्ग विशेष को खुश करने या वोट की राजनीति के लिए राष्ट्रहित से समझौता किया जाता है, तो ऐसी राजनीति पर गंभीर प्रश्नचिह्न लगना स्वाभाविक है।

इस घटना ने सुरक्षा और खुफिया एजेंसियों की चुनौतियों को भी उजागर किया है। इसे मात्र प्रशासन सरकार और सुरक्षाबलों की नाकामी कहना उचित नहीं होगा, हमें यह समझना होगा कि आतंकवाद का वर्तमान स्वरूप बदल चुका है। अब यह अधिक तकनीकी, आधुनिक संचार-तंत्र पर आधारित और शिक्षित वर्ग को प्रभावित करने में सक्षम हो गया है। जिसका फायदा उठाकर कुछ असामाजिक तत्व धार्मिक भावनाओं को मोहरा बनाकर समाज में कटुता का जहर घोल रहे है। सरकार को ऐसे तत्वों से कठोरता से निबटना होगा ताकि देश की सौहार्द-परंपरा और भाईचारे की भावना को चोट न पहुँचे।साथ ही, शिक्षा-संस्थानों, अस्पतालों और प्रोफेशनल प्रशिक्षण केंद्रों में वैचारिक सतर्कता और सर्व धर्म समभाव की नीति को लागू करना आवश्यक है, जिससे भोले भाले नागरिक बहकावे में आकर चरमपंथ के जाल में न फँसें। सरकार ने घटनास्थल पर तत्काल उच्च-स्तरीय समीक्षा करते हुए कड़ी कार्रवाई के निर्देश दिया है। दिल्ली पुलिस, स्पेशल सेल, क्राइम ब्रंच, एनआईए, एनएसजी और एफएसएल की टीमें सक्रिय हो चुकी हैं। देशव्यापी तलाशी और पूछताछ की कार्रवाई तेज कर दी गई है। प्रधानमंत्री कार्यालय तथा गृह मंत्रालय ने गहन जांच और आवश्यक कानूनी कार्रवाई के स्पष्ट निर्देश देकर घटना की पुनरावृत्ति। न होने का संकल्प दोहराया है। गृह मंत्री ने सार्वजनिक रूप से कड़ी प्रतिक्रिया व्यक्त कर सरकार के कड़ी कार्रवाई के रूख को स्पष्ट कर दिया है। सरकार ने उच्चस्तरीय मीटिंग करके सुरक्षाबलों को कड़ी कार्रवाई के निर्देश दिए है। भारत सरकार की त्वरित कार्रवाई आवश्यक है, परंतु जांच में पारदर्शिता और संवेदनशीलता बनाए रखना भी अत्यंत महत्वपूर्ण है। धार्मिक कट्टरता से बचाव के लिए युवाओं को आलोचनात्मक सोच, वैकल्पिक दृष्टिकोण और मानसिक परामर्श उपलब्ध कराना अब आवश्यक हो गया है। इसके साथ ही सुरक्षा एजेंसियों को नवीनतम तकनीको, आधुनिकतम संचार संसाधन, विश्व स्तरीय उपकरण और डेटा-विश्लेषण संसाधन उपलब्ध कराना अत्यावश्यक है। धार्मिक कट्टरता और राजनीतिक दलों की वोटों की राजनीति। भी इस प्रकार की घटनाओं को बढ़ावा दे सकते है इसलिए भारत जैसे संवेदनशील देश में केवल सरकार या कानून के सहारे ही नहीं देश के हर नागरिक को अपने उत्तरदायित्व और कर्त्तव्यों दोनों का बोध होना चाहिए। लोकतंत्र की वास्तविक मजबूती तभी सुनिश्चित होगी जब हम हिंसा के कारणों का मुकाबला करने के साथ-साथ समाज में सहिष्णुता, समावेशिता और नैतिक उत्तरदायित्व की भावना को सशक्त बनाएं। यही मार्ग राष्ट्र की आन-बान-शान और गौरव की रक्षा करेगा।

परिवार की कलह या कलह का परिवार !

लालू परिवार

शंभू नाथ शुक्ल

परिवार होगा तो कलह होगी और कलह होगी तो परिवार नष्ट होगा। यह हर परिवार की कथा है और आज से नहीं बल्कि सदियों सेचली आ रही है। रामायण और महाभारत के काल से परिवार के बीच कलह उनके नष्ट होने के कारण बनते आ रहे है। चूँकि आमआदमी का इतिहास नहीं होता इसलिए हम सब ख़ास आदमियों के घर की ही कथाएँ सुनते और जानते है। कौरव, पांडव नष्ट हुए, सम्राट अशोक का परिवार बिखरा और उसके बाद पुष्यमित्र शुंग का। खिलजी से ले कर मुग़ल वंश भी ऐसे ही परिवार की लड़ाई मेंध्वस्त हुआ। आधुनिक प्रजातंत्र में भी कई नेता उभरे और उन्होंने परिवार को बढ़ाया। इतना बढ़ाया कि परिवार के अंदर विरासत कोलेकर कलह हुई और फ़िर वह परिवार ही समाप्त हो गया। ताजा उदाहरण लालू यादव परिवार का है। सामाजिक न्याय के मसीहा लालू यादव परिवार के लोग आज परिवार की कलह में जूझ रहे है।

सात बेटियों और दो बेटों के पिता लालू प्रसाद यादव आज धृतराष्ट्र बने बच्चों के बीच चल रही लड़ाई को देख-देख कर दुखी हो रहेहै और कुछ भी कर पाने में असमर्थ है. उन्होंने विरासत छोटे बेटे तेजस्वी को सौंपी तो बड़े बेटे ने विद्रोह कर दिया। अलग राजनीतिकदल बना लिया और अब इस विद्रोही बेटे के साथ उसकी बहन रोहिणी भी आ गई। इन दोनों भई-बहनों का आरोप है कि तेजस्वी ने घर में शकुनी घुसेड़ रखे है। ये शकुनी इतने शक्तिशाली हैं कि उन्हें अपने भाई तेजस्वी से मिलने अथवा मां-बाप से मिलने के लिए इनशकुनियों से अनुमति लेनी पड़ती है। घर की कलह अब सड़क तक आ गई है और लालू यादव इसे रोक पाने में असमर्थ है। वे बेचारेक्या करें! यह जाँघ खोलें तो लाज जाती है और दूसरी जाँघ खोलें तो लाज गँवाएँ। इसलिए लालू यादव और उनकी पत्नी राबड़ीदेवी चुप है। 1989 से 2005 तक इस दंपत्ति का बिहार पर निष्कंटक राज रहा।

यह अकेले लालू परिवार की व्यथा नहीं है, बल्कि हर वह राजनीतिक परिवार इसी कष्ट से जूझ रहा है, जहां उसके अधिष्ठाता ने कुर्सी पर बैठते ही परिवार को अपने राजनीतिक निर्णय के केंद्र में रखा। मुलायम सिंह यादव, प्रकाश सिंह बादल, महाराष्ट्र में ठाकरेपरिवार, तमिलनाडु में करुणानिधि की फ़ैमिली और ओडीशा में बीजू पटनायक और उनके बेटे नवीन पटनायक. कहीं-कहीं बेटों नेराजानीतिक विरासत तो सँभाली पर राजनीति को अपने परिवार तक सीमित नहीं रखा। ओडीशा में बीजू पटनायक और उनके बेटे नेअपनी राजनीति को राज्य के विकास और आम जनता का लक्ष्य निर्धारित किया। नतीजन दोनों बाप-बेटे राज्य की राजनीति मेंशिखर पर रहे किंतु सदैव विनीत मुद्रा में। यही हाल मध्य प्रदेश और उसके पूर्ववर्ती मध्य भारत तथा उसके परवर्ती छत्तीसगढ़ में शुक्ल परिवार का रहा। परिवार राजनीतिक दल से ऊपर नहीं पहुँचा।

1997 में लालू यादव का नाम जब चारा घोटाले में आया तब उन्हें मुख्यमंत्री की कुर्सी छोड़नी पड़ी। उन्होंने यह कुर्सी पार्टी में किसी और को नहीं अपनी पत्नी को सौंपी। उनकी पत्नी राबड़ी देवी राजनीति से एकदम अनजान थीं तो ज़ाहिर है कि लालू यादव मुख्यमंत्री के पति की हैसियत से राजनीति कीबागडोर सँभाले रहे। इसका परिणाम यह रहा कि बिहार में अराजकता फैलने लगी। जिस सामाजिक न्याय को मुद्दा बना कर लालू1989 से बिहार पर राज कर रहे थे वह अपने अराजक दौर से गुजरने लगा। रोज हत्याएँ, अलग-अलग जातियों की निजी सेनाओं (हत्यारों की फ़ौज) का ख़ौफ़ और उनको उनके जातीय नेताओं का सपोर्ट बिहार के राजनैतिक विचार को शून्य कर गया। लोग बिहार छोड़ने लगे. बिहार का पढ़ा-लिखा मध्य वर्ग दिल्ली की तरफ़ भागा. यह पलायन रोज़गार न पाने वालों का नहीं था बल्किउनका था जो बिहार में रोज़गार सृजित कर सकते थे। किंतु कोई भी उद्योग या व्यवसाय बिना शांति और व्यापार के अनुकूल माहौलके संभव नहीं था। गिरिडीह जैसे औद्योगिक शहर तबाह हो गए. परिवार की राजनीति का फल था।

परिवारवाद की यह अनिवार्य परिणति है। जैसे आग जितना फैलती है उतने ही अपने शत्रु पैदा करती है, उसी तरह परिवार वाद कीआग भी घर को ही जलाती है। क्योंकि परिवार को बढ़ाने वाले राजनेता अपनी राजनीति का विस्तार अपने परिवार तक केंद्रित रखते है। वे उसे उस विशाल आम जनता के बीच नहीं ले जाते, जो उनसे बेहतरी की उम्मीद करती है। इसलिए जैसे-जैसे दिये की लौकमजोर पड़ने लगती है, अंधेरा घिरने लगता है. लेकिन यदि एक दिये से असंख्य दिये पैदा किये जाएं तो एक की लौ बुझने से कुछनहीं होता। इसको बरगद के पेड़ की शाख़ से समझा जा सकता है। बरगद के पेड़ की शाखाएँ ज़मीन पर आ कर फिर से अपनी जड़ेंतलाश लेती है और वट वृक्ष सैकड़ों वर्ष तक वैसा ही खड़ा रहता है. लेकिन जिस वृक्ष की शाखाएँ एक ही जड़ के बूतेफैलती-फूलती है, उनका नाश होता ही है. शाख़ यदि नीचे आयेगी तो वह ज़मीन से जुड़ेगी।

शकुनी मंज़ूरी दें तो बच्चे बाप और भाई से मिल सकें। पर इन सारे परिवारों के बच्चों ने खुद कभी जड़ से जुड़ने की कोशिश नहीं की, नतीजा सामने है। 2015 और 2020 तक लालू खुदसक्रिय थे और प्रचार में खूब कूदे इसलिए तब उनकी पार्टी राष्ट्रीय जनता दल (RJD) ने क्रमशः 80 और 75 सीटें पाई थीं। पर इसबार सारा दारोमदार तेजस्वी पर था। नतीजा विधानसभा में उनकी सीटें खिसक कर 25 पर आ गईं। 2015 में जो तेजस्वी उपमुख्यमंत्री बने थे, उनका यह पतन साबित करता है कि वे खुद से चनाव लड़ने में बहुत कमजोर है। यह भी उनकी टीम के लोग भी कच्चे है। ऐसे में लालू यादव के बड़े बेटे तेज प्रताप यादव और रोहिणी आचार्य का बिफरना सही लगता है कि तेजस्वी ने घर में शकुनी भररखे है। इनका इशारा तेजस्वी के सखा संजय यादव और रमीज़ की तरफ़ है. इन दोनों का कहना है, कि उन्हें अपने भाई तेजस्वी और पिता लालू तथा मां राबड़ी देवी से मिलने के लिए इन लोगों की अनुमति लेनी पड़ती है।

यह अकेले बिहार के लालू परिवार का मसला नहीं है. पड़ोस के उत्तर प्रदेश में मलायम सिंह यादव के परिवार में भी कलह ऐसी ही है किंतु किसी तरह अखिलेश यादव इसे रोके हुए है। चूँकि वह अपने पिता के समय ही मुख्यमंत्री की कुर्सी पा गये थे इसलिए उनमेंराजनीतिक चातुर्य भी है। उन्होंने अपने समय में उत्तर प्रदेश में विकास कार्य भी अपने पहले वाली सरकारों से अधिक करवाए। ख़ासकर बिजली, सड़क और पानी के क्षेत्र में। मगर वे भी प्रदेश की क़ानून व्यवस्था पर अंकुश नहीं लगा सके और वह भी अपनेयादव परिवार के चलते। राजा को प्रजा का पिता माना गया है। आपका मतदाता कोई भी हो किंतु जब आप राज करते है तब सबसमान है. राजा को बिना किसी जातीय भेद-भाव और धार्मिक विद्वेष से परे हो कर निर्णय करने चाहिए. यदि किसी यादव अथवामुसलमान को लगे कि भैया के राज में उसे कुछ भी करने की छूट है तो यहीं से पतन शुरू होता है।

सपा में भी अखिलेश और उनके चाचा शिवपाल सिंह यादव के बीच के मतभेद को सभी जानते है लेकिन शुक्र है कि इस परिवार मेंअति महत्त्वाकांक्षी लोग बहुत कम है और धर्मेंद्र यादव जैसे अखिलेश के प्रति समर्पित और विनम्र भाई है। दूसरे उत्तर प्रदेश में अधिकांश यादव पढ़े-लिखे और समृद्ध किसान है तथा बाहुबली वाली छवि उनकी नहीं है. पंजाब में बादल परिवार ने शिरोमणिअकाली दल (SAD) को अपनी जायदाद समझ रखा थाठ इसलिए पूरे चार दशक तक वह परिवार पंजाब की राजनीति में छायारहा. यही स्थिति हरियाणा में चौधरी देवी लाल, उनके बेटे ओम प्रकाश चौटाला और उनके वंशजों की रही. उन्होंने भी इस छोटे सेकिंतु पर्याप्त खुशहाल राज्य हरियाणा को अपनी संपत्ति बना लिया था। अब वह परिवार राजनीति से ग़ायब होता जा रहा है।

(लेखक के निजी विचार हैं)

घर की कलह अब सड़क तक आ गई है और लालू यादव इसे रोक पाने में असमर्थ हैं। वे बेचारे क्या करें! यह जांघ खोलें तो लाज जाती है और दूसरी जांघ खोलें तो लाज गँवाएँ। इसलिए लालू यादव और उनकी पत्नी राबड़ी देवी चुप हैं। 1989 से 2005 तक इस दंपत्ति का बिहार पर निष्कंटक राज रहा। यह अकेले लालू परिवार की व्यथा नहीं है, बल्कि हर वह राजनीतिक परिवार इसी कष्ट से जूझ रहा है, जहां उसके अधिष्ठाता ने कुर्सी पर बैठते ही परिवार को अपने राजनीतिक निर्णय के केंद्र में रखा।

- विश्व स्वास्थ्य संगठन (डब्ल्यूएचओ) के अनुसार रैबीज की वजह से साल 2024 में भारत में 20,565 मौत हुई थीं जो पूरी दुनिया में रैबीज से होने वाली मौतों का 35 फीसद है
- रैबीज केवल कुत्तों से ही नहीं फैलता लेकिन इसके 96 फीसद से ज्यादा मामले कुत्तों के काटने से ही होते हैं। चिंताजनक बात यह है कि एंटी रैबीज वैक्सीन के साथ ही जो इम्युनोग्लोबुलिन दिया जाता है, वो देश के ज्यादातर अस्पतालों में उपलब्ध नहीं है
- इन दिनों आवारा कुत्तों (स्ट्रे डॉग्स) को लेकर चिंता के बीच इस समस्या के समाधान के रूप में इस विचार पर भी गौर किया जाना चाहिए कि पशु प्रेमी समृद्ध लोगों को आयातित कुत्तों की बजाय आवारा कुत्तों को गोद लेने के लिए सीएसआर की तर्ज पर आर्थिक सहयोग दिया जाए

(मीडिया इनपुट्स)

बहू, बेटी और सीसीटीवी-भारत निर्वाचन आयोग नियमित रूप से महिला मतदाताओं की फोटो और वीडियो पोस्ट करता रहा है। लेकिन अब सीसीटीवी फुटेज मुहैया कराने की बात पर जवाबदेही की बात कर रहा है। आयोग महिलाओं की निजता के संरक्षण की आड़ में अपनी जिम्मेदारी से मुंह चुरा रहा है। है न कितना शर्मनाक!

अंजलि भारद्वाज, आरटीआई कार्यकर्ता
@AnjaliB_

जीत में महिलाओं और ईबीसी की निर्णायक भूमिका

बिहार चुनाव

मुद्दा | केके भारती 'विद्यारण्य'

बिहार चुनाव में एनडीए की जीत में महिलाओं और ईबीसी (अत्यंत पिछड़ा वर्ग) वोटों का योगदान सबसे महत्वपूर्ण और निर्णायक रहा। महिलाओं और ईबीसी वोटरों को विशेष रूप से ध्यान में रखते हुए कई रणनीतियाँ अपनाई गईं, जिससे उनका समर्थन एनडीए की ओर मजबूत हुआ। महिलाओं के लिए मुख्यमंत्री नीतीश कुमार की महिला सशक्तिकरण योजनाएँ जैसे महिला रोजगार योजना, उज्ज्वला योजना, साइकिल योजना आदि ने भारी असर डाला। लगभग 1.5 करोड़ महिलाओं को वित्तीय सहायता प्रदान कर उन्हें राजनीतिक रूप से सक्रिय और समर्थ बनाया गया। इसके कारण महिलाओं में मतदान का प्रतिशत पुरुषों की तुलना में 7 से 10 प्रतिशत अधिक रहा। इस उच्च मतदान ने चुनावी मुकाबले में निर्णायक बढ़त दी। वोटर एनडीए को अपनी सुरक्षा और विकास के एजेंडे के कारण ज्यादा पसंद कर रही थीं, खासकर पिछली सरकार के दौरान कानून-व्यवस्था को लेकर चिंता के चलते।

ईबीसी वोटरों में भी एनडीए ने कुर्मी, कोइरी और अन्य जातियों का प्रभावी गणित बनाया। ईबीसी समूह की आबादी लगभग 30-36 प्रतिशत है, जो राज्य की कुल जनसंख्या में बड़ा वोट बैंक है। जदयू खासकर ईबीसी वोटरों के बीच मजबूत रहा, जबकि भाजपा ने उच्च जाति और शहरी क्षेत्रों में पकड़ बनाई। ईबीसी वर्ग के लिए समर्पित योजनाओं और सामाजिक-राजनीतिक समावेशन की नीति ने इस समूह का आकर्षण बढ़ाया। डिजिटल और सोशल मीडिया के माध्यम से महिलाओं और ईबीसी वर्ग के मुद्दों को मुख्य प्रचार विषय बनाया गया, जिससे इन्हीं समूहों तक पार्टी की पहुंच बढ़ी।

चुनाव प्रचार में स्थानीय स्तर पर महिला कार्यकर्ताओं और ईबीसी समुदाय के प्रतिनिधियों को सक्रिय किया गया। इस प्रकार, महिलाओं की बढ़ती राजनीतिक भागीदारी और ईबीसी वोटरों का मजबूत जुड़ाव एनडीए की जीत की कुंजी रहे। यह रणनीति बिहार के सामाजिक-राजनीतिक परिदृश्य को समझकर महिलाओं और ईबीसी वर्ग के हित में केंद्रित थी, जिससे एनडीए ने व्यापक जनसमर्थन प्राप्त किया।

तरक्की के शहर अकेलेपन के घर

सामयिक

प्रियंका सौरभ

महानगरों में लाखों लोग रहते हैं, परंतु अधिकांश अपने पड़ोसियों को भी नहीं पहचानते। एक सर्वेक्षण के अनुसार लगभग 40 प्रतिशत शहरी भारतीयों ने स्वीकार किया कि वे खुद को अकेला महसूस करते हैं। यह आंकड़ा दिखाता है कि आधुनिक शहरी जीवन ने भले ही हमें भौतिक सुविधाएं दी हों, परंतु भावनात्मक और सामाजिक रूप से हमें कमजोर किया है। तकनीक ने भी इस अकेलेपन को बढ़ाया है। स्मार्टफोन और सोशल मीडिया पर निर्भरता ने वास्तविक मानवीय बातचीत को सीमित कर दिया है। मेट्रो या बस में सफर करते हुए अक्सर लोग एक-दूसरे से संवाद नहीं करते, बल्कि मोबाइल स्क्रीन में डूबे रहते हैं। शहरीकरण ने भारत के सामाजिक जीवन और मानवीय संबंधों को गहराई से प्रभावित किया है। यह केवल आर्थिक प्रगति का साधन नहीं बल्कि एक ऐसा सामाजिक परिवर्तन भी है जिसने हमारे पारंपरिक रिश्तों, विश्वास और आपसी सहयोग की प्रकृति को बदल दिया है। एक सर्वेक्षण के अनुसार लगभग 40 प्रतिशत शहरी भारतीयों ने स्वीकार किया कि वे खुद को अकेला महसूस करते हैं। यह आंकड़ा दिखाता है कि आधुनिक शहरी जीवन ने भले ही हमें भौतिक सुविधाएं दी हों, परंतु भावनात्मक और सामाजिक रूप से हमें कमजोर किया है। तकनीक ने भी इस अकेलेपन को बढ़ाया है। स्मार्टफोन और सोशल मीडिया पर निर्भरता ने वास्तविक मानवीय बातचीत को सीमित कर दिया है। मेट्रो या बस में सफर करते हुए अक्सर लोग एक-दूसरे से संवाद नहीं करते, बल्कि मोबाइल स्क्रीन में डूबे रहते हैं। यह प्रवृत्ति समाजशास्त्री जॉर्ज सिमेल की उस धारणा को सही साबित करती है जिसमें उन्होंने आधुनिक शहरों को 'भीड़ में अकेलेपन' का प्रतीक कहा था। साथ ही, शहरी जीवन की भीड़-भाड़ और संसाधनों की कमी ने तनाव और संघर्ष को भी जन्म दिया है। पानी, बिजली, यातायात और पार्किंग जैसे मुद्दों पर झगड़े आम हो गए हैं। दिल्ली जैसे शहरों में पार्किंग विवाद कई बार हिंसा तक पहुंच जाते हैं। वाहन प्रदूषण और सड़क दुर्घटनाएं भी नागरिक जीवन की असुरक्षा को बढ़ाती हैं। पैदल चलने वालों के लिए सुरक्षित स्थान कम होते जा रहे हैं, जिससे साझा सार्वजनिक जीवन घटता जा रहा है। यह कमी सामाजिक पूंजी पर सीधा आघात करती है, क्योंकि खुले और सुरक्षित सार्वजनिक स्थल ही लोगों के बीच संवाद और सहयोग को जन्म देते हैं। इस प्रकार, शहरीकरण ने भारत के सामाजिक पूंजी पर दोतरफा असर डाला है। एक ओर इसने शिक्षा, स्वास्थ्य, विविधता और सांस्कृतिक उन्नति के अवसर दिए, तो दूसरी ओर इसने रिश्तों को सतही, अस्थिर और अविश्वासी बना दिया। भारत का भविष्य निस्संदेह शहरी होगा, परंतु यह भविष्य तभी स्थायी और समृद्ध हो सकता है जब शहरीकरण केवल आर्थिक नहीं बल्कि सामाजिक पूंजी का भी संवाहक बने।

गुण-कर्म | डॉ. ज्ञानानंददास स्वामी

भगवीता में गुण और कर्म का विभाजन मनुष्य की स्वाभाविक प्रवृत्तियों, क्षमताओं और मानसिक गुणों के आधार पर किया गया है। गीता स्पष्ट करती है कि प्रत्येक व्यक्ति के भीतर तीन मूलभूत गुण कार्य करते हैं- सत्त्व, रज और तम। इन्हीं के मिश्रण से उसका स्वभाव और कर्म-प्रवृत्ति बनती है। मानव को उसके गुण-कर्म के आधार पर परियोजना में जोड़ना सिर्फ प्रबंधन की एक तकनीक नहीं है, बल्कि यह पूरी व्यवस्था की कार्यक्षमता और परिणाम को सीधा प्रभावित करने वाला सिद्धांत है। हर व्यक्ति के पास अलग-अलग मानसिक-शारीरिक क्षमताएं होती हैं। कोई नेतृत्व में अच्छा होता है, तो कोई योजनाओं को लागू करने में। कोई विश्लेषण और शोध में माहिर होता है, तो कोई रचनात्मक समाधान देने में। इसी तरह कुछ लोग संवाद-सहयोग में दक्ष होते हैं, जबकि कुछ एकांत में केंद्रित होकर काम करना पसंद करते हैं। गुण-कर्म के आधार पर कार्य-वितरण से संसाधनों का सही उपयोग होता है। यह समय, ऊर्जा और धन की बर्बादी को रोकता है। उदाहरण के लिए, एक उत्कृष्ट वक्ता को आंकड़ों के विश्लेषण में लगाने की बजाय जनसंपर्क या प्रस्तुति से जुड़े काम में लगाना अधिक समझदारी होगी। इसी तरह, गहरी तकनीकी समझ रखने वाले व्यक्ति को प्रशासनिक कार्य में उलझाना उसके कौशल का नुकसान है। यह दृष्टिकोण केवल कामकाज तक सीमित नहीं है; यह मानवीय संबंधों में भी लागू होता है। जब हम किसी की क्षमता और स्वभाव को समझ कर उसे भूमिका देते हैं, तो वह अधिक समर्पित हो जाता है। उसे लगता है कि उसकी पहचान और मूल्य को समझा गया है, जिससे वह संगठन या समूह के प्रति वफादार रहता है। गीता के अनुसार यह विभाजन किसी को ऊंचा या नीचा ठहराने के लिए नहीं है, बल्कि समझाने के लिए है कि हर व्यक्ति की प्रकृति अलग है, और उसे उसी के अनुरूप कार्य में लगाना ही मुख्य हेतु है। इस गीता वाक्य का मर्म समझाते हुए महंत स्वामी महाराज कहते हैं- 'वास्तविक प्रगति तब होती है जब मनुष्य अपनी मूल प्रकृति को पहचान कर, निःस्वार्थ भाव से, भगवान को समर्पित होकर, समाज के कल्याण के लिए कर्म करता है।'

रीडर्स मेल

सरकारी नौकरी में समान अवसर

इंसान अपने आप में ही पहचान है। उसके लिए अपनी पहचान बताने की क्या जरूरत। यहां कई जातियों में बंटे लोग हैं। कोई अपने को ऊंची जाति का बता रहा है तो कोई निम्न जाति का। यहां निम्न जाति के लोग कइयों साल से आरक्षण की सुविधा ले रहे हैं। इस तरह के नेता भी अपना वोट बैंक बनाने के लिए इनका संरक्षण करते हैं। पेपर देखें तो एक जने ने अनुसूचित जाति का प्रमाणपत्र बनवा कर नौकरी हासिल कर ली जबकि जांच होने पर वह सामान्य जाति का निकला। आज कोई निम्न जाति का कोई व्यक्ति अपना पुश्तैनी काम करता नहीं दिखता। लेकिन वह इसी की बैसाखी से सरकारी नौकरी पाने की मलाई खा रहा है और ऊंची जाति के लोग बेरोजगारी का दंश झेल रहे हैं। क्यूं न ऊंची-निम्न जाति का भेद मिटा कर सभी को सरकारी नौकरी पाने के समान अवसर दिए जाएं।

संदीप कुमार सोनवानी, मुरादाबाद

आलोचना से सबक लेना जरूरी

मनुष्य का जीवन ऐसी यात्रा है, जिसमें हर कदम पर कुछ नया सीखने का अवसर मिलता है। जन्म से मृत्यु तक हमारा सीखना कभी रुकता नहीं। नई चीजें सीखने के लिए समय, धैर्य और खुले मन की जरूरत होती है। जीवन में कई बार हमें दूसरों की सलाह, आलोचना या प्रतिक्रिया मिलती है। यदि हम इसे सकारात्मक रूप से स्वीकार करें तो यह हमारे व्यक्तित्व को बेहतर बनाने का मौका देती है, लेकिन अक्सर लोग प्रतिक्रिया को गलत समझ लेते हैं, जिससे रिश्तों में दरार आ जाती है। इसका मुख्य कारण है कि हम सलाह को अपने खिलाफ समझ लेते हैं। हमें सोचना चाहिए कि सामने वाला व्यक्ति हमारा भला चाहता है। सलाह को खुले मन से स्वीकारने से हम बेहतर इंसान बनते हैं। कमियों को स्वीकार कर सुधारने से काम में सफलता मिलती है। मनुष्य पूर्ण नहीं होता। हर किसी में कुछ कमियां होती हैं। जो व्यक्ति हर पल नया सीखने के लिए तैयार रहता है, वही जीवन में आगे बढ़ता है।

सुदर्शन सिंह,ईमेल से

भिक्षावृत्ति देश के माथे पर कलंक

भारत में एक तरफ अरबपतियों की लंबी कतार बनती जा रही है, तो दूसरी ओर देश में ही एक तबका भीख मांग कर पेट भरने को मजबूर है। भिक्षावृत्ति आधुनिक होते भारत के माथे पर कलंक की तरह है। मंदिरों, मस्जिदों या किसी भी धार्मिक स्थल पर भिखारियों का जमावड़ा लगा रहता है। दो जून की रोटी को तरसते देश के लाखों गरीब अस्पतालों, बस अड्डों, चौराहों और अन्य सार्वजनिक स्थलों पर भिक्षावृत्ति को मजबूर हैं। कानूनी प्रावधानों के जरिए भिक्षावृत्ति पर रोक की कोशिशें अब तक असफल ही साबित हुई हैं। भिक्षावृति को कानूनन अपराध घोषित करने के बावजूद उनकी तादाद कम नहीं हुई। सामाजिक अधिकार कार्यकर्ता लंबे समय से एक ऐसे कानून की मांग करते आए हैं, जिसमें भिखारियों को अपराधी मानने की बजाय पुनर्वास पर जोर हो। भिक्षावृत्ति की समस्या से निपटने के लिए अधिकतर राज्यों ने भिक्षावृत्ति को रोकने से जुड़े बॉम्बे भिक्षावृत्ति अधिनियम, अपनाया है, जिसके तहत पुलिस बिना वारंट के भिखारी को गिरफ्तार कर सकती है।

प्रदीप कुमार, दरभंगा बिहार

letter.editorsahara@gmail.com

हमें गर्व है हम भारतीय हैं

राष्ट्रीय सहारा • राष्ट्रीयता • कर्त्तव्य • समर्पण

सहारा इण्डिया मास कम्युनिकेशन के लिए प्रकाशक एवं मुद्रक जिया कादरी द्वारा सहारा इंडिया मास कम्युनिकेशन द्वारा हिन्दुस्तान मीडिया वेन्चर्स लिमिटेड प्रेस, मौजा-दरियापुर, पुलिस स्टेशन-शाहपुर, दानापुर, पटना से मुद्रित तथा चतुर्थ तल, सहारा इण्डिया विहार, बोरिंग रोड क्रासिंग, पटना से प्रकाशित। । स्थानीय संपादक - संजय त्रिपाठी *।

पटना कार्यालय- 3911448/417/454/422, फैक्स : 2535935,2520760 विज्ञापन-3911455/434, प्रसार- 3911451/428

वर्ष - 20, अंक 6837 आर.एन.आई. सं. -बीआईएचएचआईएन/2006/18082 Postal Reg. No. : R-10/NP-50/06-07

*इस अंक में प्रकाशित समस्त समाचारों के चयन एवं संपादन हेतु उत्तरदायी

संस्थापक: शहीद शिरोमणि लाला जगतनारायण जी, अमर शहीद रमेश चन्द्र जी एवं कलम के योद्धा अश्विनी कुमार जी

आदित्य नारायण चोपड़ा
adityachopra@punjabkesari.com

हवा में घुल गया जहर...

हवा में घुल गया जहर घुटन भरी फिजा हुई
दिल्ली में घिरी धुंध यूं कि जिन्दगी सजा हुई।
हवा भी हॉफ-हॉफ कर धूएं से करे मिन्नतें
चलो, कि अलविदा कहो, खुदा कि गर रजा हुई।

दिल्ली में लगातार बढ़ रहा प्रदूषण विफलता की तस्वीर उकेरता नजर आ रहा है। सुबह-सवेरे हवा घनी हो जाती है, आंखें चुभने लगती हैं और हर सांस भारी लगती है। फिर बहस शुरू हो जाती है कि दिल्ली की जहरीली हवाओं के लिए कौन जिम्मेदार है। जो भी कारण बताए जाते हैं वह नीतिगत नाकामियों का आसान निशाना है। यह सर्वविदित है कि दिल्ली की हवा साल भर प्रदूषित रहती है और इस बात से कोई इंकार नहीं कर सकता कि पराली जलाना, वाहनों से निकलने वाला धुआं और औद्योगिक उत्सर्जन इसमें महत्वपूर्ण योगदान देते हैं। हालांकि, आंकड़े दिवाली के बारे में कुछ और ही कहानी बयां करते हैं। हर साल त्यौहार में शहर का प्रदूषण स्तर आसमान छू जाता है। इस बार कई इलाकों में पीएम 2.5 का स्तर 1,700 माइक्रोग्राम प्रति घन मीटर को पार कर गया, जो विश्व स्वास्थ्य संगठन द्वारा सुझाए गए स्तर से लगभग 100 गुना अधिक है। ये मामूली उतार-चढ़ाव नहीं हैं। ये रातोंरात तेज गिरावट का संकेत देते हैं। अस्पतालों ने अस्थमा, सांस लेने में तकलीफ और हृदय संबंधी जटिलताओं के लिए आपातकालीन दौरों में बढ़ौतरी की सूचना दी है। प्रमाण स्पष्ट है: पार्टिकुलेट मैटर की इतनी अधिक सांद्रता के अल्पकालिक संपर्क से भी तीव्र श्वसन का संकट शुरू हो सकता है। एम्स ने कहा कि प्रदूषण के कारण दिल्ली में हैल्थ इमरजैंसी वाली स्थिति है। दिल्ली के मंत्री कहते हैं कि वे प्रदूषण नियंत्रण के लिए लगातार प्रयास कर रहे हैं लेकिन धरातल पर कुछ दिखाई नहीं देता। दिल्ली में कृत्रिम वर्षा कराया जाना भी महज नौटंकी ही साबित हुआ। कृत्रिम वर्षा के लिए आईआईटी कानपुर की उड़ानें भी नाकाम साबित हुई। हैरानी की बात तो यह है कि गंभीर हालात के बावजूद दिल्ली एनसीआर के कई स्कूल खेल प्रतियोगिता का आयोजन कर रहे हैं जो बच्चों के स्वास्थ्य के लिए खतरनाक है।

प्रदूषित हवा बच्चों के फेफड़ों के विकास को स्थायी रूप से कम कर सकती है। द न्यू इंग्लैंड जर्नल ऑफ मेडिसिन में की एक स्टडी के मुताबिक, हवा में प्रदूषण का मौजूदा स्तर 10 से 18 साल के बच्चों के फेफड़ों के विकास पर लंबे समय तक खराब असर डालता है। इस महत्वपूर्ण प्रोस्पेक्टिव स्टडी में हजारों बच्चों को शामिल किया गया था और पाया गया कि ट्रैफिक से जुड़े वायु प्रदूषण के ज्यादा संपर्क में आने वाले बच्चों में किशोरावस्था के दौरान फेफड़ों की कार्यक्षमता में कमी देखी गई।

इसी मुद्दे पर सुप्रीम कोर्ट ने सख्त दिप्पणी की और कहा कि दूषित हवा में बच्चों को खेल प्रतियोगिताओं में उतारना गैस चैंबर में डालने जैसा है। शीर्ष अदालत ने कमीशन फॉर एयर क्वालिटी मैजनमेंट को तुरंत स्कूलों को खेल प्रतियोगिताएं टालने का निर्देश जारी करना चाहिए। सुनवाई के दौरान यह भी सामने आया कि दिल्ली सरकार नवंबर-दिसंबर में स्कूलों के लिए इंटर जोनल स्पोर्ट्स टूर्नामेंट करवा रही है जबकि इस अवधि में एक्यूआई 500 से ऊपर चला गया है। प्रदूषण पर ही सुनवाई करते हुए दिल्ली हाईकोर्ट ने भी सख्त टिप्पणी की कि सरकार अपनी जिम्मेदारी से भाग रही है। सवाल यह भी है कि जब प्रदूषण का स्तर 'बेहद खराब' को भी पार कर चुका है तो ग्रैप-4 जेसे कदम क्यों नहीं उठाए जाते। अब दिल्ली में रहना बेहद मुश्किल हो चुका है। प्रदूषण से सांस की बीमारियां और अन्य गंभीर समस्याएं बढ़ रही हैं। चिंता का बड़ा कारण यह है कि यह सिर्फ बड़ों के लिए ही नहीं, बल्कि बच्चों के लिए भी कई तरह की स्वास्थ्य समस्याएं पैदा कर रही हैं। पूर्व की रिपोर्ट पहले ही यह कह रही है कि दिल्ली में जन्म लेने वाले बच्चों के फेफड़े गुलाबी नहीं काले हो रहे हैं। बच्चों में सांस की तकलीफ, आंखों और त्वचा की समस्या और एलर्जी हो रही है और बच्चों की रोग प्रतिरोधक क्षमता प्रभावित हो रही है। दिल्ली की हवा अब सिर्फ मौसम की मार नहीं, बल्कि सालभर सेहत के लिए खतरा बन गई। हवा में मौजूद छोटे-छोटे कण पीएम- 2.5, पीएम 10, नाइट्रोजन आक्साइड और दूसरे जहरीले पदार्थ बच्चों के फेफड़ों में घुसकर खून में मिल रहे हैं जो दिल और दिमाग पर असर डाल रहे हैं।

प्रदूषित हवा बच्चों के फेफड़ों के विकास को स्थायी रूप से कम कर सकती है। द न्यू इंग्लैंड जर्नल ऑफ मेडिसिन में की एक स्टडी के मुताबिक, हवा में प्रदूषण का मौजूदा स्तर 10 से 18 साल के बच्चों के फेफड़ों के विकास पर लंबे समय तक खराब असर डालता है। इस महत्वपूर्ण प्रोस्पेक्टिव स्टडी में हजारों बच्चों को शामिल किया गया था और पाया गया कि ट्रैफिक से जुड़े वायु प्रदूषण के ज्यादा संपर्क में आने वाले बच्चों में किशोरावस्था के दौरान फेफड़ों की कार्यक्षमता में कमी देखी गई।

दिल्ली वालों के फेफड़े सिकुड़ रहे हैं लेकिन हो रही है केवल सियासत। इसमें कोई संदेह नहीं कि हमारे जीवन की सुविधा भोगी जीवन शैली ने उन घातक गैसों को बढ़ावा दिया है जो ग्लोबल वार्मिंग और पोल्यूशन का कारण बनती है। चुनावों के दौरान प्रदूषण एक बड़ा मुद्दा तो रहा लेकिन राजनेताओं की उदासीनता ने आसन्न संकट को और बढ़ा दिया है। न जाने दिल्ली के पानी की तासीर कैसी है कि यहां का पानी जो एक बार पी लेता है वह दिल्ली वाला हो जाता है। कश्मीर से लेकर कन्याकुमारी तक के सांसद भी दिल्ली में आकर रहते हैं लेकिन वह भी दिल्ली की चकाचौंध में आकर गुम हो जाते हैं। वैभव की दीवानी दिल्ली में वह भी ऐसे गुम हो जाते हैं जैसे राजधानी में सब ठीकठाक है। कोई भी शासन प्रशासन पर दबाव नहीं बनाता कि समय रहते प्रदूषण नियंत्रण के लिए प्रयास करे। स्वच्छ ऊर्जा को बढ़ावा देने के लिए ऐसा जन आंदोलन शुरू किया जाए जिसमें जन-जन भागीदार हो। अगर अब भी हम नहीं चेते तो हम आने वाली पीढ़ियों को सांस लेने के लिए स्वच्छ हवा भी नहीं दे पाएंगे। दिल्ली में जीवन के संघर्ष में रोजी-रोटी की क्वायद में जुटे श्रमिकों को प्रदूषण निगल लेगा। राजनीतिक दल, सरकार और जनता को इच्छाशक्ति दिखानी होगी जो संकट का समाधान कर सके।

सराहनीय कदम...

गीता पाढा

"लाल आतंक के खात्मे के लिए यह सराहनीय कदम तुम्हारा है,
वर्ष 2026 तक सिद्ध हो जाएगा यह संकल्प तुम्हारा है,
देश की एकता और अखंडता को जिस तरह तुमने निखारा है,
निश्चय ही आने वाली पीढ़ियों के लिए
प्रेरणा स्तंभ बन जाएगा नाम तुम्हारा है..।"

कलम-दवात
कुमकुम चड्ढा

वन्दे मातरम्

यह मायने नहीं रखता कि आग भड़काने का काम सत्ताधारी दल ने किया या फिर नेता प्रतिपक्ष ने, यह भी गौण है कि मामला भाजपा का है या कांग्रेस का। महत्वपूर्ण यह है कि राष्ट्रीय गीत वंदे मातरम् को लेकर विवाद एक बार फिर भड़क उठा है।

यह अलग बात है कि वर्षों, बल्कि दशकों तक बंगालियों को छोड़कर लगभग सभी ने 'वंदे मातरम्' को 'वंदे मातरम्' ही उच्चारित किया, यह सहज ही भूलते हुए कि बंगला भाषा में 'V' ध्वनि होती ही नहीं लेकिन 'वंदे मातरम्' चलन में आया और आज तक उसी रूप में बना हुआ है। परंतु 'ब' और 'व' के इस अंतर से परे, इस आदरणीय गीत में एक सांप्रदायिक कोण भी जुड़ा है। यह गीत 1875 में लिखा गया था और सात वर्ष बाद प्रकाशित हुआ। इसके रचनाकार थे बंकिम चंद्र चट्टोपाध्याय, जो उस समय डिप्टी मजिस्ट्रेट और डिप्टी कलैक्टर के पद पर कार्यरत थे।

आज बंकिम चंद्र अपनी कब्र में करवटें बदल रहे होंगे, यह देखकर कि किस तरह देशभक्ति और राष्ट्रवाद को राजनीतिक हितों के लिए तोड़ा-मरोड़ा जा रहा है। यह भी कह देना आवश्यक है कि इसके लिए केवल वर्तमान शासन को दोषी ठहराना न तो सही है और न ही न्याय संगत। वह तो सिर्फ इतिहास के उन्हीं पन्नों को पलट रहा है, जिन्हें बहुत कम लोगों ने पढ़ा है और अधिकांश ने कभी देखा ही नहीं। सच्चाई यह है कि वंदे मातरम् स्वतंत्रता सेनानियों के लिए किसी युद्ध-नाद से कम नहीं था। ब्रिटिश सरकार ने इसे प्रतिबंधित कर दिया था लेकिन स्वतंत्रता के बाद इसे भारत के राष्ट्रीय गीत के रूप में अपनाया गया, राष्ट्रीय गान जन गण मन के समकक्ष स्थान देकर। बंगाली और संस्कृत के मेल वाला यह गीत कुल छह पदों का था, जिसे बंकिम चंद्र ने अपने गांव में एक आम के पेड़ के नीचे बैठकर लिखा था। बाद में उन्होंने इसे अपने उपन्यास आनंदमठ में भी स्थान दिया किंतु यह गीत उस समय सुर्खियों में आया जब तत्कालीन कलकत्ता में आयोजित कांग्रेस अधिवेशन में रवीन्द्रनाथ टैगोर ने इसे गाया। चूंकि कुछ पदों में देवी के संदर्भ थे, मुस्लिम समाज के एक वर्ग ने इसे धार्मिक स्वरूप वाला माना और कहा कि यह राष्ट्रवादी कम, धार्मिक अधिक है तथा इस्लाम के अनुरूप नहीं।

मुस्लिम लीग ने तो यहां तक कहा कि "इसके हृदय में निराशा और हताशा भरी हुई है" और "राष्ट्रवाद की आड़ में भारत में हिंदू राष्ट्रवाद का प्रचार किया जा रहा है।" मुहम्मद अली जिन्ना ने स्पष्ट कहा कि मुसलमान वंदे मातरम् को राष्ट्रीय गीत मानने से इंकार करते हैं। जवाहरलाल नेहरू भी उन लोगों में थे जिन्होंने नेताजी सुभाष चंद्र बोस को लिखा कि वंदे मातरम् मुस्लिम समुदाय को "कष्ट पहुंचा सकता है।" उन्होंने रवीन्द्रनाथ टैगोर को भी इसी आशय का पत्र भेजा था। बाद में कांग्रेस ने समावेशिता के आधार पर गीत के केवल पहले दो पद अपनाए, यह कहते हुए कि केवल वे ही हिस्से स्वीकार्य हैं "जिन पर धार्मिक या अन्य किसी आधार पर आपत्ति नहीं की जा सकती।" गीत की रचना के 150 वर्ष बाद, इसके बोल एक बार फिर विवादों में घिर गए हैं।

राष्ट्रीय गीत की 150वीं वर्षगांठ के वर्षभर चलने वाले समारोहों की शुरुआत करते हुए प्रधानमंत्री मोदी ने देश को याद दिलाया कि कांग्रेस ने वंदे मातरम् के महत्वपूर्ण पद हटा दिए थे। उन्होंने कहा, "1937 में वंदे मातरम् के महत्वपूर्ण चरण, इसकी आत्मा के हिस्से को काट दिया गया। वंदे मातरम् को तोड़ दिया गया, टुकड़ों में बांट दिया गया। इसी विभाजन ने देश के बंटवारे के बीज भी बोए।" साथ ही उन्होंने कहा कि नई पीढ़ी को यह जानना चाहिए कि "इस गीत के साथ ऐसा अन्याय क्यों हुआ।" कांग्रेस भी पीछे हटने वालों में नहीं है। उसका कहना है कि पहले दो अनुच्छेद अपनाने का सुझाव स्वयं रवीन्द्रनाथ टैगोर ने दिया था। उसने प्रधानमंत्री मोदी से माफी की भी मांग की है, टैगोर का "अपमान करने" और "गुरुदेव पर विभाजनकारी विचारधारा का आरोप लगाने" के लिए। खड़गे ने एक कदम आगे बढ़कर कहा कि भाजपा और आरएसएस ने न तो अपनी शाखाओं में और न ही दफ्तरों में वंदे मातरम् या जन गण मन कभी गाया, "इसके बजाय वे अब भी नमस्ते सदा वत्सले गाते हैं, एक गीत जो राष्ट्र की नहीं, उनके संगठन की महिमा करता है," कांग्रेस अध्यक्ष ने कहा। विवाद से इतर, यह स्वीकार करना होगा कि भाजपा ने राष्ट्रवाद को राजनीतिक विमर्श के केंद्र में लाने और इतिहास की विकृतियों को उजागर करने, कभी-कभी सुधारने का काम किया है।

वंदे मातरम् विवादों में घिरा है, यह सर्वविदित है लेकिन कितनों को पता था कि जिस राष्ट्रीय गीत को भारतीय गर्व से गाते आए हैं, वह अधूरा है? या यह कि कुछ पद हटाए गए किसी एक वर्ग को खुश करने के लिए, दूसरे की कीमत पर? भाजपा पर यह आरोप लगाया जा सकता है कि उसने एक पुराना विवाद फिर जगा दिया, पर हर भारतीय का अधिकार है कि वह तथ्य जाने और चाहे तो भाजपा की व्याख्या से सहमत हो या असहमत। देश के हर नागरिक का अधिकार है कि इतिहास को उसी रूप में जाने, न कि उस संस्करण में जिसे कांग्रेस या कोई भी राजनीतिक दल युवाओं को परोसना चाहता है, खासकर उस पीढ़ी को जो सोशल मीडिया पर पलती है और अक्सर आधी-अधूरी बातों से प्रभावित होती है। उदाहरण के तौर पर हमारे स्वतंत्रता सेनानियों को ही लें, वे जिन्होंने देश के लिए खून बहाया, फांसी पर चढ़े और वे भी जो गुमनाम रह गए। भारत की स्वतंत्रता की बात आते ही नेहरू, मोतीलाल और जवाहरलाल और महात्मा गांधी ही सबसे ऊपर दिखते हैं। कांग्रेस द्वारा प्रस्तुत इतिहास में सुभाष चंद्र बोस और सरदार पटेल जैसे नायक, नेहरू या गांधी की तुलना में छोटे प्रतीत होते हैं। अहिंसा का नारा सुविधाजनक है, पर यह मान लेना भोलापन होगा कि स्वतंत्रता, सरदार भगत सिंह और बोस जैसे क्रांतिकारियों के बलिदान के बिना मिल गई। इसलिए जब भाजपा नेतृत्व पटेल को केंद्र में लाया चाहे एक भव्य स्टैच्यू ऑफ यूनिटी के माध्यम से या उनकी 150वीं जयंती के दो-वर्षीय आयोजनों के जरिये तो इसे सराहना ही मिलनी चाहिए। वर्षों तक 31 अक्तूबर को शोक-दिवस के रूप में मनाया जाता रहा है। यह वह दिन है जब देश भारत की लौह-महिला इंदिरा गांधी को याद करता है, एक ऐसी प्रधानमंत्री जिन्हें उतना ही प्रेम मिला जितनी आलोचना, और जिन्हें 1984 में उनके ही सुरक्षा कर्मियों ने गोली मार दी थी। कांग्रेस ने अपने "परिवार ही पार्टी" वाले अलिखित सिद्धांत के अनुरूप, 31 अक्तूबर को इंदिरा गांधी के स्मरण-दिवस के रूप में ही प्रस्तुत किया। यदि भाजपा सरकार न होती तो गुजरात के बाहर बहुत कम लोगों को याद रहता कि 31 अक्तूबर सरदार पटेल का जन्मदिन भी है। मोदी सरकार ने यह परिदृश्य बदल दिया, इंदिरा गांधी की मृत्यु-तिथि को पृष्ठभूमि में धकेलते हुए और पटेल को पुनः राष्ट्रीय स्मृति में अग्रस्थ किया। इसी कारण इस वर्ष पटेल की 150वीं जयंती के समारोहों ने वह इतिहास फिर जीवित किया जिसे कांग्रेस ने अपने शासनकाल में लगभग आत्मसात कर लिया था।

भाजपा ने भारतीयों में एक नया राष्ट्रभक्तिपूर्ण उत्साह जगाया है। आज आम नागरिक तिरंगे से जुड़ाव महसूस करता है, 15 अगस्त को बाजारों में हर प्रकार और हर आकार के राष्ट्रीय ध्वज की कमी पड़ जाती है। दरअसल बड़े पैमाने पर पहली तिरंगा यात्रा भी भाजपा ने ही निकाली थी। और स्वतंत्रता के 75 वर्षों के उपलक्ष्य में शुरू किया गया राष्ट्रव्यापी हर घर तिरंगा अभियान, जो सरकारी पहल होते हुए भी जल्दी ही जनांदोलन में बदल गया, कालोनियों, बाज़ारों और घर-घर तक फैल गया।

जहां तक वंदे मातरम् का प्रश्न है वहां भगवा दल राष्ट्रवाद की भावना को तो प्रमुखता देता है।

कच्ची उम्र, जुर्म की डगर

आकाश चोपड़ा

दिल्ली में चोरी से लेकर हत्या तक ऐसी घटनाएं आम हैं जिसमें आरोपी नाबालिग होते हैं। ऐसी ही एक और घटना सामने आई है। विजय विहार इलाके में पांच नाबालिगों ने एक ऑटो ड्राइवर की हत्या कर दी। पुलिस का दावा है कि लूट का विरोध करने पर आरोपियों ने चाकू से गोदकर हत्या को अंजाम दिया। मृतक की पहचान 52 वर्षीय राकेश कुमार के रूप में हुई है। इस बाबत विजय विहार थाने में हत्या की धाराओं में केस दर्ज किया गया है। पांचों आरोपियों को पुलिस ने पकड़ लिया है। हाल ही में 10 नवंबर को भी एक घटना सामने आई थी, जिसमें भलस्वा डेयरी इलाके में एक युवक को उसी के ई-रिक्शा में डालकर लड़कों का एक ग्रुप ले गया था। इसके बाद उस युवक की पीट-पीटकर हत्या कर दी गई थी। पुलिस ने कुछ ही घंटों में सीसीटीवी और लोकल इंटेलिजेंस की मदद से पांच आरोपियों को पकड़ लिया था। इस हमले को अंजाम देने वाले आरोपियों में 3 नाबालिग थे, जिनकी उम्र 16, 14 और 16 थी।

दिल्ली को लेकर आई राष्ट्रीय अपराध रिकॉर्ड ब्यूरो की रिपोर्ट डराने वाली है। यहां नाबालिग अब नए क्रिमिनल बनकर उभर रहे हैं। आंकड़ों से पता चला है कि जनसंख्या कम होने के बावजूद, नाबालिगों (माइनर्स) की ओर से किए गए अपराधों के मामले में दिल्ली अब देश में पांचवें स्थान पर आ गया है। वहीं मेट्रो शहरों से तुलना करें तो ये टॉप पर हैं। इसने उत्तर प्रदेश, बिहार और हरियाणा जैसे अधिक आबादी वाले राज्यों को भी पीछे छोड़ दिया है। राजधानी के नाबालिग अब तेजी से संगठित अपराधों की ओर मुड़ रहे हैं।

आंकड़ों के अनुसार, चोरी और लूटपाट अभी भी सबसे आम अपराध हैं लेकिन दिल्ली पुलिस के अधिकारियों का कहना है कि अब अपराध का पैटर्न (तरीका) बदल रहा है। एक वरिष्ठ दिल्ली पुलिस अधिकारी ने कहा, "पिछले तीन सालों में शहर में नाबालिगों के अपराध बहुत चिंताजनक हो गए हैं। पहले वे असंगठित तरीके से काम करते थे और ज्यादातर चोरी और लूटपाट तक ही सीमित थे लेकिन अब हम देख रहे हैं कि नाबालिग गिरोह बना रहे हैं और उत्तर-पूर्व तथा दक्षिण दिल्ली में सक्रिय बड़े आपराधिक नेटवर्क के साथ मिलकर अपराध कर रहे हैं।"

साल 2023 में कुल 4,098 किशोरों को पकड़ा गया था। राष्ट्रीय अपराध रिकॉर्ड ब्यूरो के आंकड़ों से पता चला है कि इन किशोरों की शिक्षा का स्तर कुछ इस प्रकार था:शिक्षा का स्तर किशोरों की संख्या

पूरी तरह से अनपढ़ (कभी स्कूल नहीं गए)381प्राइमरी स्तर तक पढ़े (जल्दी स्कूल छोड़ा)995कक्षा 10 तक पढ़े (सबसे बड़ा समूह)1,432कक्षा 12 तक पढ़े,246उच्च माध्यमिक से आगे की पढ़ाई की।

"यह आंकड़ा रोचक है क्योंकि यह इस धारणा को तोड़ता है कि सभी अपराधी अनपढ़ होते हैं। वास्तव में, अधिकांश ने कक्षा 10 तक पढ़ाई की है और उसके बाद स्कूल छोड़ दिया।" इन आंकड़ों से यह भी सामने आया कि पकड़े गए 2,640 किशोर अपने माता-पिता के साथ रहते थे, 334 अभिभावकों के साथ और केवल 124 बेघर थे। जानकारों के मुताबिक नाबालिगों द्वारा बढ़ते अपराध की वजह मौजूदा शहरीकरण और औद्योगिकीकरण की प्रक्रिया से निर्मित संवेदनहीन माहौल है। ऐसे माहौल के कारण ज्यादातर परिवार अपने बच्चों को काबू में रखने में विफल हो रहे हैं। निजी आजादी में बढ़ोतरी से नैतिक मूल्य बिखरने लगे हैं। अधिक प्रतिस्पर्धा के कारण बच्चों की स्वाभाविकता छिन गई है। वे गुस्सैल और चिड़चिड़े होते जा रहे हैं। कम्प्यूटर और इंटरनेट ने नाबालिगों को समाज और परिवार से अलग-थलग कर दिया है। वे अवसाद के शिकार होने लगे हैं और अपराध की दुनिया में भी छलांग लगा लेते हैं। इन कारणों से नाबालिग अपराध के क्षेत्र में सक्रिय रहने लगे हैं। बच्चा वही सिखता है जो उसके आसपास घटित होता है। कोरोना काल में बच्चों की मनोदशा पर अधिक प्रभाव पड़ा है। इसकी वजह है ऑनलाइन गेमिंग व मेल-जोल का कम होना। बच्चे आजकल मोबाइल पर ऑनलाइन गेमिंग में अधिक व्यस्त हैं। इसमें भी बच्चों को आक्रोश वाले गेम अधिक पसंद हैं जिससे बच्चों की मनोदशा बदलती है। अपराध की कोई श्रेणी नहीं है। एक पढ़े-लिखे बच्चे से लेकर स्लम में रहने वाला कम शिक्षित या अनपढ़ बच्चा संगीन अपराध के लिए तैयार हो जाता है। उन्हें अपराध से मुक्त बनाए रखने के लिए केवल सरकार के भरोसे रहना भारी भूल होगी। समाज और घर परिवार को भी सचेत होने की जरूरत है। नाबालिगों द्वारा किए जा रहे यौन अपराधों की शिकार महिलाएं और युवतियों के साथ बच्चियां भी हो रही हैं। एक अध्ययन के मुताबिक 'भारतीय दण्ड संहिता' के तहत दर्ज नाबालिगों द्वारा किए जाने वाले अपराधों में 47 प्रतिशत बढ़ौतरी हुई है। नाबालिग होते हुए भी वे बालिगों जैसी आपराधिक वारदातों को अंजाम देने लगे हैं और नाबालिगों को दी जाने वाली छूट का लाभ उठाकर और भी खूंखार अपराधी बनने की ओर अग्रसर हो जाते हैं।

आमतौर पर देखा जाता है कि बालिग अपराधियों जैसे गंभीर अपराध करने के बावजूद नाबालिग अपराधी कठोर दंड से बच जाते हैं। वर्ष 2012 के 'निर्भया बलात्कार कांड' में पीड़ित लड़की के साथ सबसे अधिक दरिंदगी करने वाला नाबालिग अपराधी मृत्यु दण्ड से बच गया, जबकि इसी बलात्कार कांड में बाकी के सभी बालिग अपराधियों को फांसी दी गई। गंभीर अपराधों में संलिप्त नाबालिगों को लेकर कानून अस्पष्ट और लचर होने का ही परिणाम है कि उनका दुस्साहस लगातार बढ़ता चला गया है। यह देखा गया है कि जघन्य अपराधों को अंजाम देने वाले कई नाबालिगों पर बाल सुधार गृह में भेजने का भी कोई असर नहीं होता। खासतौर पर सुनियोजित तरीके से हत्या और बलात्कार जैसे अपराधों के नाबालिग आरोपियों के प्रति क्या नीति अपनाई जानी चाहिए, अब इस मसले पर सरकार और समाज को एक बार विचार करना होगा। जाहिर है, नाबालिगों में बढ़ती आपराधिक प्रवृत्ति को रोक पाना अकेले कानून के बस में नहीं है। अभी किशोर न्याय बोर्ड केवल 16 से 18 वर्ष के नाबालिग आरोपितों के मामले में बालिग की तरह केस चलाने की प्रार्थना पर विचार कर सकता है लेकिन बदलते समय में कानून के इस प्रविधान में संशोधन की जरूरत महसूस होती है। नाबालिगों द्वारा अपराध बढ़ रहे हैं। इस पर अंकुश लगाना जरूरी है। हत्या, दुष्कर्म जैसे गंभीर अपराध में संलिप्त हर आयु के नाबालिग से सख्ती से निपटना चाहिए। अगर उसकी प्रवत्ति आपराधिक पाई जाती है। इसके लिए समाज और शैक्षणिक सस्थाओं के साथ स्वयं मां-बाप को भी सक्रिय होना होगा, तभी हम अपनी औलादों को अपराध में संलिप्त होने से बचा पाएंगे और उन्हें देश का बेहतर नागरिक बना सकेंगे।

भारत के श्रम परिदृश्य में बदलावः 'विकसित भारत' के हित में श्रम संहिताएं

अतुल सोबती

एडविन ऑसगुड ग्रोवर ने सही कहा था कि "श्रम की गरिमा आपके काम पर नहीं,बल्कि आपके काम करने के तरीके पर निर्भर करती है।" भारत सरकार ने राष्ट्रीय श्रम मानकों और सामाजिक सुरक्षा के मजबूत ढांचे के जरिए इस गरिमा को बनाए रखने की दिशा में निरंतर प्रयास किया है। हालांकि, एक मजबूत नीतिगत ढांचे के साथ-साथ ऐसे लाभकारी रोजगार सुनिश्चित करने की भी जरूरत है, जिसके जरिए श्रमबल में आर्थिक बदलाव लाया जा सके। यह एक अलग बात है कि असली वित्तीय स्थिरता एवं आर्थिक सशक्तीकरण सार्थक रोजगार के अवसरों- विशेष रूप से ऐसे कार्य जो व्यक्तिगत कौशल एवं अनुभव से मेल खाते हों- की उपलब्धता पर निर्भर करता है और इन्हें केवल व्यापक-आधार वाले एवं बहु-क्षेत्रीय आर्थिक विकास के जरिए से ही हासिल किया जा सकता है। इस संदर्भ में, खासकर एक श्रम अधिशेष वाली अर्थव्यवस्था के रूप में मशहूर भारत के मामले में, जितनी भूमिका सरकार की है, उतनी ही जिम्मेदारी कॉरपोरेट जगत की भी है। हालांकि, कॉरपोरेट क्षेत्र के विकास के लिए ऐसे सक्षमकारी सामाजिक-कानूनी ढांचे और प्रगतिशील व दूरदर्शी श्रम कानूनों की जरूरत है, जो 21वीं सदी के भारत की आकांक्षाओं के अनुरूप हों।

चूंकि श्रम समवर्ती सूची में आता है, इसलिए केन्द्र और राज्य सरकारें दोनों ही इस विषय में कानून बनाती हैं। दशकों से, भारत का श्रम इकोसिस्टम 29 केन्द्रीय कानूनों द्वारा प्रशासित होता रहा है। इनमें से कई कानून आजादी से पहले के काल के हैं। बहुलता, जटिलता और पुराने प्रावधानों की चुनौतियों पर काबू पाने हेतु और द्वितीय राष्ट्रीय श्रम आयोग (2002) की सिफारिशों के अनुरूप, भारत सरकार ने चार व्यापक श्रम संहिताओं - मजदूरी संहिता, 2019, सामाजिक सुरक्षा संहिता, 2020, औद्योगिक संबंध संहिता, 2020 और पेशेगत सुरक्षा, स्वास्थ्य एवं कामकाज की स्थिति संहिता, 2020 - को लागू करके देश के श्रम इतिहास में सबसे दूरगामी सुधारों में से एक की शुरुआत की है। उल्लेखनीय रूप से, ये सुधार 1991 के उदारीकरण और संरचनात्मक समायोजन की नीतियों के बाद सही अनुक्रम में हासिल की गई ऐसी प्रमुख उपलब्धियां हैं,जो एक प्रगतिशील श्रम इकोसिस्टम और औद्योगिक विकास के लिए एक आधुनिक एवं नवाचार-संचालित ढांचा तैयार कर रही हैं।

श्रम सुधार:

मौजूदा श्रम कानूनों को तर्कसंगत एवं आधुनिक बनाने के जरिए, चारों श्रम संहिताओं का उद्देश्य विनियामक ढांचे को उल्लेखनीय रूप से सुव्यवस्थित करना और विभिन्न धाराओं, नियमों, प्रपत्रों एवं रजिस्टरों की संख्या को काफी कम करना है। यह श्रम कानूनों को समन्वित और सरल बनाने का एक व्यापक प्रयास है, जिससे देश भर के श्रमिकों का जीवनयापन और नियोक्ताओं का व्यवसाय करना अपेक्षाकृत अधिक आसान होगा।

आइए, अब इन श्रम संहिताओं के तहत पेश किए गए कुछ प्रमुख सुधारों पर बारीकी से नजर डालते हैं। मजदूरी संहिता के तहत किए गए सबसे उल्लेखनीय सुधारों में से एक है न्यूनतम मजदूरी का सार्वभौमिकरण। यह सुधार संगठित और असंगठित, दोनों क्षेत्रों के सभी कर्मचारियों पर लागू होगा। मौजूदा ढांचे के तहत, न्यूनतम मजदूरी का प्रावधान केवल विशिष्ट 'अनुसूचित रोज़गारों' तक ही सीमित है। इस संहिता में एक "मजदूरी की निम्न सीमा" (फ्लोर वेज) की अवधारणा भी पेश की गई है, जिसका निर्धारण केन्द्र सरकार जीवन स्तर और जीवन-यापन की लागत के आधार पर करेगी।

इससे यह सुनिश्चित होगा कि कोई भी राज्य अपनी न्यूनतम मजदूरी को राष्ट्रीय स्तर पर निर्धारित सीमा से कम नहीं कर सकेगा और देशभर में, जहां वर्तमान में मजदूरी की दरों में व्यापक अंतर है, एकरूपता को बढ़ावा मिलेगा। एक और प्रगतिशील बदलाव पारंपरिक श्रम 'निरीक्षक' की जगह 'निरीक्षक-सह-सुविधाकर्ता' की नियुक्ति है, जिसका कार्य श्रमिकों और नियोक्ताओं, दोनों को मार्गदर्शन, जागरूकता एवं स्वैच्छिक अनुपालन में सहायता प्रदान करना होगा। यह सख्त और अक्सर आलोचना का निशाना बनने वाले "इंस्पेक्टर राज" से स्पष्ट रूप से अलग साबित होगा। इन उपायों का उद्देश्य पारदर्शिता को बढ़ावा देते हुए, अनुपालन को सरल बनाते हुए और सरकार व नियोक्ताओं के बीच अपेक्षाकृत अधिक सहयोगात्मक संबंध सुनिश्चित करते हुए, श्रमिकों के लिए मजदूरी संबंधी सुरक्षा को मज़बूत करना है।

इसके अलावा, औद्योगिक संबंध (आईआर) संहिता निश्चित अवधि के रोजगार (एफटीई) की अवधारणा प्रस्तुत करती है। इससे निश्चित अवधि के कर्मचारियों को स्थायी कर्मचारियों के समान लाभ, जिसमें एक वर्ष की सेवा के बाद ग्रेच्युटी भी शामिल है, मिलना सुनिश्चित होगा। यह सुधार उद्योग जगत को अपनी परिचालन संबंधी जरूरतों के अनुसार नियुक्ति करने के लिए अत्यंत जरूरी सहूलियत प्रदान करता है और साथ ही साथ श्रमिकों के अधिकारों और कल्याण की रक्षा भी करता है। यह बदलाव विवादों को व्यवधान के बजाय बातचीत एवं वार्ता के जरिए सुलझाने के लिए प्रोत्साहित करता है। यही नहीं, यह संहिता 'वार्ता संघ' या 'वार्ता परिषद' की अवधारणा को लागू करके ट्रेड यूनियनों को वैधानिक मान्यता प्रदान करती है, जिससे सामूहिक सौदेबाजी तंत्र को मजबूती मिलती है और श्रमिकों के कल्याण को बढ़ावा मिलता है। यह संहिता कारखानों, खदानों और बागानों में छंटनी, काम से हटाने और तालाबंदी के मामलों में पूर्व सरकारी अनुमोदन की सीमा को मौजूदा 100 श्रमिकों से बढ़ाकर 300 श्रमिक करती है, जिससे औद्योगिक विकास और रोजगार सृजन के लिए अनुकूल वातावरण बन सकेगा।

विकसित भारत की ओर:

सामूहिक रूप से,ये चारों श्रम संहिताएं श्रमिकों के कल्याण और उद्योग एवं नियोक्ताओं के लचीलेपन के बीच संतुलन बनाने का प्रयास करती हैं। विभिन्न परिभाषाओं को सुव्यवस्थित करके, अनुपालन को डिजिटल बनाकर और लैंगिक समानता को बढ़ावा देकर, इन चारों श्रम संहिताओं को एक समतामूलक श्रम इकोसिस्टम की शुरुआत करने के इरादे से डिजाइन किया गया है। ये संहिताएं औद्योगिक विकास और समावेशी सामाजिक सुरक्षा, दोनों का समर्थन करती हैं, जो 2047 तक 'विकसित भारत' बनने की देश की आकांक्षा के अनुरूप है।

(लेखक (एससीओपीई) के (आईएलओ) के शासी निकाय के निर्वाचित सदस्य भी है।)

दिल्ली आर.एन.आई. नं. 40474/83
पंजाब केसरी
दिल्ली कार्यालय :
फोन आफिस: 011-30712200, 45212200,
प्रसार विभाग: 011-30712224
विज्ञापन विभाग: 011-30712229
सम्पादकीय विभाग: 011-30712292-93
मैगजीन विभाग: 011-30712330
फैक्स : 91-11-30712290, 30712384, 011-45212383, 84
Email: Editorial@punjabkesari.com

स्वत्वाधिकारी दैनिक समाचार लिमिटेड, 2-प्रिंटिंग प्रैस कॉम्पलैक्स, नजदीक वजीरपुर डीटीसी डिपो, दिल्ली-110035 के लिए मुद्रक, प्रकाशक तथा सम्पादक अनिल शारदा द्वारा पंजाब केसरी प्रिंटिंग प्रैस, 2-प्रिंटिंग प्रैस कॉम्पलैक्स, वजीरपुर, दिल्ली से मुद्रित तथा 2, प्रिंटिंग प्रैस कॉम्पलैक्स, वजीरपुर, दिल्ली से प्रकाशित।

मानवता की प्रगति दंड में नहीं, बल्कि करुणा में निहित है। -दलाई लामा

अगली पारी

बिहार विधानसभा चुनाव में राष्ट्रीय जनतांत्रिक गठबंधन (राजग) को मिली प्रचंड जीत के बाद पटना के ऐतिहासिक गांधी मैदान में जनता दल (यूनाइटेड) के सर्वोच्च नेता नीतीश कुमार ने अपने राजनीतिक जीवन में दसवीं बार राज्य के मुख्यमंत्री पद की शपथ लेकर इतिहास तो रचा ही है, प्रधानमंत्री मोदी सहित राजग के दिग्गज नेताओं की मौजूदगी में बिहार की राजनीति में स्थिरता का संदेश भी दिया है। नीतीश कुमार की यह उपलब्धि कोई सामान्य घटना नहीं है। वह करीब बीस वर्षों से राज्य के मुख्यमंत्री हैं, और केंद्र में भी मंत्री रहे हैं। उन्हें दूसरे नेताओं से अलग यह बनाता है कि इतनी लंबी राजनीतिक पारी में भी उन पर परिवारवाद या भ्रष्टाचार के आरोप नहीं हैं। नीतीश ने बिहार को कथित जंगलराज से सुशासन की तरफ तब मोड़ा, जब राज्य अपहरण, हत्या और भ्रष्टाचार का पर्याय बन चुका था। बिहार की राजनीति में उनका एक महत्वपूर्ण योगदान यह भी रहा कि उन्होंने अति पिछड़ों और महादलितों को न केवल राजनीतिक पहचान दी, बल्कि सत्ता में हिस्सेदारी भी दी। महादलित विकास मिशन, ईबीसी को आरक्षण और पंचायती राज में महिलाओं को 50 फीसदी आरक्षण जैसे कदम सामाजिक समीकरणों को पूरी तरह से बदलने वाले थे। आज भी बिहार की महिलाएं और अति पिछड़ा मतदाता नीतीश को उसी भरोसे के साथ देखते हैं। शराबबंदी की पहल महज एक नीतिगत फैसला नहीं था, बल्कि यह महिलाओं के सम्मान और घरेलू हिंसा पर लगाम कसने के लिए की गई सामाजिक क्रांति थी। भाजपा के साथ होने से उनकी ताकत दोगुनी हुई, क्योंकि वह जानते हैं कि बिहार जैसे राज्य में केंद्र के साथ चलना जरूरी है। विपक्षियों ने चुनाव से पहले उनके राजनीतिक भविष्य को लेकर क्या-क्या नहीं कहा, इसके बावजूद अगर वह फिर से इतिहास रचने को तैयार हैं, तो वजह यही है कि वह राजनीति व जनता, दोनों की नब्ज पहचानते हैं। वह उन बारीकियों को भी समझते हैं, जिनमें उन्होंने पलटूराम कहलाने का जोखिम उठाते हुए भी समयानुकूल राजनीतिक फैसले लेने का कौशल नहीं छोड़ा। उन्होंने यह भी साबित किया है कि राजनीति में छवि का निर्माण सियासी नाटकीयता से नहीं, बल्कि वर्षों तक लगातार काम करने से होता है। बहरहाल, अब उनसे यह उम्मीद लाजिमी है कि वह राज्य के बुनियादी मुद्दों पर किए जा रहे कार्यों को गति देंगे, ताकि बिहार, भारत का ग्रोथ इंजन बन सके।

हमें यूनुस को खुश करने की जरूरत नहीं

पाकिस्तानी सेना प्रमुख जनरल मुनीर भारत पर दो-मोर्चे वाला छद्म युद्ध थोपना चाहते हैं और यूनुस सरकार उनका ट्रंप कार्ड है। ऐसे में, भारत ने शेख हसीना को वापस भेजने के बांग्लादेश के आग्रह को खारिज कर कूटनीतिक दृष्टि से एक सही कदम उठाया है।

बांग्लादेश के इंटरनेशनल क्राइम्स ट्रिब्यूनल (आईसीटी) ने सोमवार को अपदस्थ प्रधानमंत्री शेख हसीना को मानवता के खिलाफ अपराधों के लिए मौत की सजा सुनाई, जिससे अवामी लीग और यूनुस के नेतृत्व वाली अंतरिम सरकार के बीच भारी टकराव का माहौल बन गया। गौरतलब है कि अंतरिम सरकार को पाकिस्तान समर्थक जमात-ए-इस्लामी जैसे कट्टरपंथी इस्लामी ग्रुप का समर्थन हासिल है। आरोपी की उपस्थिति के बगैर सुनवाई में बचाव के लिए हमेशा कम मौके मिलते हैं, खासकर तब, जब आरोपी को अपना बचाव दल बनाने की इजाजत न हो। हसीना का मामला आईसीटी द्वारा नियुक्त एक वकील देख रहा था, जिसने न तो बचाव पक्ष की तैयारी के लिए समय लेने की खातिर स्थगन की मांग रखी और न ही आरोप-पत्र दाखिल होने के बाद पांच हफ्तों की सुनवाई में एक भी गवाह पेश किया।

सुबीर भौमिक
वरिष्ठ पत्रकार

संयुक्त राष्ट्र एवं एमनेस्टी इंटरनेशनल ने अपदस्थ प्रधानमंत्री को मौत की सजा दिए जाने पर नाराजगी जताई है। संयुक्त राष्ट्र मानवाधिकार की प्रवक्ता रवीना शमदासानी ने एक बयान में कहा कि हालांकि हमें इस सुनवाई के बारे में पता नहीं था, फिर भी हमने हमेशा जवाबदेहीपूर्ण कार्यवाही की वकालत की है, खासकर अंतरराष्ट्रीय अपराध के आरोपों में, ताकि बिना किसी संदेह के उचित कार्यवाही और निष्पक्ष सुनवाई के अंतरराष्ट्रीय मानकों को पूरा किया जा सके। यह बात तब और भी महत्वपूर्ण हो जाती है, जब सुनवाई बिना आरोपी के मौजूदगी के की जाती है और फिर मौत की सजा सुनाई जाती है। हमें इस सजा पर खेद है और हम इसका विरोध करते हैं।

एमनेस्टी इंटरनेशनल की सेक्रेटरी जनरल, एग्नेस कैलामार्ड ने एक बयान में कहा कि 'शेख हसीना को मौत की सजा देने से 2024 के नरसंहार के पीड़ितों को इंसाफ नहीं मिलेगा।' उन्होंने अपने बयान में कहा, 'जुलाई-अगस्त, 2024 में छात्रों के विरोध प्रदर्शनों के दौरान हुए गंभीर उल्लंघन और मानवता के खिलाफ अपराधों के आरोपों के लिए जो लोग व्यक्तिगत रूप से जिम्मेदार हैं, उनकी जांच होनी चाहिए और निष्पक्ष सुनवाई में उन पर मुकदमा चलना चाहिए। हालांकि, यह सुनवाई और सजा न तो निष्पक्ष है और न ही सही। पीड़ितों को न्याय और जवाबदेही की जरूरत है, फिर भी मौत की सजा मानवाधिकारों के उल्लंघन को और बढ़ाती है। यह सबसे क्रूर, अपमानजनक और अमानवीय सजा है और किसी भी न्याय प्रक्रिया में इसकी कोई जगह नहीं है।'

शेख हसीना को मृत्युदंड देने से तब तक कोई फर्क नहीं पड़ेगा, जब तक वह भारत में हैं। लेकिन इस फैसले से साफ है कि यूनुस सरकार अवामी लीग पर लगा प्रतिबंध नहीं हटाएगी और न ही उसे फरवरी में होने वाले चुनावों में हिस्सा लेने की इजाजत देगी। अवामी लीग ने बांग्लादेश की आजादी की लड़ाई का नेतृत्व किया और आजादी के बाद के आधे इतिहास में उस पर राज किया। चाहे अवामी लीग के किसी भी नेता को सजा मिल जाए, लेकिन अवामी लीग के बिना बांग्लादेश में सबको साथ लेकर चलने वाला चुनाव नहीं हो सकता। लीग कभी भी हथियारबंद क्रांति वाली पार्टी नहीं थी, बल्कि यह चुनावों के जरिये सत्ता में यकीन रखती थी। 1970 के पाकिस्तान चुनावों में जबर्दस्त जीत के बाद जब इसे सत्ता से बाहर कर दिया गया और बंगाली लोगों का भयानक नरसंहार हुआ, तभी अवामी लीग को हथियारबंद लड़ाई का सहारा लेना पड़ा। 1971 में पाकिस्तानी सेना की तरह, यूनुस और उनके कट्टर इस्लामी समर्थक अवामी लीग को हाशिये पर धकेल रहे हैं। इसके तहत यूनुस ने पहले तो सुनियोजित अभियान के तहत अवामी लीग को सत्ता से हटाया गया, फिर उसे चुनाव में भागीदारी करने से प्रतिबंधित भी कर दिया।

हैरानी की बात नहीं है कि हसीना के बेटे सजीब वाजेद जॉय ने कहा कि अगर अवामी लीग को चुनाव में शामिल होने का मौका नहीं दिया गया, तो हिंसा हो सकती है। बांग्लादेश की राजनीति में नतीजे अक्सर सड़क पर लोगों के समर्थन से तय होते हैं। हालात बिगड़े हुए हैं, अब यूनुस को अवामी लीग के बड़े विरोध प्रदर्शनों का सामना करना पड़ सकता है, जिसे दबाने के लिए उन्होंने पुलिस को खुली छूट दे दी है और अपने सलाहकार आसिफ महमूद शोजिब भुयान को नेशनल आर्म्ड रिजर्व की आड़ में एक इस्लामी मिलिशिया बनाने की भी इजाजत दे दी है। करीब 8,000 मिलिशिया के लोगों को पुलिस की वर्दी और दंगा कंट्रोल करने वाले उपकरण दिए गए, जो कानून और व्यवस्था के कामों के लिए मानक संचालन प्रक्रियाओं का खुला उल्लंघन है। अगर अवामी लीग के प्रदर्शनकारियों पर पुलिस और मिलिशिया की हथियारबंद कार्रवाई होती है, तो उन्हें हथियारबंद कार्रवाई करने के लिए मजबूर होना पड़ेगा और इसके लिए सिर्फ यूनुस ही जिम्मेदार होंगे।

मोदी सरकार ने सजा के फैसले और हसीना को वापस भेजने के बांग्लादेश के आग्रह को नजरअंदाज कर दिया है। बांग्लादेश के विदेश मंत्रालय के प्रवक्ता के एक बयान में कहा गया है कि भारत ने आईसीटी के फैसले पर ध्यान दिया है। लेकिन भारत के सभी राजनीतिक दल हसीना को पनाह देना जारी रखने के पक्ष में हैं। भारत के पास यूनुस की मदद करने का कोई कारण नहीं है, जिनकी पाकिस्तान से दोस्ती जगजाहिर है। चिंता की बात यह है कि पाकिस्तान के बांग्लादेश के साथ सैन्य रिश्ते तेजी से सुधर रहे हैं। इससे पाकिस्तान के सेना प्रमुख जनरल आसिम मुनीर को यह आत्मविश्वास मिला है कि वह भविष्य में किसी लड़ाई में भारत को पूरब के मोर्चे पर भी धमका सकते हैं। मुनीर साफ तौर पर 1971 से पहले के दिनों की तरह भारत पर दो-मोर्चे वाला छद्म युद्ध थोपना चाहते हैं और यूनुस सरकार उनका ट्रंप कार्ड है।

बांग्लादेश में भारत के पास कोई संक्षिप्त विकल्प नहीं है। 1971 के मुक्ति युद्ध की सोच से जुड़े आजादी के समर्थक लोग भारत के भरोसेमंद साथी हैं। दिल्ली ने उन्हें मजबूत बनाने के तरीके ढूंढ लिए हैं, भले ही इसका मतलब अवामी लीग के संदिग्ध लोगों को हटाना हो, जिन्होंने सत्ता में रहते हुए हिफाजत-ए-इस्लाम जैसे कट्टरपंथी इस्लामी तत्वों के साथ मिलकर काम किया है। अफगानिस्तान की तरह बांग्लादेश में भी राष्ट्रवाद को भाषा एवं संस्कृति से ताकत मिलती है, न कि कट्टरपंथी इस्लाम से, जो पाकिस्तान के जिहादी एजेंडे का मुकाबला करने के लिए भारत का सबसे अच्छा दांव है। जो काम पश्चिम में हुआ, वही अब भारत को पूरब में भी करना चाहिए, जैसा 1971 में हुआ था, लेकिन सिर्फ दिल्ली ही अपनी सही प्राथमिकता तय कर सकती है। edit@amarujala.com

मानव तस्करी

बच्चे गुम होकर जाते कहां हैं

देश में हर आठ मिनट में एक बच्चा गुम हो रहा है। बच्चों की गुमशुदगी की शिकायत 2022 की तुलना में 2023 में 9.5 फीसदी बढ़ी है। इनमें 71.4 प्रतिशत लड़कियां हैं।

उच्चतम न्यायालय ने भारत में हर आठ मिनट में एक बच्चे की गुमशुदगी पर गहरी चिंता प्रकट की और तत्काल इसका समाधान चाहा। यह चिंता विभिन्न अंतरराष्ट्रीय व राष्ट्रीय सर्वेक्षणों से भी उभरती है। एनसीआरबी की *भारत में अपराध 2023* रिपोर्ट के अनुसार, देश में दर्ज होने वाली बच्चों की गुमशुदगी की शिकायत 2022 की तुलना में 2023 में 9.5 फीसदी बढ़ी है। इनमें 71.4 प्रतिशत लड़कियां हैं। एनसीआरबी के आंकड़ों का राज्यवार विश्लेषण करें, तो उत्तर प्रदेश सबसे आगे नजर आता है, जहां 2023 में 25,000 से अधिक मामले दर्ज हुए। उसके बाद बिहार (18,000), पश्चिम बंगाल (15,000) और महाराष्ट्र आते हैं। दिल्ली-एनसीआर जैसे शहरों में तो 50 प्रतिशत से अधिक मामलों का पता ही नहीं लग पाता है।

रिपोर्ट के अनुसार, कुल गुमशुदा बच्चों में से करीब 74 फीसदी को बरामद किया जाता है, लेकिन शेष 26 प्रतिशत बच्चे गुम ही रह जाते हैं। ये बच्चे अक्सर मानव तस्करी के नेटवर्क में फंस जाते हैं। एनसीआरबी का 'ट्रैक-चाइल्ड' पोर्टल 2023 में ऐसे 80 प्रतिशत मामलों में सहायक सिद्ध हुआ, लेकिन डाटा एंट्री में देरी और स्थानीय पुलिस की उदासीनता इसमें बड़ी बाधाएं बनी रहीं। रिपोर्ट में बच्चों के खिलाफ बढ़े 9.2 फीसदी अपराधों में गुमशुदगी को प्रमुख घटक माना गया। इन आंकड़ों के अलावा, यूनिसेफ इंडिया की 2024 की वार्षिक रिपोर्ट *द स्टेट ऑफ द वर्ल्ड्स चिल्ड्रेन* में वैश्विक स्तर पर 4.88 करोड़ बच्चों के विस्थापन का जिक्र है, जिसमें भारत का बड़ा हिस्सा है। रिपोर्ट के अनुसार, संघर्ष और हिंसा से प्रभावित क्षेत्रों में 5.2 करोड़ से अधिक बच्चे स्कूल से वंचित हैं, जो गुमशुदगी का प्राथमिक कारण बनता है।

जयसिंह रावत

भारत में, ग्रामीण क्षेत्रों में गरीबी व शिक्षा की कमी के चलते 40 फीसदी गुमशुदा बच्चे मानव तस्करी के शिकार होते हैं। यूनिसेफ के अनुमानों के अनुसार 2024 में डेढ़ से दो लाख बच्चे गुम हुए, जिनमें 30 प्रतिशत तस्करी से जुड़े। संगठन ने डिजिटल ट्रैकिंग एप्स व स्कूल-आधारित अलर्ट सिस्टम की सिफारिश की है, ताकि प्रारंभिक चेतावनी प्रणाली मजबूत हो। बचपन बचाओ आंदोलन (बीबीए) के सर्वेक्षण के अनुसार, 70 फीसदी गुमशुदा बच्चे बाल श्रम या जबरन विवाह में धकेल दिए जाते हैं, जिसमें 2024-25 में 20 फीसदी की वृद्धि हुई है। बीबीए का नवीनतम डाटा ऑनलाइन ग्रूमिंग को नया खतरा बताता है। इसी तरह सेव द चिल्ड्रेन इंडिया की 2024 की रिपोर्ट *स्टोलेन फ्यूचर्स* में गुमशुदगी को 'चोरी हुआ भविष्य' करार दिया गया है। रिपोर्ट के अनुसार, 2023 में गुमशुदा बच्चों में 25 फीसदी यौन शोषण से जुड़े थे। संगठन ने पीओसीएसओ एक्ट को मजबूत करने और एनजीओ-सरकार साझेदारी की वकालत की है। एनसीपीसीआर का 2025 डैशबोर्ड रीयल-टाइम ट्रैकिंग उपलब्ध कराता है। इसने 'वात्सल्य' पोर्टल लॉन्च किया है, जो लापता और असुरक्षित बच्चों का डाटाबेस रखता है, लेकिन जागरूकता की कमी एक बड़ी बाधा है।

एनसीआरबी के अनुसार, 45,000 मामले तस्करी से जुड़े हैं। यूनिसेफ की रिपोर्ट सीमा क्षेत्रों में नेपाल-बांग्लादेश मार्ग पर प्रकाश डालती है। सुप्रीम कोर्ट के निर्देशानुसार, केंद्र को एआई-आधारित ट्रैकिंग पर आधारित 'बाल सुरक्षा पोर्टल' लॉन्च करना चाहिए। यूनिसेफ की सलाह पर स्कूलों में अलर्ट सिस्टम लागू हों। बीबीए ने पुलिस प्रशिक्षण पर जोर दिया है, जबकि सेव द चिल्ड्रेन ने पीओसीएसओ को सख्ती से लागू करने की मांग की। एनसीपीसीआर का 'ई-बाल निदान' प्लेटफॉर्म शिकायत पंजीकरण को आसान बनाए। राज्य सरकारें 'ट्रैक-चाइल्ड' को अनिवार्य करें व एनजीओ के साथ साझेदारी बढ़ाएं।

जिंदगी का सबसे सुंदर अध्याय

सातवें दशक का पार हो जाना किसी तरह का अंतिम सत्र नहीं, बल्कि शुरुआत का नया अध्याय है। 'सत्तर के पार' होने पर एहसास हुआ कि मुझे खुद से कुछ सवाल करने चाहिए।

मेरे जीवन में बहुत कम घटनाएं ही मेरे द्वारा चुनी गई हैं। यह सच है कि भले ही मेरा बचपन, मेरी शिक्षा, जीविका मेरे नियंत्रण में नहीं थी, फिर भी इन्होंने मुझे आकार दिया। जिंदगी का अनुभव यही बताता है कि जब हम खुद जागरूक होकर अपने जीवन के पन्नों को पलटते हैं, तभी हमें नई ऊर्जा और नई दिशाएं मिलती हैं।

डायना एथिल

सातवें दशक का पार हो जाना किसी तरह का अंतिम सत्र नहीं, बल्कि शुरुआत का नया अध्याय है। मेरे सत्तरवें जन्मदिन पर कोई बड़ा बदलाव नहीं आया, क्योंकि मैं उस पर ध्यान ही नहीं दे पाई थी। लेकिन मेरे 71वें जन्मदिन ने मुझे एक नया दृष्टिकोण दिया। मुझे एहसास हुआ कि उम्र के इस पड़ाव पर, यानी 'सत्तर के पार' होने पर, मुझे खुद से कुछ सवाल करने चाहिए। मुझे यह समझना चाहिए कि वृद्धावस्था का सामना करना सिर्फ शारीरिक बदलावों को स्वीकार करने का नहीं, बल्कि मानसिक और भावनात्मक जुड़ाव को बनाए रखने का भी नाम है। यह भी समझना चाहिए कि जीवन की चुनौतियों से न भागकर उनका सामना करना चाहिए।

मुड़-मुड़ के देख

वृद्धावस्था का मतलब यह नहीं कि हम खुद को किसी दायरे में समेट लें। यह एक मौका है खुद को फिर से चुनौती देने का, खुद से नए सवाल पूछने का और अपनी क्षमताओं को फिर से पहचानने का। समाज से जुड़े रहना, मानसिक व शारीरिक रूप से सक्रिय रहना और तनाव से निपटना, आदि-ये सब उम्र बढ़ने के साथ जरूरी हो जाते हैं। अपनी ऊर्जा को सृजनात्मक कार्यों में लगाना, चाहे वह चित्रकला हो या कुछ और, मन को भी ताजगी देता है। भले ही मेरे शुरुआती प्रयास कमजोर रहे हों और मैं एक बेहतर कलाकार नहीं बन पाई, लेकिन मैं हमेशा खुद को चुनौती देती रही।

अब, जो कुछ भी मैं देखती हूं, उसे पहले से कहीं बेहतर ढंग से समझ सकती हूं। भले ही हम बुजुर्ग हो जाएं, पर सच तो यह है कि वृद्धावस्था में भी अपने प्रयासों से हम जीवन में खुशी और संतुष्टि ला सकते हैं, और यही किसी भी जिंदगी का सबसे सुंदर तोहफा होता है।

ताकि मलाल न रहे

वृद्धावस्था में हेल्थ इंश्योरेंस पॉलिसी लेते वक्त किन बातों को ध्यान में रखना चाहिए? बता रहे हैं विशेषज्ञ...

72 वर्षीय सेवानिवृत्त शिक्षक रामप्रसाद शर्मा को स्वास्थ्य बीमा होने के बावजूद इलाज के लिए पुश्तैनी जमीन बेचनी पड़ी। आपके साथ ऐसा न हो, इसके लिए कुछ बातों का ध्यान रखें।

72 वर्षीय सेवानिवृत्त शिक्षक रामप्रसाद शर्मा घर की रौनक थे। अचानक सीने में दर्द होने पर डॉक्टर ने हार्ट की नसें ब्लॉक बताईं और एंजियोप्लास्टी के लिए पांच लाख रुपये खर्च की बात कही। उनके पास स्वास्थ्य बीमा (हेल्थ इंश्योरेंस पॉलिसी) था, जिसे उन्होंने बुढ़ापे की ढाल समझा था। लेकिन क्लेम करते वक्त बीमा कंपनी ने पुरानी उच्च रक्तचाप की दवा को 'पहले से मौजूद बीमारी (पीईडी)' मानते हुए क्लेम रिजेक्ट कर दिया। इलाज के लिए उन्हें पुश्तैनी जमीन बेचनी पड़ी। यह कहानी उनके जैसे लाखों बुजुर्गों की है। बीमा कंपनियों की मनमानियों को रोकने व नियमों को सुधारने के लिए भारतीय बीमा विनियामक और विकास प्राधिकरण (इरडा) ने कई कदम उठाए हैं।

स्वास्थ्य बीमा में बदलाव : अप्रैल, 2024 में इरडा ने स्वास्थ्य बीमा खरीदने की ऊपरी आयु सीमा 65 वर्ष को खत्म कर दिया, जिससे अब हर कोई पॉलिसी ले सकता है। जनवरी, 2025 में इरडा ने तय किया कि बुजुर्गों की पॉलिसी के वार्षिक प्रीमियम में 10 फीसदी से अधिक वृद्धि के लिए मंजूरी जरूरी होगी, जो पहले 50-60 प्रतिशत तक थी। पीईडी के कवरेज के लिए प्रतीक्षा अवधि को भी 48 से घटाकर 36 महीने किया गया। जीएसटी को 18 फीसदी से घटाकर शून्य करने से भी बीमा सस्ता हुआ।

बीमा लेते वक्त बरतें सावधानी : स्वास्थ्य बीमा लेते वक्त डायबिटीज, हाइपरटेंशन जैसी पुरानी बीमारियों को छिपाना भारी पड़ सकता है। इन्हें इंश्योरेंस फॉर्म में नहीं बताने पर कंपनियां इसे 'नॉन-डिस्क्लोजर (बीमारी को छिपाना)' मानकर पॉलिसी या क्लेम रद्द कर सकती हैं। कैटरेक्ट, हार्निया, जोड़ प्रत्यारोपण जैसे विशिष्ट रोगों और पहले से मौजूद बीमारियों के लिए प्रतीक्षा अवधि होती है, जिसमें अगर

ऑपरेशन की जरूरत पड़ी, तो क्लेम नहीं मिलता। को-पेमेंट 10-20 फीसदी तक हो सकता है, यानी क्लेम का इतना हिस्सा आपको खुद देना पड़ता है। बुजुर्गों के मामले में यह 50 प्रतिशत तक हो सकता है। कई बार 3-5 लाख रुपये की पॉलिसी पर्याप्त नहीं होती, क्योंकि इलाज का खर्च (मेडिकल इन्फ्लेशन) सालाना 14 फीसदी की रफ्तार से बढ़ रहा है। उम्र के चलते बुजुर्गों के बार-बार अस्पताल जाने की आशंका ज्यादा रहती है। ऐसे में, कम कवरेज होने पर बड़ा इलाज वित्तीय संकट में डाल सकता है। साथ ही, कई एजेंट, सब कुछ कवर है, कहकर पॉलिसी बेच देते हैं, जबकि हर पॉलिसी में कुछ एक्सक्लूजन होते हैं, यानी ऐसे रोग, जो स्थायी रूप से कवर नहीं किए जाते। इसलिए पॉलिसी दस्तावेज पढ़कर ही हस्ताक्षर करें।

कितना हो बीमा कवर : पॉलिसीबाजार के स्वास्थ्य बीमा प्रमुख सिद्धार्थ सिंघल कहते हैं कि वरिष्ठ नागरिकों के पास कम से कम 50 लाख रुपये की स्वास्थ्य बीमा पॉलिसी होनी चाहिए। इलाज महंगा होने के साथ कवरेज बढ़ना आवश्यक है। छोटे शहरों में इलाज का खर्च कम होता है, लेकिन बार-बार अस्पताल में भर्ती होना पड़ सकता है। इसलिए इन शहरों के वरिष्ठ नागरिकों के पास 25 से 30 लाख का सम इंश्योर्ड होना जरूरी है। - **पवन पांडेय**

*जिंदगी की **दूसरी पारी** बहुत महत्वपूर्ण होती है। हर शुक्रवार इस पर आपको नया पढ़ने को मिलेगा। आप अपने विचार, अनुभव या समस्याएं* edit@amarujala.com *पर भेज सकते हैं, विशेषज्ञों की मदद से हम कोशिश करेंगे कि संवाद का पुल बन सके।*

कौन-सी पॉलिसी बेहतर

फैमिली फ्लोटर प्लान में सम इंश्योर्ड का इस्तेमाल पूरे परिवार के लिए होता है। वहीं, व्यक्तिगत स्वास्थ्य बीमा में पूरे कवरेज का उपयोग सिर्फ बीमित व्यक्ति कर सकता है। बुजुर्गों के लिए स्वास्थ्य से जुड़ी समस्याओं को देखते हुए व्यक्तिगत प्लान लेना ही बेहतर विकल्प है।

राइडर और ऐड-ऑन क्यों जरूरी

वरिष्ठ नागरिकों को वित्तीय बोझ को कम करने के लिए स्वास्थ्य बीमा के साथ 'राइडर या ऐड ऑन' शामिल करने चाहिए। बीमा में पहले से पीईडी को कवर करने वाले राइडर शामिल करें, ताकि मधुमेह, उच्च रक्तचाप जैसी बीमारियों के लिए पहले दिन से कवर मिले और प्रतीक्षा अवधि लंबी न हो। ओपीडी कवर भी जरूरी है। कंज्यूमेबल्स कवर लेना चाहिए, जिससे दस्ताने, कैथेटर, ड्रेसिंग जैसे सामान आदि का खर्च जेब से न हो।

सुपर टॉप-अप का विकल्प

सिंघल बताते हैं कि सुपर टॉप-अप कम प्रीमियम में ज्यादा कवरेज देता है और मौजूदा बेसिक स्वास्थ्य बीमा के ऊपर अतिरिक्त सुरक्षा प्रदान करता है। इसमें एक डिडक्टिबल राशि तय होती है। इलाज के खर्चे इससे ज्यादा हो जाने पर सुपर टॉप-अप उन्हें कवर करता है। उदाहरण के लिए, आपका सामान्य (बेसिक) स्वास्थ्य बीमा का कवर तीन लाख रुपये है। आपने तीन लाख के डिडक्टिबल के साथ 15 लाख रुपये के सुपर टॉप-अप प्लान लिया है। एक साल में दो बार अस्पताल में भर्ती होने पर कुल 12 लाख रुपये खर्च हो गए। बेसिक पॉलिसी तीन लाख रुपये देगी, बाकी नौ लाख रुपये की भरपाई सुपर टॉप-अप कवर करेगा। यह बुजुर्गों के लिए काफी फायदेमंद है।

वरिष्ठ नागरिकों के काम की संस्थाएं

- *हेरिटेज फाउंडेशन* वरिष्ठ नागरिकों की देखभाल और गहन प्रशिक्षण, परामर्श और होम हेल्थकेयर जैसी सेवाएं प्रदान करता है। यह कार्यशालाओं, सम्मेलनों और कार्यक्रमों के माध्यम से स्कूलों, कॉलेजों और सामुदायिक स्थलों में वरिष्ठ नागरिकों की चुनौतियों और योगदानों के बारे में जागरूकता बढ़ाने का काम करता है। अधिक जानकारी के लिए फाउंडेशन की आधिकारिक वेबसाइट heritagefoundationindia.in या ई-मेल info@heritagefoundation.org पर जाकर संपर्क कर सकते हैं।
- *गांधीभवन इंटरनेशनल ट्रस्ट* एक गैर-लाभकारी भारतीय संगठन है, जो बेसहारा वृद्धजनों को आश्रय, चिकित्सा और अन्य सहायता सेवाएं प्रदान करता है। बुजुर्गों के मानसिक और भावनात्मक स्वास्थ्य के लिए योग, ध्यान, और मनोरंजन जैसी गतिविधियां भी आयोजित की जाती हैं। यह संगठन फिजियोथेरेपी एवं मनोरोग सेवाएं भी प्रदान करता है। अधिक जानकारी के लिए इसकी आधिकारिक वेबसाइट gandhibhavan.org पर जाकर या info@gandhibhavan.org ई-मेल के जरिये ट्रस्ट से संपर्क कर सकते हैं।

https://t.me/AllNewsPapersPaid1

दसवीं बार शपथ

बिहार के मुख्यमंत्री के रूप में दसवीं बार शपथ लेकर नीतीश कुमार ने भारतीय राजनीति को बहुत व्यापक संदेश दिए हैं। यह एक राज्य के लिए खुशी का भी क्षण है और राजनीतिक अध्ययन का भी। नीतीश कुमार के नेतृत्व में बिहार विधानसभा चुनावों में भारी बहुमत हासिल करने के बाद जिस सहजता से नई सरकार का शपथ ग्रहण हुआ है, वह भी सराहनीय है। बिहार की यह जीत वास्तव में राष्ट्रीय जनतांत्रिक गठबंधन (एनडीए) की एक बहुत बड़ी सफलता है। इस सफलता के क्या मायने हैं, यह हम शपथ ग्रहण में प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी की मौजूदगी से समझ सकते हैं। उन्होंने मुख्यमंत्री नीतीश कुमार का हाथ पकड़कर हवा में लहराया और उसके बाद बिहार की जनता को एकाधिक बार प्रणाम किया। राजनीति को समझने वाले जानते हैं कि बिहार में अगर एनडीए की हार होती, तो इसका असर देश की राजनीति पर क्या होता? विपक्ष मानता है कि बीते वर्ष लोकसभा चुनाव में बहुत मुश्किल से एनडीए सरकार बची है। लोकसभा चुनाव में उत्तर प्रदेश और बिहार में भाजपा या एनडीए को उम्मीद के मुताबिक सीटें नहीं मिली थीं। अतः इस वर्ष बिहार चुनाव में 202 सीटों के साथ एनडीए की जीत ने देश की राजनीति को जो संदेश दिया है, उसकी गूंज आगामी वर्षों में भी रहेगी।

पटना के गांधी मैदान में मुख्यमंत्री नीतीश कुमार के अलावा, दो उप-मुख्यमंत्रियों सहित 26 सदस्यीय मंत्रिमंडल ने शपथ ली है। सम्राट चौधरी और विजय कुमार सिन्हा फिर उप-मुख्यमंत्री बनाए गए हैं। वास्तव में, यह जीत इतनी बड़ी है कि बिहार में उच्च स्तरीय नेतृत्व को बदलने की कोई जरूरत महसूस नहीं हुई। 26 सदस्यीय मंत्रिमंडल में तीन महिलाएं हैं और एक अल्पसंख्यक। बहुत सोच-समझकर मंत्रिमंडल बनाया गया है और यह बहुत स्पष्ट है कि इस बार बिहारवासियों की महत्वाकांक्षाएं बहुत बढ़ गई हैं। राज्य के अंदर ही नहीं, बाहर भी सबको सुखद बदलावों का इंतजार है। यहां लोग अपने हित के लिए पहले की तुलना में ज्यादा मुखर हुए हैं। विधानसभा चुनाव से ठीक पहले बिहार सरकार की जैसी सक्रियता दिखी है, उससे बिहार सरकार के रणनीतिकारों को जरूर अंदाजा होगा कि यहां अब लोग क्या चाहते हैं? लोगों की इच्छा और अपने घोषणापत्र के अनुरूप सरकार को काम करना होगा। यह ध्यान देने की बात है कि विधानसभा के अंदर भले ही विपक्ष कमजोर हुआ है, लेकिन बाहर वह लगातार सवालों की बौछार करेगा। कुल मिलाकर, नीतीश कुमार की नई सरकार बिहार को नई ऊंचाइयों पर ले जाने के लिए प्रेरित होनी चाहिए।

बिहार में नीतीश कुमार के नेतृत्व में बहुत सोच-समझकर मंत्रिमंडल बनाया गया है और यह बहुत स्पष्ट है कि इस बार बिहारवासियों की महत्वाकांक्षाएं बहुत बढ़ी हुई हैं।

बिहार में भाजपा का वर्चस्व बढ़ा है, लेकिन वह नीतीश कुमार को साथ लेकर चलते हुए एक अलग प्रकार की राजनीति का संकेत दे रही है। बिहार में भाजपा की अलग राजनीति वास्तव में नीतीश कुमार की मजबूती का भी परिणाम है। एक समय था, जब लालू प्रसाद यादव बहुत बड़े व सक्रिय नेता थे, उन्हें मुख्यमंत्री पद की शपथ लेने के दो मौके मिले, लेकिन नीतीश कुमार अपने समावेशी स्वभाव की वजह से दसवीं बार शपथ ले चुके हैं। मतलब, साफ छवि किसी भी राजनेता को देर तक संजीवनी देती है। लगभग बीस वर्ष मुख्यमंत्री रहने के बावजूद नीतीश कुमार ने अपने शासन में जैसे अनुशासन का परिचय दिया है, वह दुर्लभ है। मुख्यमंत्री के रूप में उनकी तुलना देश के किसी मुख्यमंत्री से नहीं हो सकती है। अब यही बात बिहार के साथ भी होनी चाहिए। अब ऐसा बिहार बनाने की जरूरत है, जिसकी राजनीति ही नहीं, बल्कि जिसका विकास भी सभी के आकर्षण का केंद्र बन जाए।

हिन्दुस्तान | 75 साल पहले
21 नवम्बर, 1950

नेपाल का घटना चक्र

नेपाल के महाराजाधिराज त्रिभुवन वीर विक्रमदेव ने नाटकीय संयोगों में भारतीय दूतावास में शरण ली थी। अब वह सपरिवार भारत की राजधानी नई दिल्ली में आ गये हैं और जब तक नेपाल की मौजूदा स्थिति में कोई बड़ा परिवर्तन नहीं हो जाता, वह वापस लौटकर नेपाल नहीं जा सकते। नेपाल की राणाशाही ने महाराजाधिराज, उनके तीनों पुत्रों और एक पौत्र- इस प्रकार पांच व्यक्तियों को, जो नेपाल की गद्दी पर बैठने के हकदार हो सकते हैं, इस अधिकार से वंचित कर दिया है और महाराजाधिराज के एक अल्प-वयस्क तीन वर्षीय पौत्र को, जिन्हें संयोगवश महाराजाधिराज अपने साथ नहीं ला पाये, नेपाल का राजा घोषित कर दिया है।

नेपाल की यह क्रान्ति राजमहल तक सीमित नहीं रही। नेपाल के महाराजाधिराज के नेपाल छोड़ने के साथ ही नेपाल में विद्रोह की आग भड़क उठी। ऐसा प्रतीत होता है कि नेपाल के मध्ययुगीन निरंकुश शासन के विरुद्ध भीतर ही भीतर काफी असन्तोष फैला हुआ था। इस असन्तोष को फट पड़ने के लिए अवसर की तलाश थी और नेपाल नरेश और प्रधानमंत्री की इस टक्कर ने यह अवसर सुलभ कर दिया।

नेपाल के इस विद्रोह में कई तत्व शामिल हो गये हैं। इसमें राणा वंश के वे व्यक्ति भी शामिल हैं, जिन्हें सत्ताधारी राणाओं का कोपभाजन बनकर नेपाल छोड़ना पड़ा है। नेपाल के राजा को वैधानिक शासक मानते हुए नेपाल में लोकतंत्री शासन प्रणाली की स्थापना चाहने वाले भी इसमें शामिल हैं। आजाद हिन्द फौज में रहे हुए लोग भी इसमें हिस्सा ले रहे हैं। साम्यवादी भी नेपाल में अपनी कुछ न कुछ खिचड़ी पका रहे हैं। इस विद्रोह का नेतृत्व मुख्यतः नेपाली कांग्रेस कर रही है।

नेपाल का यह विद्रोह आकस्मिक रूप में हुआ। नेपाल की राणाशाही ने शायद यह स्वप्न में भी कल्पना नहीं की होगी कि स्थिति इतनी गम्भीर हो जायेगी। उसका आतंक जबर्दस्त था। जब सामान्य राजनीतिक प्रवृत्ति भी नेपाल में नहीं हो सकती थी, तो सशस्त्र विद्रोह की कैसे कोई कल्पना कर सकता था? इस आकस्मिकता का लाभ विद्रोहियों को मिला। विद्रोह के प्रारंभिक दिनों में उन्होंने नेपाल के अनेक स्थानों पर कब्जा कर लिया।

आतंक पर अमेरिका जैसी सख्ती कीजिए

आर के राघवन | पूर्व निदेशक, सीबीआई

कड़े कानून और सख्त पाबंदी जैसे उपायों से समझौता नहीं किया जा सकता, भले ही लोगों को कितनी भी परेशानी क्यों न हो। निगरानी और जांच को बढ़ाने की जरूरत है।

दिल्ली में लाल किले के पास हुए कार विस्फोट ने पूरे देश को झकझोर दिया था और सरकार द्वारा इसे आतंकी घटना बताए जाने के बाद यह बेहद संवेदनशील मुद्दा बन गया हैं। ऐसी घटनाओं के बाद विभिन्न पक्षों द्वारा उल-जुलूल बातें फैलाई जाने लगती हैं। लेकिन इस बार मीडिया ने जिस तरह से निष्पक्ष होकर तथ्यों पर आधारित कवरेज की, इसके लिए उसकी सराहना की जानी चाहिए। यही सबसे अच्छा तरीका है, जिससे हम आतंक के खिलाफ जनमत बना सकते हैं और आतंकवाद विरोधी जंग में अपनी सुरक्षा एजेंसियों को समर्थन देने के लिए पूरे समाज को प्रेरित कर सकते हैं।

कार धमाके की पूरी योजना के साथ आत्मघाती उमर उन-नबी के वीडियो के सार्वजनिक होने के बाद अनेक लोगों के मन में यह सवाल उठ रहा है कि प्रतिष्ठित पेशेवरों (डॉक्टरों) का यह समूह इतना कट्टरपंथी बन गया था कि आतंकी हमले को अंजाम देने तक गिर गया? इस मामले में अब तक हुए खुलासे व पकड़े गए संदिग्धों की पृष्ठभूमि यह साफ बताती है कि जब धार्मिक कट्टरता और नफरत की बात आती है, तब कुछ और मायने नहीं रखता। साजिश करने वालों ने अपनी योजना को कैसे अंजाम दिया, या कम से कम उसका हिस्सा बने, इसकी एक अलग कहानी है। सबसे खास बात यह है कि देश भर में फैली हमारी सुरक्षा एजेंसियों की नजर में ये नहीं आ पाए।

कुछ लोग पूछ रहे हैं कि सुरक्षा की दृष्टि से कोई चूक तो नहीं रह गई थी? हमें समझना चाहिए कि इतने बड़े देश में पुलिस-तंत्र की चुनौतियां कितनी गंभीर किस्म की हैं। साथ ही दिल्ली जैसी मिली-जुली सामाजिक संरचना वाली राष्ट्रीय राजधानी में लोगों के आने-जाने पर नजर रखना लगभग नामुमकिन है। ऐसे में, कानून लागू करने वाली एजेंसियों की आलोचना करना गलत है, बल्कि उन्होंने इतनी जल्दी पूरी साजिश को बेनकाब करने का सराहनीय काम किया है। सुरक्षा-तंत्र की तारीफ होनी चाहिए कि उसने घटना में शामिल लोगों और जिम्मेदार 'टेरर मॉड्यूल' के बीच संबंधों का पता लगा लिया। निस्संदेह, सुरक्षा एजेंसियों द्वारा की गई गहन जांच और उनके अत्याधुनिक उपकरणों ने एजेंसियों को तार जोड़ने में बहुत मदद की है। पहले पुलिस-जांच में टेक्नोलॉजी को शामिल करने में बड़ी हिचकिचाहट होती थी। खासकर, इसलिए कि एजेंसियों को डर लगता था कि वे इसका सही-सही इस्तेमाल कर भी पाएंगी या नहीं और इसके लिए कितनी ट्रेनिंग की जरूरत होगी। मगर अगले दशकों में टेक्नोलॉजी पुलिस जांच में निर्णायक बनने जा रही है।

दिल्ली विस्फोट की वारदात बताती है कि कट्टर आतंकवादी, खासकर पाकिस्तान से खुराक लेने वाले आतंकी भारत के लिए परेशानी बने रहेंगे। यह सोचना बहुत मुश्किल है कि वह वक्त कब आएगा, जब आतंकवादियों की भर्ती बंद हो जाएगी या बिना सोचे-समझे हिंसा करना बेकार हो जाएगा। इसलिए निरंतर सतर्कता की दरकार है।

हार्वर्ड विश्वविद्यालय में राजनीति शास्त्र के प्रोफेसर और अमेरिकी राष्ट्रपति जिमी कार्टर के कार्यकाल में विशेष अधिकारी रहे सैमुअल हंटिंगटन ने अपने लेख, 'द क्लैश ऑफ सिविलाइजेशन्स (सभ्यताओं के बीच संघर्ष)' में आगाह किया था कि धार्मिक कट्टरपंथ किस तरह लगातार टकरावों को बढ़ावा दे रहा है। इसका मतलब है कि कड़े कानून लागू करने और सख्त पाबंदी लगाने जैसे उपायों से समझौता नहीं किया जा सकता, भले ही देश के लोगों को इससे कितनी भी परेशानी और उलझन हो। पहलगाम और अब लाल किले पर हुए हमलों के संदर्भ में लोगों और गाड़ियों की आवाजाही पर पैनी नजर रखने की जरूरत है।

अमेरिका में 11 सितंबर के आतंकी हमले के बाद दुनिया ने देखा कि मॉल, एयरपोर्ट और शहरों की हर उस जगह की सूची तैयार की गई, जहां ऐसी वारदात होने की आशंका है और फिर वहां कड़ी निगरानी की व्यवस्था लागू की गई है। इस व्यवस्था के खिलाफ लोगों में भारी गुस्सा देखा गया। उनकी नाराजगी न सिर्फ उन नियमों को लेकर थी, जिनके कारण सार्वजनिक जगहों और दफ्तरों में आने-जाने में असुविधा पैदा हो रही थी, बल्कि नस्लीय व धार्मिक भेदभाव को लेकर भी थी। लेकिन उस सख्ती के कारण दुनिया भर में सख्त सुरक्षा दिशा-निर्देशों को मानने का रास्ता बन गया। इसलिए इस तरह के नियमों में किसी किस्म की ढील देना गलत होगा।

सुरक्षा नियमों को लेकर मेरा दृष्टिकोण 21 मई, 1991 को ही बिल्कुल बदल गया था, जब तमिलनाडु के श्रीपेरुंबदुर में पूर्व प्रधानमंत्री राजीव गांधी की हत्या कर दी गई थी। उनकी हत्या की जगह से कुछ ही फीट की दूरी पर मैं सुरक्षा तंत्र के हिस्से के तौर पर तैनात था। वह घटना निश्चित रूप से पुलिस और खुफिया मशीनरी की नाकामी थी। मुझे उस शाम एहसास हुआ कि दुश्मनों से बचने के लिए सिर्फ बड़ी संख्या में सुरक्षा बल का होना काफी नहीं है। इसमें सटीक खुफिया सूचनाएं भी बहुत जरूरी हैं। इससे पहले कि आतंकी अपनी तबाही की योजना को अंजाम दे सकें, हमें उनमें से हर एक की पहचान करके उन्हें पकड़ना होगा। लाल किले विस्फोट के मामले में हमारे सामने चुनौती एक चलती हुई गाड़ी की थी। वह एक ऐसा परिदृश्य था, जो पारंपरिक सुरक्षा व्यवस्थाओं से बिल्कुल अलग और नए तरह का था। ऐसे मामलों में, जब तक अपराधी की खास पहचान पहले से न मालूम हो, तो अचूक सुरक्षा रणनीति बनाना काफी कठिन हो जाता है, लेकिन हमें इस कठिनाई को रुकावट नहीं बनने देनी चाहिए।

श्रीपेरुंबुदुर और दिल्ली विस्फोट के अलावा एक और घटना जो मेरे दिमाग में गहरे पैठी है, वह है 11 सितंबर, 2001 को न्यूयॉर्क वर्ल्ड ट्रेड सेंटर पर हुए हमले। उस समय मैं हॉर्वर्ड (बोस्टन) में ही विजिटिंग फेलो के तौर पर था। अल कायदा ने नए तरीके से ट्विन टॉवर्स को गिराने में कामयाबी हासिल की। हममें से कई लोग टीवी सेट के सामने जमा हो गए थे और अमेरिका के सदमे, डर और दुख में शामिल हो गए थे। मेरे लिए इसका असर बहुत करीबी और निजी स्तर का था और वह घटना कड़ी सुरक्षा की जरूरत रेखांकित कर रहा था। उस दिन से लेकर अब तक अमेरिका ने आतंकियों के मनसूबों को सफल नहीं होने दिया, जिनका मुख्य मकसद आतंक फैलाना होता है।

हंटिंगटन का यह सामाजिक सिद्धांत कि दुनिया बहुत ज्यादा बंटी हुई है, आज भी प्रासंगिक है और इससे निपटने के लिए सख्त सुरक्षा तंत्र की आवश्यकता है।

(ये लेखक के अपने विचार हैं)

अब हमारी जेब पर भी डाका डालने लगी जहरीली हवा

संजीव बजाज | उद्यमी

पिछले मंगलवार की सुबह मेरे दोस्त का गुरुग्राम से फोन आया। चिंतित आवाज में उसने कहा, 'बेटी को फिर से अस्पताल ले जा रहा हूं। इस महीने यह तीसरी बार है।' उसकी सात साल की बेटी रात भर खांसती रही। राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र की जहरीली हवा से सांस के 'इन्फेक्शन' का मामला था। मैंने फौरन अपना फोन चेक किया, तो एयर क्वालिटी इंडेक्स (एक्यूआई) 503 दिखा। एक्यूआई का यह स्तर अब आपात स्थिति के बजाय सालाना 'हेडलाइन' जैसा लगता है।

अक्सर जब हम वायु प्रदूषण की बात करते हैं, तो सिर्फ सेहत के पहलू पर ध्यान देते हैं, लेकिन एक और संकट चुपचाप सामने आ रहा है और यह संकट भारतीय घरों की वित्तीय मजबूती में सेंध मार रहा है।

गौर कीजिए, अकेले सितंबर महीने में देश के अस्पतालों में भर्ती होने वाले मरीजों के बीमा दावों में लगभग नौ प्रतिशत वायु प्रदूषण संबंधी रोगों से जुड़े थे। इनमें दस साल से कम उम्र के बच्चों का हिस्सा 43 प्रतिशत था। सांस संबंधी रोगों के इलाज का खर्च साल-दर-साल 11 प्रतिशत बढ़ा है, जबकि दिल से जुड़ी बीमारियों के मरीजों को अस्पताल में भर्ती करने की दर में छह फीसदी की बढ़ोतरी हुई। अगर बीमा दावों का औसत निकालें, तो लगभग 55,000 रुपये प्रति मरीज बैठता है, जो दिल्ली में कई मध्यवर्गीय परिवारों के लिए एक बड़ा बोझ है। जहां सालाना प्रतिव्यक्त आय लगभग 4.5 लाख रुपये बैठता है। जाहिर है, यह एक ऐसे शहर में सांस लेने की कीमत है, जिसकी आबोहवा जहरीली होती जा रही है। परिवार सिर्फ बीमारी से नहीं लड़ रहे; वे बढ़ती हेल्थकेयर महंगाई से भी जूझ रहे हैं।

दिल्ली के अनेक परिवारों को एयर प्यूरीफायर, एन95 मास्क और बार-बार डॉक्टर से दिखाने पर ज्यादा खर्च करना पड़ता है।

जैसे-जैसे सांस की बीमारियां बढ़ रही हैं, स्वास्थ्य बीमा कंपनियां चुपचाप 'रिस्क पूल' का नए सिरे से नियमन कर रही हैं और ऐसे कवरेज विकल्प बढ़ा रही हैं, जो बचाव और लंबे समय के स्वास्थ्य-प्रबंधन पर जोर देते हैं। ऐसी बीमा पॉलिसियों की डिमांड बढ़ रही है, जो भर्ती होने से आगे बढ़कर ओपीडी में दिखाने, नियमित चेक-अप और देखभाल सपोर्ट को कवर करती हों। दूसरे शब्दों में, संरक्षण 'रिएक्टिव' से 'प्रोएक्टिव' हो रहा है। शहरी परिवारों के लिए, खासकर दिल्ली-एनसीआर में एक अच्छा स्वास्थ्य बीमा एयर प्यूरीफायर जितना ही जरूरी हो गया है।

खराब हवा का असर हॉस्पिटल बिल से कहीं ज्यादा होता है। जैसे, दीपावली के बाद 'हेल्थ क्लेम' आमतौर पर करीब 14 प्रतिशत बढ़ जाते हैं। राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र के अनेक परिवारों को प्यूरीफायर, एन95 मास्क और बार-बार डॉक्टर से दिखाने पर ज्यादा खर्च करना पड़ता है। ये ऐसे खर्च हैं, जो एक दशक पहले घर के बजट का हिस्सा नहीं थे। सबसे बड़ी बात, ये विलासिता के नहीं; जान बचाने के खर्च हैं। ऐसे में, वित्तीय सलाहकार, बीमा कंपनियां परिवारों को न सिर्फ मुश्किलों का सामना करने में मदद कर सकती हैं, बल्कि भविष्य के लिए तैयार रहने का एक फ्रेमवर्क भी सुझा सकती हैं।

यह गौर करने की बात है कि प्रदूषण से जुड़े बीमा दावे 2022 में 6.4 प्रतिशत से बढ़कर 2025 में नौ फीसदी हो गए हैं। इस ट्रेंड को नकारा नहीं जा सकता। अगर हम अभी कदम नहीं उठाते, तो एक ऐसी अर्थव्यवस्था में जोखिम ही उठा रहे होंगे, जिसमें हर सांस की कीमत होने वाली है। मगर उम्मीद है। वित्तीय संस्थान स्वच्छ ऊर्जा, शहरी हरियाली और टिकाऊ आवास में पूंजी लगा सकते हैं। स्वास्थ्य बीमा सिर्फ रोगों के इलाज नहीं, बल्कि उनकी रोकथाम का भी सहारा बन सकता है। और एक इंसान के तौर पर हम वायु गुणवत्ता को अपने जीने, निवेश करने और बीमा भुगतान का एक फैक्टर बना सकते हैं।

जब मेरे दोस्त ने कहा कि मैं अब इस शहर से निकलने के बारे में सोच रहा हूं, तो उसने वही कहा, जो अनेक परिवार शिद्दत से महसूस करते हैं। लेकिन शहर बदलना अकेला जवाब नहीं होना चाहिए। हमें मिलकर बदलाव की जरूरत है, क्योंकि जब एक्यूआई 400 के पार जाता है, तो सिर्फ फेफड़ों को ही नुकसान नहीं होता; बल्कि घरों की 'बैलेंस शीट' को भी नुकसान होता है। और स्मॉग के उलट माली नुकसान अपने आप ठीक नहीं होता। इसके लिए जागरूकता, जरूरी कदम और इनोवेशन की जरूरत होती है।

(ये लेखक के अपने विचार हैं)

मनसा वाचा कर्मणा

दर्शक नहीं, खिलाड़ी बनिए

हम सब जानते हैं कि आज व्यक्तिगत व सामूहिक, दोनों ही स्तरों पर अशांति, अव्यवस्था, और क्लेश का बोलबाला है और इसके एहसास के लिए शब्दाडंबर की जरूरत नहीं है। ऐसा भारत में ही नहीं, बल्कि सारे विश्व में है।... यह एक असाधारण दारुण दुख है, और वह व्यक्तिगत ही नहीं, सामूहिक भी है। यह विनाश विश्वव्यापी है और इसे किसी भौगोलिक क्षेत्र में सीमित करना मूर्खता है, क्योंकि ऐसा करने से हम इस विश्वव्यापी व व्यक्तिगत व्यथा के पूरे अर्थ को समझने से वंचित रह जाएंगे। इन हालातों से हम कैसे निपटेंगे?

दुख तो है, राजनीतिक भी, सामाजिक भी और धार्मिक भी। हमारा समस्त मनोवैज्ञानिक व्यक्तित्व भ्रांत है और सभी नेताओं ने, चाहे वे राजनीतिक हों या धार्मिक, हमें दिग्भ्रमित किया है। भगवद्गीता या बाइबिल अथवा राजनीति या मनोविज्ञान पर लिखे गए किसी भी आधुनिकतम ग्रंथ का अध्ययन करने पर आप देखेंगे कि उन्होंने सच्चाई के जज्बे को खो दिया है; वे कोरे शब्द बनकर रह गए हैं। आप स्वयं, जो उन शब्दों को निरंतर दोहराते रहते हैं, भ्रांत और अनिश्चित हैं और शब्दों को दोहरा देने भर से तो कुछ भी व्यक्त नहीं होता।...

जब आप बाइबिल या भगवद्गीता या मार्क्स को उद्धृत करते हैं, तब चूंकि आप स्वयं अनिश्चित और भ्रांत हैं, आपका उद्धरण, आपकी यह पुनरावृत्ति एक झूठी चीज बनकर रह जाती है, क्योंकि यहां जो लिखा है, वह केवल प्रचार भर रह जाता है और प्रचार सत्य नहीं होता। आप किसी शब्द-प्रामाण्य के पीछे अपनी भ्रांति को छिपाते हैं। परंतु हम इस भ्रांति को समझने का प्रयत्न कर रहे हैं, न कि उसको उद्धरणों से ढकने का। तो इस बारे में आप क्या सोचते है? इस असाधारण अस्त-व्यस्तता व भ्रांति के प्रति आपकी क्या प्रतिकिया है?

हम दर्शक ही बनने के आदी हैं, खेल में शामिल नहीं होते। हम पुस्तकें पढ़ते हैं, पर लिखते कभी नहीं। यह हमारी परंपरा, राष्ट्रीय व सामान्य आदत हो गई है कि हम दर्शक बने रहें, फुटबॉल के खेल को, राजनेताओं को देखते-सुनते रहें। हम केवल बाहरी व्यक्ति हैं, दर्शक मात्र, हमने अपनी सर्जनात्मक क्षमता खो दी है। बस दूर खड़े रहकर ही हम सहभागी बन जाना चाहते हैं।

हमारी यह राष्ट्रीय आदत हो गई है कि हम दर्शक बने रहें, फुटबॉल देखते रहें, राजनेताओं को देखते-सुनते रहें। हम बाहरी व्यक्ति हैं, यानी दर्शक मात्र। हमने अपनी सर्जनात्मक क्षमता खो दी है।

इसलिए कृपया यह जानने की चेष्टा करें कि दुख, वेदना के बारे में आपकी क्या प्रतिक्रिया है; इस विषय में कोई अन्य क्या कहता है, वह नहीं, बल्कि आप स्वयं कैसे प्रतिक्रिया करते हैं, इसे जानने की चेष्टा करें। यदि आप इस दुख से, इस अशांति से लाभान्वित हो रहे हैं, यदि आप उससे आर्थिक, सामाजिक या मनोवैज्ञानिक लाभ उठा रहे हैं, तो उस दुख के प्रति आपकी प्रतिक्रिया उपेक्षा की हो सकती है। उस हालत में अशांति बनी भी रहे, तो आप उसकी चिंता नहीं करते।

जे कृष्णमूर्ति

एंटोनियो गुटेरस | संयुक्त राष्ट्र महासचिव

लंबे समय से प्रकृति के रखवाले होने के नाते आदिवासी लोग हमें जलवायु कार्रवाई को लेकर निर्णायक रास्ता दिखाने को मौजूद हैं। कॉप-30 में दुनिया भर के आदिवासी समुदायों के प्रतिनिधियों की भागीदारी के लिए उन्हें धन्यवाद।

अनुलोम-विलोम
विश्व टीवी दिवस

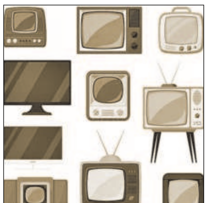

सुखद बदलाव लेकर आया टेलीविजन

टेलीविजन का आविष्कार 1925 में हुआ। इसके बाद 1926 में लंदन में पहली बार इसका प्रसारण हुआ। तब से समाज में टेलीविजन की भूमिका लगातार बढ़ती ही गई है। भारत में, टेलीविजन की शुरुआत 1959 में दिल्ली में प्रायोगिक प्रसारण के माध्यम से हुई थी और इसे यूनेस्को जैसे संगठनों से सहायता मिली थी। कालांतर में इसने ग्रामीण क्षेत्रों में सूचना के प्रसार और शिक्षा, कृषि एवं राष्ट्रीय एकीकरण जैसे उद्देश्यों को पूरा करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई और यह समाज में सुखद बदलाव लेकर आया।

आजकल तो यह बहुत काम की और जरूरी जानकारियां दे रहा है। टेलीविजन से बड़ी संख्या में दर्शकों का जुड़ना साफ बताता है कि यह यंत्र कितने काम का है और दर्शकों की जरूरतों को पूरा करने में कितना सक्षम है। भरोसेमंद जानकारी के लिए लोग न्यूज चैनलों का रुख कर रहे हैं। कई चैनल हमें दुनिया भर में मौजूदा हालात के बारे में लगातार अपडेट करते रहते हैं। कोरोना काल में तो यह लोगों को सुरक्षित रहने के तरीके बताने में अहम भूमिका निभा रहा था।

भारत में टेलीविजन की कमाई मुख्य रूप से विज्ञापनों से होती है। टीवी चैनल फिल्मों या लोकप्रिय शो के विज्ञापन ब्रेक से प्रति फिल्म लाखों से करोड़ों तक कमाते हैं, वहीं कलाकार अपनी फीस के आधार पर प्रति एपिसोड लाखों में कमाते हैं। टेलीविजन पर चलने वाले बड़े-बड़े शो, खेल प्रसारण या फिल्मों के दौरान 10 सेकंड के विज्ञापन की कमाई लाखों रुपये में होती है। भारत में एक फिल्म दिखाकर चैनल करोड़ों तक कमा सकते हैं। चुनाव परिणामों के विशेष कार्यक्रमों के दौरान भी समाचार चैनल करोड़ों रुपये की कमाई करते हैं। कहा जाता है, मशहूर अभिनेता सलमान खान *बिग बॉस* जैसे कार्यक्रम से 250 करोड़ रुपये की फीस वसूलते हैं। इसी तरह, कपिल शर्मा को अपने शो से करोड़ों रुपये की कमाई होती है।

टेलीविजन लोगों का नजरिया बदलने और समाज-संस्कृति के प्रति सजग करने में अहम रोल निभा रहा है। जरूरत है कि समाज में हम उसे सकारात्मक रूप से लें। हां, इतना है कि टेलीविजन के माध्यम से जो संदेश हमारे पास आते हैं, उनको हमें सोच-समझकर अपनाना चाहिए। इस माध्यम पर हिंसा, गाली-गलौज वाली भाषा का इस्तेमाल बंद होना चाहिए। समग्रता में देखें, तो टेलीविजन का हमारे जीवन पर बहुत सकारात्मक असर पड़ा है। अपने समाचारों और संदेशों के जरिये यह लोगों की सोच को आगे बढ़ाता है। हम टेलीविजन की ताकत और समाज में जागरूकता फैलाने में इसकी भूमिका को नकार नहीं सकते।

नीती शाण्डिल्या, टेकनीशियन

टीवी ने समाज का बड़ा नुकसान किया

टेलीविजन के आविष्कार ने भारतीय समाज को फायदा पहुंचाने के बजाय उसका नुकसान ही अधिक किया है। इसे जानने के लिए किसी बड़े शोध और दार्शनिक विमर्श की जरूरत नहीं है, आप अपने जीवन, घर-परिवार और बच्चों की जिंदगी पर गहराई से नजर डाल देखिए। जब हमारी जिंदगी में इस यंत्र की घुसपैठ नहीं हुई थी, तब हमारे पास शारीरिक गतिविधियों के लिए पर्याप्त समय था। लोग अपने मवेशियों के साथ वक्त गुजारा करते थे, दोस्तों के साथ कहकहे लगाते थे। महिलाएं अपनी रुचि की कलाओं को वक्त दिया करती थीं और बच्चे मैदान में खेल खेला करते थे, जिससे उनका शरीर मजबूत बनता था। इन सबको इस यंत्र ने ग्रहण लगा दिया।

आप आंखों के किसी अस्पताल के आगे खड़े होकर देख लीजिए कि कितने छोटे-छोटे बच्चों की आंखों पर चश्मे चढ़े हैं? ज्यादातर संपन्न बच्चे अब पार्कों और मैदानों में नहीं खेलने जाते, क्योंकि टीवी और दूसरे गैजेट्स ने उन्हें इनडोर गेम्स में उलझा दिया है। उन्हें सुस्त, आलसी और मोटापा का शिकार बनाने में टेलीविजन का बहुत बड़ा हाथ है। उनकी एकाग्रता बहुत प्रभावित हुई है और वे पढ़ने में कमजोर हुए हैं। यही नहीं, तमाम अध्ययन यह साबित कर चुके हैं कि लोगों के मानसिक स्वास्थ्य पर टीवी ने काफी बुरा असर डाला है। देर रात तक धारावाहिक देखने की लत ने लोगों से नींद छीन ली है। पहले गांव-देहात में लोग 9-10 बजे तक सो जाया करते थे। मगर अब गांवों में भी 11-11.30 तक वे सोते हैं। सेहत के लिए नींद कितनी जरूरी है, यह न्यूरो-विज्ञानी से पूछिए। ऐसी स्थिति में मनोरोगियों की संख्या बढ़ रही है।

सामाजिकता के अलावा पारिवारिक जिंदगी पर भी इसका दुष्प्रभाव कम नहीं पड़ा। इस माध्यम से परोसी जाने वाली सामग्रियों ने घर-घर में नकारात्मक अपेक्षाओं को हवा दी। नतीजतन, पिछले चार-पांच दशकों में संयुक्त परिवारों के टूटने और तलाक की दर तेजी से बढ़ी है। निस्संदेह, टीवी ने कई लोगों को राहत भी पहुंचाई। कामकाजी दंपति वाले परिवारों के बुजुर्ग एकाकीपन के शिकार होने से बचे, मगर इसका दूसरा पहलू यह भी है कि उन्हें टीवी के हवाले छोड़ दिया गया। पोते-नातिन ही नहीं, बेटे-बेटी भी उनसे दूर होते चले गए। परिवार जिस भावनात्मक डोर से बंधे थे, वह लगातार कमजोर पड़ती गई है। विडंबना यह है कि टेलीविजन ने जिस जिंदगी की नींव रखी, मोबाइल ने उसे और विस्तार दे दिया। अब नई नस्ल के पास इतना धैर्य नहीं है कि वह बैठकर, आपका हाथ थामकर इत्मीनान से आपकी दिलजोई करे। इस यंत्र ने समूची इंसानियत को अपने जैसा यंत्र बनाने का काम किया है।

राखी सिंह, टिप्पणीकार

https://t.me/AllNewsPapersPaid1

दैनिक जागरण
दुख में भी उत्थान की शक्ति निहित होती है

संवैधानिक सीमाएं

यह अच्छा हुआ कि सुप्रीम कोर्ट की संविधान पीठ ने विधेयकों को मंजूरी देने के मामले में राज्यपालों को समय सीमा में बांधने की आवश्यकता नहीं समझी। उसे इस निष्कर्ष पर इसलिए पहुंचना पड़ा, क्योंकि कुछ समय पहले तमिलनाडु के मामले में विचार करने वाली सुप्रीम कोर्ट की दो सदस्यीय पीठ इस फैसले पर पहुंच गई थी कि राज्यपालों को एक तय समय में विधेयकों पर निर्णय लेना होगा। उसने राज्यपालों के साथ राष्ट्रपति को भी समय सीमा में बांध दिया था और तमिलनाडु के लंबित विधेयकों को स्वीकृत भी करार दिया था। चूंकि यह सुप्रीम कोर्ट की ओर से अपनी न्यायिक सीमा का अतिक्रमण करने और संवैधानिक व्यवस्था की अनदेखी करने वाला फैसला था, इसलिए उस पर सवाल उठे और राष्ट्रपति को हस्तक्षेप भी करना पड़ा। उनकी ही ओर से पूछे गए सवालों का जवाब देने के क्रम में संविधान पीठ ने यह पाया कि दो सदस्यीय पीठ का यह कहना असंवैधानिक था कि यदि विधेयकों को तय सीमा में मंजूरी न मिले तो उन्हें स्वतः स्वीकृत माना जाए। निःसंदेह संविधान पीठ के इस फैसले पर भी बहस होगी, लेकिन इसी के साथ इस पर भी ध्यान दिया जाए कि सुप्रीम कोर्ट से ऐसे फैसले आना शुभ संकेत नहीं, जो संविधान की भावना के खिलाफ जाते हों और जिस पर राष्ट्रपति को प्रश्न पूछने पड़ें।

चूंकि सुप्रीम कोर्ट की संविधान पीठ ने यह कहा कि राज्यपाल या तो विधेयकों को टिप्पणियों के साथ सदन को वापस भेजें या फिर उसे राष्ट्रपति के विचार के लिए सुरक्षित रख लें, इसलिए आसार यही हैं कि आगे भी विधेयक लंबित रहने की शिकायत आ सकती है। विधेयकों के लंबित रहने की अवस्था में सुप्रीम कोर्ट ने सीमित दखल देने की बात अवश्य कही है, पर वह राज्यपालों को फैसला लेने को बाध्य नहीं कर सकता। इसके चलते वैसी समस्या फिर देखने को मिल सकती है, जैसी तमिलनाडु में उभरी। इस समस्या का समाधान निकाला जाना चाहिए, लेकिन खुद विधायिका और कार्यपालिका की ओर से। अच्छा हो कि इस पर राजनीतिक दलों के बीच कोई आम सहमति कायम हो, ताकि विधायिका-कार्यपालिका के वे मामले न्यायपालिका तक न पहुंचें, जिन पर उसे निर्णय लेने का अधिकार नहीं। कार्यपालिका, विधायिका और न्यायपालिका, तीनों को अपनी संवैधानिक सीमाओं का ध्यान रखना चाहिए। जब ऐसा नहीं होता तभी समस्याएं उभरती हैं। यह सही है कि सुप्रीम कोर्ट को संविधान की व्याख्या करने का अधिकार है, लेकिन इसके नाम पर संविधान की अनदेखी नहीं होनी चाहिए। तमिलनाडु मामले में यह कहा जाना ठीक नहीं था कि यदि राज्यपाल अपना काम समय पर नहीं करते तो हम चुपचाप नहीं बैठ सकते, क्योंकि इस सवाल का कोई जवाब नहीं कि यदि न्यायपालिका समय पर फैसले न ले तो क्या किया जा सकता है?

मानकों का पालन

यह किसी से छिपा नहीं है कि मध्य हिमालयी राज्य उत्तराखंड पर्यावरणीय दृष्टि से संवेदनशील है। ऐसे में आर्थिकी और पारिस्थितिकी में समन्वय बेहद आवश्यक है और सरकार भी इस दिशा में कदम बढ़ा रही है। इसी कड़ी में राज्य में खड़िया खदान एवं नदियों में रेता, बजरी, बोल्डर उपखनिजों के वैज्ञानिक ढंग से खनन पर जोर दिया जा रहा है। इससे सरकारी और निजी सभी क्षेत्रों को निर्माण कार्यों के लिए उचित दर पर सामग्री की उपलब्धता सुनिश्चित हो सकेगी, वहीं राजस्व में वृद्धि के साथ ही पर्यावरण का संरक्षण भी हो सकेगा। असल में जिस तरह की परिस्थितियां हैं, उनमें तमाम क्षेत्रों में खनन न होने से नदियों का तल काफी ऊंचा उठ गया है। रही-सही कसर पूरी कर दी है अवैध खनन ने। इसके चलते नदियों में बाढ़ की स्थिति में भू-कटाव के साथ ही अन्य दिक्कतें भी आ रही हैं। वैज्ञानिक ढंग से खनन होने पर नदियों का तल नियंत्रित रहेगा और अवैध खनन पर भी अंकुश लग सकेगा। इसी के दृष्टिगत सरकार ने राज्य में खनन के लिए पारदर्शी और व्यवसाय हितैषी नीतियां लागू की हैं। बेहतर प्रबंधन का ही परिणाम है कि खनन से राज्य को एक हजार करोड़ रुपये से ज्यादा का राजस्व मिल रहा है। सुधारात्मक उपायों को केंद्र सरकार ने भी सराहा है। खनन क्षेत्रों में सुधार कार्यों में तेजी लाने के लिए केंद्र से प्रोत्साहन राशि मिलना इसका उदाहरण है। जाहिर है कि इससे राज्य सरकार के प्रयासों को और गति मिलेगी। उम्मीद की जानी चाहिए कि खनन क्षेत्र में सुधार को और अधिक गंभीरता से कदम उठाए जाएंगे और राज्य इससे मजबूत एवं विश्वसनीय पहचान बनाएगा।

पर्यावरणीय दृष्टि से संवेदनशील उत्तराखंड में वैज्ञानिक ढंग से खनन समय की आवश्यकता है

आतंक ने पेश की नई चुनौती

हर्ष वी. पंत

दिल्ली आतंकी हमला यही रेखांकित कर रहा है कि आतंक के खिलाफ मुहिम में तनिक भी ढील नहीं दी जा सकती

भारत के प्रधानमंत्री प्रत्येक स्वतंत्रता दिवस पर लाल किले की जिस प्राचीर से राष्ट्र को संबोधित करते हैं, उसके निकट एक भयावह आतंकी हमले ने कई सवाल खड़े किए हैं। आतंक के प्रति जीरो टालरेंस की सरकार की नीति और सुरक्षा प्रतिष्ठान की सक्रियता के चलते पिछले कुछ वर्षों से देश आतंकी हमलों से एक बड़ी हद तक सुरक्षित रहा है, लेकिन इस हमले ने सुरक्षा को लेकर बने भरोसे में सेंध लगाने का काम किया है। यह भी कहा जा रहा है कि सुरक्षा एजेंसियों ने एक बड़ी साजिश को बेनकाब कर दिया और दिल्ली में हुआ धमाका उसी हताशा का परिणाम था। इससे कुछ समय पहले ही सुरक्षा एजेंसियों ने फरीदाबाद में डाक्टरों के एक आतंकी माड्यूल की धरपकड़ के साथ भारी मात्रा में विस्फोटक भी जब्त किया था। माना जा रहा है कि इस एकाएक कार्रवाई से सकते में आए आतंकियों ने दिल्ली में बिना किसी योजना के धमाका कर अपनी भड़ास निकाली। भले ही इसे एकाएक किया गया आतंकी हमला कहा जा रहा हो, लेकिन इसमें निहित कुछ पहलुओं को कतई अनदेखा नहीं किया जा सकता। राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र में कई जगह बेरोकटोक आवाजाही के बाद आतंकियों ने धमाके के लिए दिल्ली के एक प्रमुख स्थान को चुना। यह इलाका न केवल ऐतिहासिक रूप से महत्व रखता है, बल्कि वाणिज्यिक-सांस्कृतिक एवं पर्यटन गतिविधियों का भी प्रमुख केंद्र है। धमाके के लिए जो समय चुना गया, वह अपेक्षाकृत व्यस्तता वाला होता है। जाहिर है आतंकी ज्यादा से ज्यादा नुकसान पहुंचाना चाहते थे। इससे आतंक से सुरक्षा को लेकर बना आवरण और भरोसे के भाव पर निश्चित ही चोट पहुंची है।

जांच एजेंसियां हरसंभव पहलू से जांच में जुटी हैं, लेकिन यह मानने के अच्छे-भले कारण हैं कि इसके पीछे पाकिस्तान ही है। पाकिस्तान आतंकवाद को अपनी राज्य-नीति के रूप में इस्तेमाल करता है, लेकिन ऐसा प्रतीत होता है कि आपरेशन सिंदूर के बाद भारत की कार्रवाई से सहमे पाकिस्तान ने अपनी रणनीति कुछ बदली है। यही कारण है कि शुरुआती जांच के दौरान इस हमले के तार बांग्लादेश से लेकर तुर्किये तक जुड़ते दिखे। वहीं गुलाम जम्मू-कश्मीर के पूर्व प्रधानमंत्री की स्वीकारोक्ति भी पाकिस्तान की बदनीयती की पुष्टि करने वाली रही है। हमले के दिन सुरक्षा एजेंसियां इसे लेकर आश्वस्त नहीं थीं कि यह आतंकी हमला है या नहीं, मगर जैसे-जैसे जांच प्रक्रिया आगे बढ़ती गई तो इसे लेकर संदेह के बादल भी छंटते गए।

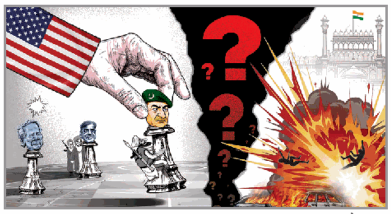

अवधेश राजपूत

दिल्ली में आतंकी हमले के कुछ समय बाद ही पाकिस्तान की राजधानी इस्लामाबाद में भी धमाका हुआ। यह धमाका एक न्यायिक परिसर में हुआ। यह क्षेत्र गणमान्य लोगों की उपस्थिति और आवाजाही वाला है। इस हमले की जिम्मेदारी तहरीक-ए-तालिबान यानी टीटीपी से जुड़े रहे जमात-उल-अहरार ने ली है। पाकिस्तान ने आरोप लगाया कि भारत की शह पर यह आतंकी हमला हुआ है। इसके पीछे पाकिस्तान की मंशा काउंटर नैरेटिव तैयार करने की ही लगती है। उसका फार्मूला एकदम सीधा है कि इससे पहले दिल्ली हमले को लेकर पाकिस्तान पर सवाल उठें, वह इस्लामाबाद धमाके को लेकर भारत को निशाने पर ले। अफगानिस्तान में सत्तारूढ़ तालिबान के साथ भी पिछले कुछ समय से पाकिस्तान की पटरी बैठ नहीं रही तो वह एक तीर से दो शिकार करने की फिराक में है कि भारत की शह पर अफगानिस्तान उसके यहां अशांति फैलाने में लगा है। पूरी दुनिया में आतंक के सबसे बड़े निर्यातक के रूप में कुख्यात पाकिस्तान यही चाहता है कि आतंकवाद को लेकर दुनिया भारत पर भी संदेह की दृष्टि देखने लगे।

मौजूदा परिदृश्य में इस रुझान को भी अनदेखा नहीं किया जा सकता कि जब भी पाकिस्तान की पीठ पर अमेरिका का हाथ होता है तो वहां से आतंकी गतिविधियों को बढ़ावा मिलता है। दूसरे कार्यकाल में ट्रंप प्रशासन का पाकिस्तान के प्रति बदला हुआ रवैया इसका प्रमाण है। इसी वर्ष अप्रैल में हुआ पहलगाम आतंकी हमला इसका एक उदाहरण रहा। आपरेशन सिंदूर और फिर संघर्ष विराम एवं मध्यस्थता के मामले में राष्ट्रपति ट्रंप की जी-हुजूरी ने भी पाकिस्तान के लिए हालात अनुकूल बना दिए। जबकि ट्रंप के दावों को बार-बार खारिज कर अमेरिका के साथ भारत के संबंधों में कुछ खटास आ गई। अमेरिका के साथ व्यापार समझौते पर संशय में भी इसकी छाप दिखी। यह अच्छी बात है कि पिछले कुछ दिनों से भारत के प्रति राष्ट्रपति ट्रंप का भारत के प्रति दृष्टिकोण नरम हुआ है। व्यापार समझौते को लेकर भी उम्मीद बढ़ी है, जिसे अंतिम रूप देने के लिए भारत को अपने प्रयासों में तेजी लानी होगी। अमेरिका के साथ व्यापार समझौता पाकिस्तान के विरुद्ध भारत को एक रणनीतिक कवच प्रदान करेगा। तब पाकिस्तान के खिलाफ किसी संभावित कार्रवाई के मामले में भारत के समक्ष अमेरिकी दखल की आशंका कमजोर पड़ जाएगी। अन्यथा ट्रंप का रवैया परेशानी खड़ी करता रहेगा।

तमाम पहलुओं को देखते हुए दिल्ली आतंकी हमला यही रेखांकित करने वाला रहा कि आतंक के खिलाफ मुहिम में तनिक भी ढील नहीं दी जा सकती। कई जगहों को निशाने बनाने की तैयारी कर रहे आतंकियों के मंसूबों को नाकाम करने के लिए सुरक्षा एजेंसियां साधुवाद की पात्र हैं, पर लाल किले धमाके को लेकर जिम्मेदारी एवं जवाबदेही से भी उन्हें मुक्त नहीं किया जा सकता। अच्छी बात है कि प्रधानमंत्री मोदी से लेकर गृहमंत्री अमित शाह और रक्षा मंत्री राजनाथ सिंह ने शीर्ष स्तर से कड़े संदेश दिए हैं कि इसके दोषियों को बख्शा नहीं जाएगा और पाताल से भी खोजकर उन्हें सबक सिखाया जाएगा। यह भी सुनिश्चित करना होगा कि सुरक्षा प्रतिष्ठान एवं खुफिया एजेंसियों को अपना मोर्चा और दुरुस्त करना होगा। इसके साथ ही कूटनीतिक प्रयासों को भी गति देनी होगी ताकि पाकिस्तान समेत भारत विरोधी शक्तियों की वैश्विक स्तर पर पोल खोलना जारी रहे कि कैसे कुछ देश क्षेत्रीय एवं वैश्विक शांति के दुश्मन बने हुए हैं।

(लेखक आब्जर्वर रिसर्च फाउंडेशन में उपाध्यक्ष हैं)

response@jagran.com

पूरी की जाए सस्ते कर्ज की जरूरत

डा. जयंतीलाल भंडारी

ब्याज दरों में कटौती निवेशकों का भरोसा बढ़ाने एवं नवाचार, उत्पादन और बाजार विस्तार के लिए आधार तैयार करेगी

महंगाई में आई गिरावट ने सस्ते कर्ज की नई संभावनाओं को जन्म दिया है। राष्ट्रीय सांख्यिकी कार्यालय की हालिया रिपोर्ट के अनुसार बीते अक्टूबर में खुदरा महंगाई घटकर पिछले दस वर्षों के न्यूनतम स्तर 0.25 प्रतिशत पर आ गई, जबकि थोक महंगाई भी 27 महीने के निचले स्तर यानी शून्य से 1.21 प्रतिशत नीचे दर्ज की गई। यह गिरावट मुख्यतः सब्जियों, फलों, अंडों, फुटवियर, अनाज एवं उससे बने उत्पादों के साथ बिजली, परिवहन और संचार सेवाओं की कीमतों में कमी के कारण संभव हुई है। सितंबर से लागू जीएसटी दरों में कटौती का भी इसमें महत्वपूर्ण योगदान रहा है, जिससे खाद्य वस्तुओं के दाम सर्वत्र कम हुए हैं। क्रिसिल की रिपोर्ट के अनुसार, अक्टूबर में शाकाहारी थाली 17 प्रतिशत सस्ती होकर 27.8 रुपये की कीमत पर और मांसाहारी थाली 12 प्रतिशत सस्ती होकर 54.4 रुपये की दर पर उपलब्ध रही।

अनुमान है कि चालू वित्त वर्ष 2025-26 में औसत खुदरा महंगाई घटकर 2.5 प्रतिशत पर स्थिर रह सकती है, जो पिछले वर्ष की 4.6 प्रतिशत दर की तुलना में काफी कम है। इससे अगले महीने होने वाली आरबीआइ की मौद्रिक नीति समिति बैठक में नीतिगत ब्याज दरों में कटौती की संभावना बढ़ गई है, ताकि विकास को नई गति मिल सके। इन दिनों राष्ट्रीय और अंतरराष्ट्रीय एजेंसियों की रिपोर्ट में यह बात रेखांकित की जा रही है कि टैक्स और महंगाई में गिरावट से भारतीय अर्थव्यवस्था की रफ्तार बढ़ रही है तथा देश की क्रेडिट रेटिंग भी सुधर रही है। इसके बावजूद तीव्र आर्थिक विकास को बनाए रखने के लिए कर्ज सस्ता करने की आवश्यकता बनी हुई है। मूडीज की ग्लोबल मैक्रो आउटलुक रिपोर्ट में कहा गया है कि अमेरिकी राष्ट्रपति डोनाल्ड ट्रंप द्वारा ऊंचे आयात शुल्क लगाए जाने के बावजूद कम महंगाई और आर्थिक आधारभूत मजबूती के चलते भारत चालू वित्त वर्ष में 6.5 प्रतिशत की वृद्धि दर के साथ जी-20 देशों में सबसे तेज बढ़ती अर्थव्यवस्था बना रहेगा।

मूडीज ने आरबीआइ की सतर्क मौद्रिक नीति की भी सराहना की है, जिसने वृद्धि और महंगाई के बीच संतुलन बनाए रखा है। रिपोर्ट बताती है कि बीते महीने आरबीआइ ने रेपो दर को स्थिर रखकर यह संकेत दिया कि कम महंगाई और मजबूत विकास की परिस्थिति में वह सावधानीपूर्वक आगे बढ़ रहा है। हालांकि निजी क्षेत्र अभी भी बड़े पैमाने पर निवेश को लेकर पूरी तरह आश्वस्त नहीं लगता। ऐसे समय में वैश्विक विकास दर में सुस्ती और अमेरिकी टैरिफ बढ़ोतरी के बीच उद्योग-व्यापार के लिए सरल वित्त व्यवस्था की आवश्यकता और अधिक उभरकर सामने आई है।

रिजर्व बैंक के समक्ष संतुलन साधने की चुनौती। फाइल

नेशनल इंस्टीट्यूट आफ पब्लिक फाइनेंस एंड पालिसी की मध्य-वर्षीय समीक्षा रिपोर्ट में कहा गया है कि जीएसटी दरों में कटौती और महंगाई में कमी से भारतीय अर्थव्यवस्था को स्पष्ट लाभ हुआ है, किंतु वैश्विक आर्थिक अनिश्चितताओं को देखते हुए उद्योग-व्यापार को वित्तीय समर्थन देना आवश्यक है। विश्व बैंक की हालिया रिपोर्ट भी यही कहती है कि वर्ष 2047 तक भारत को 30,000 अरब डालर की अर्थव्यवस्था बनाने के लिए वित्तीय क्षेत्र में सुधार और आसान ब्याज दरों पर कर्ज उपलब्ध कराना अनिवार्य है।

आरबीआइ इस वर्ष फरवरी, अप्रैल और जून में रेपो दर में कुल एक प्रतिशत की कटौती कर चुका है, जिससे यह अब 5.5 प्रतिशत पर आ गई है। साथ ही नकद आरक्षित अनुपात (सीआरआर) भी घटाकर तीन प्रतिशत कर दिया गया है। फिर भी मौजूदा वैश्विक चुनौतियों और भारतीय उद्योग-व्यापार की आवश्यकताओं को देखते हुए ब्याज दरों में और कटौती समय की मांग है। वैसे भी वित्तीय संकेतक लगातार सुधार दिखा रहे हैं और विदेशी संस्थागत निवेशक दोबारा भारतीय बाजारों में निवेश बढ़ा रहे हैं। विश्व के कई केंद्रीय बैंक भी ब्याज दरों में कमी कर रहे हैं। ऐसे माहौल में सस्ते कर्ज से देश में आर्थिक गतिविधियों को तीव्र गति मिल सकती है। ट्रंप टैरिफ और वैश्विक व्यापारिक अनिश्चितताओं के बीच भारत की रणनीतिक तैयारी को देखते हुए आसान कर्ज उद्योग, व्यापार और सेवा क्षेत्रों में नई ऊर्जा भर सकता है। घटी हुई ब्याज दरें न केवल निवेशकों के विश्वास को बढ़ाएंगी, बल्कि नवाचार, उत्पादन और बाजार विस्तार के लिए भी नया आधार तैयार करेंगी। विदेशी निवेश को भी इससे बढ़ावा मिलेगा। साथ ही ग्रामीण और शहरी मांग में तेजी आएगी, जिससे विनिर्माण और सेवा क्षेत्रों को मजबूती मिलेगी।

किफायती कर्ज की उपलब्धता से घरेलू बाजारों को गति मिलेगी और बैंकिंग प्रणाली भी अधिक स्थिर होगी। ईएमआइ घटने से उपभोक्ताओं की खर्च योग्य आय बढ़ेगी, जिससे घर और वाहनों की मांग में वृद्धि होगी। रियल एस्टेट क्षेत्र, जो लंबे समय से धीमी बिक्री की चुनौती से जूझ रहा है, ब्याज दरों में कटौती से राहत महसूस करेगा। उम्मीद की जानी चाहिए कि खुदरा और थोक महंगाई में आई तीव्र कमी तथा जीएसटी में कटौती के सकारात्मक प्रभावों को ध्यान में रखते हुए आरबीआइ आगामी मौद्रिक नीति समीक्षा में ब्याज दरों में कमी का महत्वपूर्ण निर्णय लेगा। इससे उद्योग-व्यापार की गति बढ़ेगी, उपभोक्ताओं को राहत मिलेगी, बाजार मांग में मजबूती और निवेश के नए माहौल को बल मिलेगा। साथ ही वैश्विक व्यापार अनिश्चितता एवं ट्रंप की टैरिफ चुनौतियों के बीच भारतीय अर्थव्यवस्था तेज गति से आगे बढ़ेगी।

(लेखक अर्थशास्त्री हैं)

response@jagran.com

ऊर्जा

संग्रह ही नहीं, वितरण भी

जीवन में उपार्जन जितना ही आवश्यक है उसका सुचारु वितरण। केवल संग्रह करते जाने से सुविधाएं नहीं, समस्याएं जन्म लेती हैं। जैसे भोजन पकाया जाए, पर खाया न जाए, तो वही भोजन अंततः बोझ बन जाता है। उसी प्रकार उपार्जन यदि उपयोग में न आए तो वह जीवन को असंतुलित कर देता है। भौतिक जीवन में उत्पादन और उपभोग का जैसे अन्योन्याश्रित संबंध है, वैसे ही आध्यात्मिक जीवन में भी साधना, स्वाध्याय और उपासना का उद्देश्य तभी पूर्ण होता है, जब अर्जित सद्ज्ञान व्यवहार में उतरकर समाज के हित में उपयोग हो।

आध्यात्मिक उपलब्धि को यदि केवल अपनी सिद्धि, मुक्ति या व्यक्तिगत कल्याण तक सीमित रखा जाए, तो यह दृष्टि अत्यंत संकीर्ण मानी जाएगी। ऋषियों ने सदैव कहा है कि हमें राज्य, वैभव, स्वर्ग या मोक्ष की आवश्यकता नहीं, हमें तो दूसरों के दुख निवारण में निरंतर प्रवृत्त रहना है। प्रत्येक अध्यात्मवादी व्यक्ति के लिए यही व्यापक दृष्टिकोण आदर्श होना चाहिए। ज्ञान, आत्मबल और वर्चस्व का अर्जन हो, पर उसका लाभ जनसमाज तक पहुंचे, यही ज्ञानयज्ञ की वास्तविक साधना है। ऋषि-मुनि इसी उद्देश्य से अपनी उपलब्धियों का लोककल्याण में विस्तार करते थे। इसके विपरीत, यदि कोई साधक अपनी उपलब्धि को केवल व्यक्तिगत स्वार्थ तक सीमित रखे तो वह उस धनाढ्य से भी गया-गुजरा है, जो कम-से-कम अपने परिवार का भरण-पोषण तो करता है।

भारतीय संस्कृति में दान-संस्कृति इसलिए प्रतिष्ठित रही है कि संग्रह तभी सार्थक है जब उसका एक अंश परमार्थ, लोक-मंगल और समाज ऋण से उऋण होने में लगाया जाए। वस्तुतः संग्रह एक अभिशाप है, यदि उसके साथ सदुपयोग और समाजोपयोगी वितरण न जुड़ा हो। प्रकृति निरंतर देती है और यही संदेश मनुष्य को भी अपनाना चाहिए।

मुकेश ऋषि

घटते जंगल से बढ़ता धरती का संकट

रंजना मिश्रा

कुछ साल पहले, दुनिया के बड़े-बड़े नेताओं द्वारा संकल्प लिया गया था कि 2030 तक जंगलों की कटाई को रोक दिया जाएगा और जितने जंगल उजड़ गए हैं, उन्हें फिर से हरा-भरा करने की कोशिश की जाएगी, लेकिन 2025 की 'फारेस्ट डिक्लेरेशन असेसमेंट' रिपोर्ट ने हमारी सामूहिक विफलता को उजागर कर दिया है। रिपोर्ट के अनुसार, अकेले 2024 में दुनिया ने 81 लाख हेक्टेयर जंगल खो दिए। यह इतना बड़ा इलाका है जो आस्ट्रिया या इंग्लैंड जैसे एक छोटे-मोटे देश को आसानी से समा सकता है। सबसे गंभीर क्षति अमूल्य उष्णकटिबंधीय प्राथमिक वनों को हुई है, जिनकी 67 लाख हेक्टेयर भूमि नष्ट हो गई।

फारेस्ट डिक्लेरेशन असेसमेंट रिपोर्ट बताती है कि दुनिया भर में 86 प्रतिशत जंगल सिर्फ खेती-बाड़ी के लिए जमीन निकालने हेतु काटे जा रहे हैं। 2024 में जंगल की आग भी नुकसान का एक बड़ा कारण रही, जिसका प्रकोप जलवायु परिवर्तन और भूमि साफ करने के लिए लगाई गई आग के अनियंत्रित होने से बढ़ा। ऊर्जा संक्रमण के लिए खनिजों की बढ़ती मांग भी एक नया खतरा पैदा कर रही है। दुनिया भर की सरकारें हर साल लगभग 409 अरब डालर उन कामों (जैसे कृषि, पशुधन) पर सब्सिडी या छूट देने में खर्च करती हैं, जो सीधे-सीधे जंगलों को काट रहे हैं। इसकी तुलना में, इन्हीं जंगलों को बचाने के लिए हम कितना खर्च करते हैं? महज पांच से छह अरब डालर। इस तरह विनाश को बढ़ावा देने वाली सब्सिडी, वनों की रक्षा के लिए उपलब्ध सार्वजनिक वित्त से 70 गुना अधिक है। वनों को फिर से हरा-भरा करने (पुनर्स्थापन) के हमारे प्रयास भी बहुत सुस्त हैं। हम अपनी कुल क्षमता का सिर्फ 5 प्रतिशत ही इस्तेमाल कर रहे हैं।

फारेस्ट डिक्लेरेशन असेसमेंट रिपोर्ट के अनुसार, अकेले 2024 में दुनिया ने 81 लाख हेक्टेयर जंगल खो दिए

अब हमें निर्णायक कदम उठाने होंगे। पहला, सरकारों को तुरंत उन सभी कामों पर सब्सिडी बंद करनी होगी, जो जंगलों को नुकसान पहुंचाते हैं। दूसरा, कंपनियों को यह सुनिश्चित करने के लिए मजबूर किया जाए कि उनके उत्पाद जंगल काटकर उगाई गई जमीन से न आए हों, और नियम तोड़ने पर भारी जुर्माना और सजा हो। तीसरा, जंगल के असली रखवालों, यानी वहां रहने वाले आदिवासी और स्थानीय समुदायों को सशक्त करना होगा। आंकड़े सिद्ध करते हैं कि जंगल वहीं सबसे ज्यादा सुरक्षित हैं, जहां उनकी देख-रेख का हक मूल निवासियों के पास है। उनके अधिकारों को कानूनी और वास्तविक रूप से मजबूत करना सबसे जरूरी है। यह रिपोर्ट सिर्फ पेड़ों के भविष्य के बारे में नहीं है। यह हमारे पानी, हमारी हवा, हमारी जलवायु और आखिर में, हमारे अपने वजूद के बारे में है। वर्ष 2030 अब दूर नहीं है। अगर अब भी हम नहीं जागे और इस दोहरेपन को खत्म नहीं किया तो इतिहास हमें उस पीढ़ी के रूप में याद रखेगा, जिसने अपने हाथों से अपनी ही सांसों का गला घोंट दिया था।

(लेखिका स्वतंत्र टिप्पणीकार हैं)

मेलबाक्स

विकास की दिशा में आगे बढ़े बिहार

'बिहार की जरूरत बने नीतीश कुमार' शीर्षक से प्रकाशित आलेख में केसी त्यागी द्वारा दिया गया तर्क आज की राजनीतिक परिस्थिति में काफी अर्थपूर्ण प्रतीत होता है। नीतीश कुमार का दसवीं बार मुख्यमंत्री पद की शपथ लेना केवल एक औपचारिक राजनीतिक उपलब्धि नहीं, बल्कि यह इस तथ्य की पुष्टि करता है कि बिहार की जनता आज भी उनके नेतृत्व पर भरोसा करती है। दरअसल, बिहार को लंबे समय तक पिछड़ेपन, अव्यवस्था और विकासहीनता की छाया में रहना पड़ा। ऐसे समय में नीतीश कुमार ने एक सतत विकासवादी दृष्टि के साथ राज्य की बागडोर संभाली और शिक्षा, स्वास्थ्य, सड़क निर्माण, महिलाओं की सुरक्षा तथा कानून-व्यवस्था के क्षेत्र में उल्लेखनीय परिवर्तन किए। बिहार में शराबबंदी जैसे कदम ने लाखों परिवारों, विशेषकर महिलाओं को राहत दी और यही कारण है कि हालिया चुनाव में महिलाओं की अभूतपूर्व भागीदारी ने व्यापक जनसमर्थन का संकेत दिया। जन कल्याण की अनेक योजनाओं-छात्रवृत्ति, साइकिल योजना, कौशल विकास कार्यक्रम, गरीबों के लिए आवास एवं स्वास्थ्य सुविधाओं के विस्तार ने समाज के हर वर्ग को कुछ न कुछ दिया है। यह भी स्पष्ट है कि बिहार के लोग अब केवल मूल सुविधाएं नहीं, बल्कि गुणवत्तापूर्ण शिक्षा, आधुनिक स्वास्थ्य सेवाएं और प्रभावी कानून-व्यवस्था चाहते हैं। नीतीश कुमार से उनकी अपेक्षा इन्हीं क्षेत्रों में और सुधार की है। पिछली सरकारों के दौरान मिले घावों से बिहार अब उबर रहा है और इस सफर में जनता को अभी भी वही नेतृत्व भरोसेमंद लगता है जिसने परिवर्तन की राह खोली। इसलिए यह कहना अतिशयोक्ति नहीं होगा कि आज भी बिहार के विकास की प्राथमिक उम्मीद नीतीश कुमार से ही बंधी है।

itihukam@gmail.com

बांग्लादेश की बदलती राजनीतिक

ऋषि गुप्त द्वारा लिखित आलेख 'भारत को चिंतित करता बांग्लादेश' पढ़कर दक्षिण एशिया की बदलती भू-राजनीति की गंभीरता और स्पष्ट रूप से सामने आती है। आजादी से पहले बांग्लादेश भारतीय उपमहाद्वीप का हिस्सा था और 1971 में पाकिस्तान के अत्याचारों से मुक्ति दिलाने में भारत ने निर्णायक भूमिका निभाई थी। इसी ऐतिहासिक साझेदारी के आधार पर सीमा सुरक्षा, आतंकवाद-निरोध, व्यापार, नदी-जल बंटवारे और ऊर्जा सहयोग जैसे क्षेत्रों में भारत-बांग्लादेश संबंध वर्षों तक स्थिर और विश्वासपूर्ण रहे। किंतु हाल के वर्षों में आए राजनीतिक उथल-पुथल ने इस भरोसे में दरार पैदा कर दी है। शेख हसीना का सत्ता छोड़कर भारत में शरण लेना केवल एक राजनीतिक घटना नहीं, बल्कि बांग्लादेश की आंतरिक अस्थिरता का गहरा संकेत है। बढ़ती कट्टरपंथी गतिविधियां, हिंदू अल्पसंख्यकों पर हिंसा, और चीन की तीव्र रणनीतिक पैठ ने भारत की चिंताओं को और गहरा किया है। बांग्लादेश की मौजूदा राजनीतिक संरचना में सत्ता संघर्ष जटिल और बहुआयामी रूप ले चुका है। कट्टरपंथी तत्वों का प्रभाव बढ़ना, शासन-व्यवस्था में असंतुलन और संवैधानिक संस्थाओं का कमजोर होना भारत-बांग्लादेश सहयोग के कई पहलुओं को अनिश्चित बना रहा है। हाल में अंतरराष्ट्रीय अपराध ट्रिब्यूनल द्वारा अपदस्थ प्रधानमंत्री शेख हसीना को ''मानवता के विरुद्ध अपराध'' के आरोप में सुनाई गई मृत्यु-दंड की सजा भी प्रतिशोध की राजनीति का ही हिस्सा मानी जा रही है, न कि किसी निष्पक्ष न्यायिक प्रक्रिया का परिणाम। इन परिस्थितियों में भारत के सामने चुनौती दोहरी है। एक ओर उसे अपने पारंपरिक हितों-सीमा सुरक्षा, पूर्वोत्तर की स्थिरता, आतंकवाद-निरोध, ऊर्जा गलियारों को सुरक्षित रखना है। दूसरी ओर बांग्लादेश के भीतर बदलते घटनाक्रमों के अनुरूप दीर्घकालिक रणनीति भी तैयार करनी है। स्पष्ट संकेत यही है कि पुरानी नीतियों के सहारे आगे बढ़ना अब संभव नहीं। बांग्लादेश की बदलती राजनीतिक धरातल, बढ़ते कट्टरपंथ और चीन के विस्तारवादी प्रभाव को देखते हुए भारत को एक नई, व्यावहारिक और बहु-आयामी नीति तैयार करनी ही होगी।

हिमांशु शेखर, गयाजी

इस स्तंभ में किसी भी विषय पर राय व्यक्त करने अथवा दैनिक जागरण के राष्ट्रीय संस्करण पर प्रतिक्रिया व्यक्त करने के लिए पाठकगण सादर आमंत्रित हैं। आप हमें पत्र भेजने के साथ ई-मेल भी कर सकते हैं।
अपने पत्र इस पते पर भेजें :
दैनिक जागरण, राष्ट्रीय संस्करण,
डी-210-211, सेक्टर-63, नोएडा
ई-मेल: response@jagran.com

संस्थापक- स्व. पूर्णचन्द्र गुप्त, पूर्व प्रधान संपादक- स्व. नरेन्द्र मोहन, नॉन एग्जीक्यूटिव चेयरमैन- महेन्द्र मोहन गुप्त, प्रधान संपादक- संजय गुप्त, जागरण प्रकाशन लि. के लिए: नीतेन्द्र श्रीवास्तव द्वारा 501, आई.एन.एस. बिल्डिंग, रफी मार्ग, नई दिल्ली से प्रकाशित और उन्हीं के द्वारा डी-210, 211, सेक्टर-63 नोएडा से मुद्रित, संपादक (राष्ट्रीय संस्करण) -विष्णु प्रकाश त्रिपाठी*
दूरभाष : नई दिल्ली कार्यालय : 011-43166300, नोएडा कार्यालय : 0120-4615800, E-mail: delhi@nda.jagran.com, R.N.I. No. DELHIN/2017/74721 *इस अंक में प्रकाशित समस्त समाचारों के चयन एवं संपादन हेतु पी.आर.बी. एक्ट के अंतर्गत उत्तरदायी। समस्त विवाद दिल्ली न्यायालय के अधीन ही होंगे। हवाई/रेल शुल्क ₹-2 अतिरिक्त।
****

https://t.me/AllNewsPapersPaid1

संपादकीय जागरण

शुक्रवार, 21 नवंबर, 2025 : मार्गशीर्ष शुक्ल प्रतिपदा वि. 2082

दुख में भी उत्थान की शक्ति निहित होती है

संवैधानिक सीमाएं

यह अच्छा हुआ कि सुप्रीम कोर्ट की संविधान पीठ ने विधेयकों को मंजूरी देने के मामले में राज्यपालों को समय सीमा में बांधने की आवश्यकता नहीं समझी। उसे इस निष्कर्ष पर इसलिए पहुंचना पड़ा, क्योंकि कुछ समय पहले तमिलनाडु के मामले में विचार करने वाली सुप्रीम कोर्ट की दो सदस्यीय पीठ इस फैसले पर पहुंच गई थी कि राज्यपालों को एक तय समय में विधेयकों पर निर्णय लेना होगा। उसने राज्यपालों के साथ राष्ट्रपति को भी समय सीमा में बांध दिया था और तमिलनाडु के लंबित विधेयकों को स्वीकृत भी करार दिया था। चूंकि यह सुप्रीम कोर्ट की ओर से अपनी न्यायिक सीमा का अतिक्रमण करने और संवैधानिक व्यवस्था की अनदेखी करने वाला फैसला था, इसलिए उस पर सवाल उठे और राष्ट्रपति को हस्तक्षेप भी करना पड़ा। उनकी ही ओर से पूछे गए सवालों का जवाब देने के क्रम में संविधान पीठ ने यह पाया कि दो सदस्यीय पीठ का यह कहना असंवैधानिक था कि यदि विधेयकों को तय सीमा में मंजूरी न मिले तो उन्हें स्वतः स्वीकृत माना जाए। निःसंदेह संविधान पीठ के इस फैसले पर भी बहस होगी, लेकिन इसी के साथ इस पर भी ध्यान दिया जाए कि सुप्रीम कोर्ट से ऐसे फैसले आना शुभ संकेत नहीं, जो संविधान की भावना के खिलाफ जाते हों और जिस पर राष्ट्रपति को प्रश्न पूछने पड़ें।

चूंकि सुप्रीम कोर्ट की संविधान पीठ ने यह कहा कि राज्यपाल या तो विधेयकों को टिप्पणियों के साथ सदन को वापस भेजें या फिर उसे राष्ट्रपति के विचार के लिए सुरक्षित रख लें, इसलिए आसार यही हैं कि आगे भी विधेयक लंबित रहने की शिकायत आ सकती है। विधेयकों के लंबित रहने की अवस्था में सुप्रीम कोर्ट ने सीमित दखल देने की बात अवश्य कही है, पर वह राज्यपालों को फैसला लेने को बाध्य नहीं कर सकता। इसके चलते वैसी समस्या फिर देखने को मिल सकती है, जैसी तमिलनाडु में उभरी। इस समस्या का समाधान निकाला जाना चाहिए, लेकिन खुद विधायिका और कार्यपालिका की ओर से। अच्छा हो कि इस पर राजनीतिक दलों के बीच कोई आम सहमति कायम हो, ताकि विधायिका-कार्यपालिका के वे मामले न्यायपालिका तक न पहुंचें, जिन पर उसे निर्णय लेने का अधिकार नहीं। कार्यपालिका, विधायिका और न्यायपालिका, तीनों को अपनी संवैधानिक सीमाओं का ध्यान रखना चाहिए। जब ऐसा नहीं होता तभी समस्याएं उभरती हैं। यह सही है कि सुप्रीम कोर्ट को संविधान की व्याख्या करने का अधिकार है, लेकिन इसके नाम पर संविधान की अनदेखी नहीं होनी चाहिए। तमिलनाडु मामले में यह कहा जाना ठीक नहीं था कि यदि राज्यपाल अपना काम समय पर नहीं करते तो हम चुपचाप नहीं बैठ सकते, क्योंकि इस सवाल का कोई जवाब नहीं कि यदि न्यायपालिका समय पर फैसले न ले तो क्या किया जा सकता है?

सतर्कता जरूरी

लाल किला मेट्रो स्टेशन के बाहर 10 नवंबर को हुए विस्फोट की जांच में मिल रही जानकारी से सुरक्षा व्यवस्था की कमियां भी उजागर हो रही हैं। इस विस्फोट के पीछे पाकिस्तानी आतंकी संगठन जैश-ए-मोहम्मद से जुड़े फरीदाबाद-सहारनपुर के डाक्टर माड्यूल था। इसके कई सदस्य फरीदाबाद स्थित अल फलाह यूनिवर्सिटी से संबंधित हैं। वर्ष 2008 में दिल्ली में हुए सिलसिलेवार धमाकों में भी इस यूनिवर्सिटी का एक छात्र शामिल था।

> दिल्ली में पहले भी कई आतंकवादी और उनके मददगार पकड़े गए हैं, इसे नजरअंदाज नहीं किया जा सकता है

इससे पता चलता है कि वर्षों पहले से यहां आतंकी गतिविधियां चल रही थीं। यह चिंता की बात है कि उस समय यह बात सामने आने के बाद भी गंभीरता से जांच नहीं की गई। परिणाम सामने है। यदि उस समय गंभीरता दिखाई जाती तो इस यूनिवर्सिटी को आतंकी अड्डा बनने से रोका जा सकता था। इस चूक के कारण आतंकियों ने अल फलाह यूनिवर्सिटी को सबसे सुरक्षित स्थान बना लिया था। यहां से वे आतंकी माड्यूल तैयार कर वर्षों से देश के विरोध साजिश रचते रहे। हरियाणा से लेकर उत्तर प्रदेश और जम्मू कश्मीर सहित कई राज्यों में इनका नेटवर्क बन गया और सुरक्षा एजेंसियों को इसकी भनक तक नहीं लगी। पिछले कुछ वर्षों में दिल्ली में भी कई आतंकी और उनके मददगार पकड़े गए हैं। इस तरह के मामलों को सामान्य घटना मानकर नजरअंदाज नहीं किया जा सकता है।

कह के रहेंगे — माधव जोशी

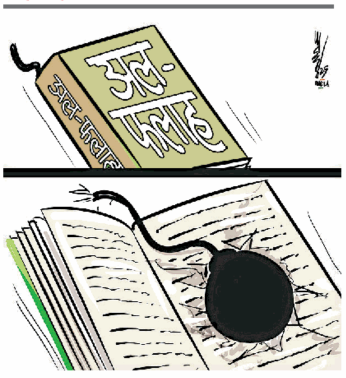

जागरण जनमत

कल का परिणाम

क्या अनमोल बिश्नोई के प्रत्यर्पण से लारेंस बिश्नोई गैंग की गतिविधियों पर लगाम लगाने में सफलता मिलेगी?

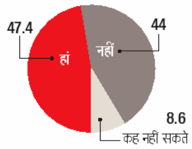

आज का सवाल

क्या अल फलाह यूनिवर्सिटी का आतंकियों का अड्डा बन जाना निजी विश्वविद्यालयों के लचर नियमन का नतीजा है?

परिणाम जागरण इंटरनेट संस्करण के पाठकों का मत है। सभी आंकड़े प्रतिशत में।

आतंक ने पेश की नई चुनौती

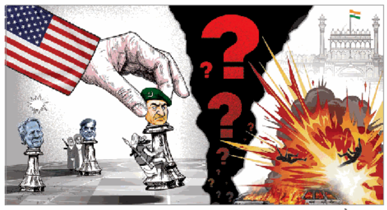

हर्ष वी. पंत

दिल्ली आतंकी हमला यही रेखांकित कर रहा है कि आतंक के खिलाफ मुहिम में तनिक भी ढील नहीं दी जा सकती

भारत के प्रधानमंत्री प्रत्येक स्वतंत्रता दिवस पर लाल किले की जिस प्राचीर से राष्ट्र को संबोधित करते हैं, उसके निकट एक भयावह आतंकी हमले ने कई सवाल खड़े किए हैं। आतंक के प्रति जीरो टालरेंस की सरकार की नीति और सुरक्षा प्रतिष्ठान की सक्रियता के चलते पिछले कुछ वर्षों से देश आतंकी हमलों से एक बड़ी हद तक सुरक्षित रहा है, लेकिन इस हमले ने सुरक्षा को लेकर बने भरोसे में सेंध लगाने का काम किया है। यह भी कहा जा रहा है कि सुरक्षा एजेंसियों ने एक बड़ी साजिश को बेनकाब कर दिया और दिल्ली में हुआ धमाका उसी हताशा का परिणाम था। इससे कुछ समय पहले ही सुरक्षा एजेंसियों ने फरीदाबाद में डाक्टरों के एक आतंकी माड्यूल की धरपकड़ के साथ भारी मात्रा में विस्फोटक भी जब्त किया था। माना जा रहा है कि इस एकाएक कार्रवाई से सकते में आए आतंकियों ने दिल्ली में बिना किसी योजना के धमाका कर अपनी भड़ास निकाली। भले ही इसे एकाएक किया गया आतंकी हमला कहा जा रहा हो, लेकिन इसमें निहित कुछ पहलुओं को कतई अनदेखा नहीं किया जा सकता। राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र में कई जगह बेरोकटोक आवाजाही के बाद आतंकियों ने धमाके के लिए दिल्ली के एक प्रमुख स्थान को चुना। यह इलाका न केवल ऐतिहासिक रूप से महत्व रखता है, बल्कि वाणिज्यिक-सांस्कृतिक एवं पर्यटन गतिविधियों का भी प्रमुख केंद्र है। धमाके के लिए जो समय चुना गया, वह अपेक्षाकृत व्यस्तता वाला होता है। जाहिर है आतंकी ज्यादा से ज्यादा नुकसान पहुंचाना चाहते थे। इससे आतंक से सुरक्षा को लेकर बना आवरण और भरोसे के भाव पर निश्चित ही चोट पहुंची है।

जांच एजेंसियां हरसंभव पहलू से जांच में जुटी हैं, लेकिन यह मानने के अच्छे-भले कारण हैं कि इसके पीछे पाकिस्तान ही है। पाकिस्तान आतंकवाद को अपनी राज्य-नीति के रूप में इस्तेमाल करता है, लेकिन ऐसा प्रतीत होता है कि आपरेशन सिंदूर के बाद भारत की कार्रवाई से सहमे पाकिस्तान ने अपनी रणनीति कुछ बदली है। यही कारण है कि शुरुआती जांच के दौरान इस हमले के तार बांग्लादेश से लेकर तुर्किये तक जुड़ते दिखे। वहीं गुलाम जम्मू-कश्मीर के पूर्व प्रधानमंत्री की स्वीकारोक्ति भी पाकिस्तान की बदनीयती की पुष्टि करने वाली रही है। हमले के दिन सुरक्षा एजेंसियां इसे लेकर आश्वस्त नहीं थीं कि यह आतंकी हमला है या नहीं, मगर जैसे-जैसे जांच प्रक्रिया आगे बढ़ती गई तो इसे लेकर संदेह के बादल भी छंटते गए। रही-सही कसर आत्मघाती हमलावर डाक्टर उमर के वीडियो ने पूरी कर दी कि इसके पीछे विध्वंसक जिहादी मानसिकता ही थी।

दिल्ली में आतंकी हमले के कुछ समय बाद ही पाकिस्तान की राजधानी इस्लामाबाद में भी धमाका हुआ। यह धमाका एक न्यायिक परिसर में हुआ। यह क्षेत्र गणमान्य लोगों की उपस्थिति और आवाजाही वाला है। इस हमले की जिम्मेदारी तहरीक-ए-तालिबान यानी टीटीपी से जुड़े रहे जमात-उल-अहरार ने ली है। पाकिस्तान ने आरोप लगाया कि भारत की शह पर यह आतंकी हमला हुआ है। इसके पीछे पाकिस्तान की मंशा काउंटर नैरेटिव तैयार करने की ही लगती है। उसका फार्मूला एकदम सीधा है कि इससे पहले दिल्ली हमले को लेकर पाकिस्तान पर सवाल उठें, वह इस्लामाबाद धमाके को लेकर भारत को निशाने पर ले। अफगानिस्तान में सत्तारूढ़ तालिबान के साथ भी पिछले कुछ समय से पाकिस्तान की पटरी बैठ नहीं रही तो वह एक तीर से दो शिकार करने की फिराक में है कि भारत की शह पर अफगानिस्तान उसके यहां अशांति फैलाने में लगा है। पूरी दुनिया में आतंक के सबसे बड़े निर्यातक के रूप में कुख्यात पाकिस्तान यही चाहता है कि आतंकवाद को लेकर दुनिया भारत पर भी संदेह की दृष्टि देखने लगे।

मौजूदा परिदृश्य में इस रुझान को भी अनदेखा नहीं किया जा सकता कि जब भी पाकिस्तान की पीठ पर अमेरिका का हाथ होता है तो वहां से आतंकी गतिविधियों को बढ़ावा मिलता है। दूसरे कार्यकाल में ट्रंप प्रशासन का पाकिस्तान के प्रति बदला हुआ रवैया इसका प्रमाण है। इसी वर्ष अप्रैल में हुआ पहलगाम आतंकी हमला इसका एक उदाहरण रहा। आपरेशन सिंदूर और फिर संघर्ष विराम एवं मध्यस्थता के मामले में राष्ट्रपति ट्रंप की जी-हुजूरी ने भी पाकिस्तान के लिए हालात अनुकूल बना दिए। जबकि ट्रंप के दावों को बार-बार खारिज कर अमेरिका के साथ भारत के संबंधों में कुछ खटास आ गई। अमेरिका के साथ व्यापार समझौते पर संशय में भी इसकी छाप दिखी। यह अच्छी बात है कि पिछले कुछ दिनों से भारत के प्रति राष्ट्रपति ट्रंप का भारत के प्रति दृष्टिकोण नरम हुआ है। व्यापार समझौते को लेकर भी उम्मीद बढ़ी है, जिसे अंतिम रूप देने के लिए भारत को अपने प्रयासों में तेजी लानी होगी। अमेरिका के साथ व्यापार समझौता पाकिस्तान के विरुद्ध भारत को एक रणनीतिक कवच प्रदान करेगा। तब पाकिस्तान के खिलाफ किसी संभावित कार्रवाई के मामले में भारत के समक्ष अमेरिकी दखल की आशंका कमजोर पड़ जाएगी। अन्यथा ट्रंप का रवैया परेशानी खड़ी करता रहेगा।

तमाम पहलुओं को देखते हुए दिल्ली आतंकी हमला यही रेखांकित करने वाला रहा कि आतंक के खिलाफ मुहिम में तनिक भी ढील नहीं दी जा सकती। कई जगहों को निशाने बनाने की तैयारी कर रहे आतंकियों के मंसूबों को नाकाम करने के लिए सुरक्षा एजेंसियां साधुवाद की पात्र हैं, लेकिन लाल किले धमाके को लेकर जिम्मेदारी एवं जवाबदेही से भी उन्हें मुक्त नहीं किया जा सकता। अच्छी बात है कि प्रधानमंत्री मोदी से लेकर गृहमंत्री अमित शाह और रक्षा मंत्री राजनाथ सिंह ने शीर्ष स्तर से कड़े संदेश दिए हैं कि इसके दोषियों को बख्शा नहीं जाएगा और पाताल से भी खोजकर उन्हें सबक सिखाया जाएगा। इस बीच यह भी सुनिश्चित करना होगा कि सुरक्षा प्रतिष्ठान एवं खुफिया एजेंसियों को अपना मोर्चा और दुरुस्त करना होगा। इसके साथ ही कूटनीतिक प्रयासों को भी गति देनी होगी ताकि पाकिस्तान समेत भारत विरोधी शक्तियों की वैश्विक स्तर पर पोल खोलना जारी रहे कि कैसे कुछ देश क्षेत्रीय एवं वैश्विक शांति के दुश्मन बने हुए हैं।

(लेखक आब्जर्वर रिसर्च फाउंडेशन में उपाध्यक्ष हैं)

response@jagran.com

अवधेश राजपूत

पूरी की जाए सस्ते कर्ज की जरूरत

डा. जयंतीलाल भंडारी

ब्याज दरों में कटौती निवेशकों का भरोसा बढ़ाने एवं नवाचार, उत्पादन और बाजार विस्तार के लिए आधार तैयार करेगी

महंगाई में आई गिरावट ने सस्ते कर्ज की नई संभावनाओं को जन्म दिया है। राष्ट्रीय सांख्यिकी कार्यालय की हालिया रिपोर्ट के अनुसार बीते अक्टूबर में खुदरा महंगाई घटकर पिछले दस वर्षों के न्यूनतम स्तर 0.25 प्रतिशत पर आ गई, जबकि थोक महंगाई भी 27 महीने के निचले स्तर यानी शून्य से 1.21 प्रतिशत नीचे दर्ज की गई। यह गिरावट मुख्यतः सब्जियों, फलों, अंडों, फुटवियर, अनाज एवं उससे बने उत्पादों के साथ बिजली, परिवहन और संचार सेवाओं की कीमतों में कमी के कारण संभव हुई है। सितंबर से लागू जीएसटी दरों में कटौती का भी इसमें महत्वपूर्ण योगदान रहा है, जिससे खाद्य वस्तुओं के दाम सर्वत्र कम हुए हैं। क्रिसिल की रिपोर्ट के अनुसार, अक्टूबर में शाकाहारी थाली 17 प्रतिशत सस्ती होकर 27.8 रुपये की कीमत पर और मांसाहारी थाली 12 प्रतिशत सस्ती होकर 54.4 रुपये की दर पर उपलब्ध रही।

अनुमान है कि चालू वित्त वर्ष 2025-26 में औसत खुदरा महंगाई घटकर 2.5 प्रतिशत पर स्थिर रह सकती है, जो पिछले वर्ष की 4.6 प्रतिशत दर की तुलना में काफी कम है। इससे अगले महीने होने वाली आरबीआइ की मौद्रिक नीति समिति बैठक में नीतिगत ब्याज दरों में कटौती की संभावना बढ़ गई है, ताकि विकास को नई गति मिल सके। इन दिनों राष्ट्रीय और अंतरराष्ट्रीय एजेंसियों की रिपोर्ट में यह बात रेखांकित की जा रही है कि टैक्स और महंगाई में गिरावट से भारतीय अर्थव्यवस्था की रफ्तार बढ़ रही है तथा देश की क्रेडिट रेटिंग भी सुधर रही है। इसके बावजूद तीव्र आर्थिक विकास को बनाए रखने के लिए कर्ज सस्ता करने की आवश्यकता बनी हुई है। मूडीज की ग्लोबल मैक्रो आउटलुक रिपोर्ट में कहा गया है कि अमेरिकी राष्ट्रपति डोनाल्ड ट्रंप द्वारा ऊंचे आयात शुल्क लगाए जाने के बावजूद कम महंगाई और आर्थिक आधारभूत मजबूती के चलते भारत चालू वित्त वर्ष में 6.5 प्रतिशत की वृद्धि दर के साथ जी-20 देशों में सबसे तेज बढ़ती अर्थव्यवस्था बना रहेगा।

मूडीज ने आरबीआइ की सतर्क मौद्रिक नीति की भी सराहना की है, जिसने वृद्धि और महंगाई के बीच संतुलन बनाए रखा है। रिपोर्ट बताती है कि बीते महीने आरबीआइ ने रेपो दर को स्थिर रखकर यह संकेत दिया कि कम महंगाई और मजबूत विकास की परिस्थिति में वह सावधानीपूर्वक आगे बढ़ रहा है। हालांकि निजी क्षेत्र अभी भी बड़े पैमाने पर निवेश को लेकर पूरी तरह आश्वस्त नहीं लगता। ऐसे समय में वैश्विक विकास दर में सुस्ती और अमेरिकी टैरिफ बढ़ोतरी के बीच उद्योग-व्यापार के लिए सरल वित्त व्यवस्था की आवश्यकता और अधिक उभरकर सामने आई है।

नेशनल इंस्टीट्यूट आफ पब्लिक फाइनेंस एंड पालिसी की मध्य-वर्षीय समीक्षा रिपोर्ट में कहा गया है कि जीएसटी दरों में कटौती और महंगाई में कमी से भारतीय अर्थव्यवस्था को स्पष्ट लाभ हुआ है, किंतु वैश्विक आर्थिक अनिश्चितताओं को देखते हुए उद्योग-व्यापार को वित्तीय समर्थन देना आवश्यक है। विश्व बैंक की हालिया रिपोर्ट भी यही कहती है कि वर्ष 2047 तक भारत को 30,000 अरब डालर की अर्थव्यवस्था बनाने के लिए वित्तीय क्षेत्र में सुधार और आसान ब्याज दरों पर कर्ज उपलब्ध कराना अनिवार्य है।

आरबीआइ इस वर्ष फरवरी, अप्रैल और जून में रेपो दर में कुल एक प्रतिशत की कटौती कर चुका है, जिससे यह अब 5.5 प्रतिशत पर आ गई है। साथ ही नकद आरक्षित अनुपात (सीआरआर) भी घटाकर तीन प्रतिशत कर दिया गया है। फिर भी मौजूदा वैश्विक चुनौतियों और भारतीय उद्योग-व्यापार की आवश्यकताओं को देखते हुए ब्याज दरों में और कटौती समय की मांग है। वैसे भी वित्तीय संकेतक लगातार सुधार दिखा रहे हैं और विदेशी संस्थागत निवेशक दोबारा भारतीय बाजारों में निवेश बढ़ा रहे हैं। विश्व के कई केंद्रीय बैंक भी ब्याज दरों में कमी कर रहे हैं। ऐसे माहौल में सस्ते कर्ज से देश में आर्थिक गतिविधियों को तीव्र गति मिल सकती है। ट्रंप टैरिफ और वैश्विक व्यापारिक अनिश्चितताओं के बीच भारत की रणनीतिक तैयारी को देखते हुए आसान कर्ज उद्योग, व्यापार और सेवा क्षेत्रों में नई ऊर्जा भर सकता है। घटी हुई ब्याज दरें न केवल निवेशकों के विश्वास को बढ़ाएंगी, बल्कि नवाचार, उत्पादन और बाजार विस्तार के लिए भी नया आधार तैयार करेंगी। विदेशी निवेश को भी इससे बढ़ावा मिलेगा। साथ ही ग्रामीण और शहरी मांग में तेजी आएगी, जिससे विनिर्माण और सेवा क्षेत्रों को मजबूती मिलेगी।

किफायती कर्ज की उपलब्धता से घरेलू बाजारों को गति मिलेगी और बैंकिंग प्रणाली भी अधिक स्थिर होगी। ईएमआइ घटने से उपभोक्ताओं की खर्च योग्य आय बढ़ेगी, जिससे घर और वाहनों की मांग में वृद्धि होगी। रियल एस्टेट क्षेत्र, जो लंबे समय से धीमी बिक्री की चुनौती से जूझ रहा है, ब्याज दरों में कटौती से राहत महसूस करेगा। उम्मीद की जानी चाहिए कि खुदरा और थोक महंगाई में आई तीव्र कमी तथा जीएसटी में कटौती के सकारात्मक प्रभावों को ध्यान में रखते हुए आरबीआइ आगामी मौद्रिक नीति समीक्षा में ब्याज दरों में कमी का महत्वपूर्ण निर्णय लेगा। इससे उद्योग-व्यापार की गति बढ़ेगी, उपभोक्ताओं को राहत मिलेगी, बाजार मांग में मजबूती और निवेश के नए माहौल को बल मिलेगा। साथ ही वैश्विक व्यापार अनिश्चितता एवं ट्रंप की टैरिफ चुनौतियों के बीच भारतीय अर्थव्यवस्था तेज गति से आगे बढ़ेगी।

(लेखक अर्थशास्त्री हैं)

response@jagran.com

रिजर्व बैंक के समक्ष संतुलन साधने की चुनौती ● फाइल

ऊर्जा

संग्रह ही नहीं, वितरण भी

जीवन में उपार्जन जितना ही आवश्यक है उसका सुचारु वितरण। केवल संग्रह करते जाने से सुविधाएं नहीं, समस्याएं जन्म लेती हैं। जैसे भोजन पकाया जाए, पर खाया न जाए, तो वही भोजन अंततः बोझ बन जाता है। उसी प्रकार उपार्जन यदि उपयोग में न आए तो वह जीवन को असंतुलित कर देता है। भौतिक जीवन में उत्पादन और उपभोग का जैसे अन्योन्याश्रित संबंध है, वैसे ही आध्यात्मिक जीवन में भी साधना, स्वाध्याय और उपासना का उद्देश्य तभी पूर्ण होता है, जब अर्जित सद्ज्ञान व्यवहार में उतरकर समाज के हित में उपयोग हो।

आध्यात्मिक उपलब्धि को यदि केवल अपनी सिद्धि, मुक्ति या व्यक्तिगत कल्याण तक सीमित रखा जाए, तो यह दृष्टि अत्यंत संकीर्ण मानी जाएगी। ऋषियों ने सदैव कहा है कि हमें राज्य, वैभव, स्वर्ग या मोक्ष की आवश्यकता नहीं, हमें तो दूसरों के दुख निवारण में निरंतर प्रवृत्त रहना है। प्रत्येक अध्यात्मवादी व्यक्ति के लिए यही व्यापक दृष्टिकोण आदर्श होना चाहिए। ज्ञान, आत्मबल और वर्चस्व का अर्जन हो, पर उसका लाभ जनसमाज तक पहुंचे, यही ज्ञानयज्ञ की वास्तविक साधना है। ऋषि-मुनि इसी उद्देश्य से अपनी उपलब्धियों का लोककल्याण में विस्तार करते थे। इसके विपरीत, यदि कोई साधक अपनी उपलब्धि को केवल व्यक्तिगत स्वार्थ तक सीमित रखे तो वह उस धनाढ्य से भी गया-गुजरा है, जो कम-से-कम अपने परिवार का भरण-पोषण तो करता है।

भारतीय संस्कृति में दान-संस्कृति इसलिए प्रतिष्ठित रही है कि संग्रह तभी सार्थक है जब उसका एक अंश परमार्थ, लोक-मंगल और समाज ऋण से उऋण होने में लगाया जाए। वस्तुतः संग्रह एक अभिशाप है, यदि उसके साथ सदुपयोग और समाजोपयोगी वितरण न जुड़ा हो। प्रकृति निरंतर देती है और यही संदेश मनुष्य को भी अपनाना चाहिए।

मुकेश ऋषि

पाठकनामा

pathaknama@nda .jagran.com

विकास की दिशा में आगे बढ़े बिहार

'बिहार की जरूरत बने नीतीश कुमार' शीर्षक से प्रकाशित आलेख में केसी त्यागी द्वारा दिया गया तर्क आज की राजनीतिक परिस्थिति में काफी अर्थपूर्ण प्रतीत होता है। नीतीश कुमार का दसवीं बार मुख्यमंत्री पद की शपथ लेना केवल एक औपचारिक राजनीतिक उपलब्धि नहीं, बल्कि यह इस तथ्य की पुष्टि करता है कि बिहार की जनता आज भी उनके नेतृत्व पर भरोसा करती है। दरअसल, बिहार को लंबे समय तक पिछड़ेपन, अव्यवस्था और विकासहीनता की छाया में रहना पड़ा। ऐसे समय में नीतीश कुमार ने एक सतत विकासवादी दृष्टि के साथ राज्य की बागडोर संभाली और शिक्षा, स्वास्थ्य, सड़क निर्माण, महिलाओं की सुरक्षा तथा कानून-व्यवस्था के क्षेत्र में उल्लेखनीय परिवर्तन किए। बिहार में शराबबंदी जैसे कदम ने लाखों परिवारों, विशेषकर महिलाओं को राहत दी और यही कारण है कि हालिया चुनाव में महिलाओं की अभूतपूर्व भागीदारी ने व्यापक जनसमर्थन का संकेत दिया। जन कल्याण की अनेक योजनाओं-छात्रवृत्ति, साइकिल योजना, कौशल विकास कार्यक्रम, गरीबों के लिए आवास एवं स्वास्थ्य सुविधाओं के विस्तार ने समाज के हर वर्ग को कुछ न कुछ दिया है। यह भी स्पष्ट है कि बिहार के लोग अब केवल मूल सुविधाएं नहीं, बल्कि गुणवत्तापूर्ण शिक्षा, आधुनिक स्वास्थ्य सेवाएं और प्रभावी कानून-व्यवस्था चाहते हैं। नीतीश कुमार से उनकी अपेक्षा इन्हीं क्षेत्रों में और सुधार की है। पिछली सरकारों के दौरान मिले घावों से बिहार अब उबर रहा है और इस सफर में जनता को अभी भी वही नेतृत्व भरोसेमंद लगता है जिसने परिवर्तन की राह खोली। इसलिए यह कहना अतिशयोक्ति नहीं होगा कि आज भी बिहार के विकास की प्राथमिक उम्मीद नीतीश कुमार से ही बंधी है।

itihukam@gmail.com

नक्सलवाद पर निर्णायक प्रहार

20 नवंबर का संपादकीय 'बचने ना पाएं माओवादी' पढ़ा। देश में नक्सलवाद लंबे समय से आंतरिक सुरक्षा के लिए एक गंभीर चुनौती बना हुआ था। ऐसे में शीर्ष नक्सली कमांडर माड़वी हिड़मा का खात्मा, सरकार और सुरक्षा बलों के लिए एक बड़ी सफलता है। दो दशक से वांछित हिड़मा दंतेवाड़ा और झीरम घाटी में हुए सबसे भीषण हमलों का मास्टरमाइंड था। उसके मारे जाने से नक्सलियों के शीर्ष नेतृत्व को गहरी चोट पहुंची है और संगठन की कमान व रणनीति, दोनों पर गंभीर असर पड़ा है। विशेषज्ञ मानते हैं कि नक्सलवाद के खिलाफ सैन्य कार्रवाई के साथ-साथ विकास उसके खात्मे का सबसे प्रभावी हथियार है। बीते वर्षों में सड़क, बिजली, मोबाइल नेटवर्क, बैंकिंग और रोज़गार जैसी बुनियादी सुविधाओं का विस्तार हुआ है। हाल के वर्षों में नक्सल प्रभावित इलाकों में 12 हजार किलोमीटर से अधिक सड़क निर्माण और एक हजार से ज्यादा बैंक शाखाओं के खुलने ने जमीनी हालात में बड़ा परिवर्तन आया है। लोगों तक लाभकारी योजनाएं सीधे पहुंचने लगी हैं। नतीजतन, नक्सलियों की पकड़ स्वतः कमजोर हुई है। जैसे-जैसे विकास की गति तेज़ होगी, नक्सलवाद की ज़मीन और भी तेजी से सिकुड़ती जाएगी।

चंद्र प्रकाश शर्मा, दिल्ली

नीतीश 10वीं बार मुख्यमंत्री

बिहार में एक बार फिर इतिहास दोहराया है। नीतीश कुमार ने 10वीं बार मुख्यमंत्री पद की शपथ लेकर साबित कर दिया है कि राज्य की राजनीति में उनकी पकड़ उतनी ही मजबूत है जितना दो दशक पहले हुआ करती थी। शपथ ग्रहण समारोह में जिस तरह प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी ने गमछा लहराकर उत्साह जताया उससे वहां उपस्थित लोग भाव-विभोर हो गए। कार्यक्रम में केंद्रीय गृह मंत्री अमित शाह, भाजपा अध्यक्ष जेपी नड्डा और भाजपा के हजारों कार्यकर्ताओं ने भाग लिया। उसने न केवल बिहार की राजनीति बल्कि आने वाले वर्षों के राष्ट्रीय चुनावी समीकरणों को भी संदेश गया है। इस समारोह में डिप्टी सीएम के रूप में सम्राट चौधरी और विजय सिन्हा ने शपथ ली। कुल मिलाकर 26 मंत्रियों की टीम बनी, जिसमें 14 भाजपा कोटे से, आठ जदयू से, लोजपा से दो और हम व रालोमो से एक-एक मंत्री शामिल किए गए। मंत्रिमंडल में एक मुस्लिम मंत्री को भी स्थान दिया गया, जिसे संतुलन और सामाजिक प्रतिनिधित्व की दृष्टि से महत्वपूर्ण माना जा रहा है। नई सरकार के गठन के बाद बिहार के सामने बड़ी चुनौतियां भी हैं। आर्थिक संतुलन जरूरी बन गया है। आय और खर्च को संतुलित करने की कठिन चुनौती मुंह फाड़े खड़ी है। बिहार लंबे समय से आर्थिक रूप से पिछड़ा रहा है। राज्य का राजस्व संग्रह कम, केंद्र पर निर्भरता अधिक और जन कल्याणकारी योजनाओं पर भारी खर्च इसकी आर्थिक संरचना को अस्थिर बनाता है।

कांतिलाल मांडोत, नई दिल्ली

पोस्ट

उपेंद्र कुशवाहा को एक समय जदयू में नीतीश कुमार का उत्तराधिकारी माना जाता था, लेकिन उन्होंने नीतीश जी से कुछ नहीं सीखा। नीतीश जी ने अपने परिवार को पार्टी या सत्ता के आसपास फटकने भी नहीं दिया, लेकिन कुशवाहा जी ने बड़ी लकीर खींचने की जगह भेड़चाल अपनाना ठीक समझा। आशुतोष@bakaitbaaz

नीतीश कुमार के मंत्रिमंडल का शपथ ग्रहण हो गया। अब लोग उसमें जातिगत समीकरणों की पड़ताल करने लगेंगे। मानो मंत्रियों के कामकाज का ढंग और उनकी क्षमताएं जनता के लिए कोई मायने ही न रखती हों।

कमलेश सिंह@kamleshksingh

शेख हसीना को मृत्युदंड की सजा एक बड़े खतरे की घंटी है। भारत को हर हाल में उनकी सुरक्षा सुनिश्चित करनी चाहिए। भारत और दक्षिण एशिया नजीबुल्ला जैसे नृशंस मामले की पुनरावृत्ति नहीं गवारा कर सकते। सुरक्षा, स्थायित्व और सहयोग के मामले में हसीना का रवैया भारत के प्रति बहुत सकारात्मक रहा है। हमें उनकी ओर से मुंह नहीं फेरना चाहिए।

अभिषेक सिंघवी@DrAMSinghvi

जनपथ

जितनी क्लास न कर सके तेजस्वी जी पार,
उससे ज्यादा ले चुके शपथ नितीश कुमार।
शपथ नितीश कुमार पुनः सीएम बन छाए,
राजयोग लिखवाय स्वयं ब्रम्हा से लाए!
'राहु-केतु' सब आय चल गए चालें कितनी,
किंतु न पाए सीट एनडीए के नख जितनी!!

– **ओमप्रकाश तिवारी**

संस्थापक-स्व. पूर्णचन्द्र गुप्त. पूर्व प्रधान संपादक-स्व.नरेन्द्र मोहन. नॉन एग्जीक्यूटिव चेयरमैन-महेन्द्र मोहन गुप्त. प्रधान संपादक-संजय गुप्त, नीतेन्द्र श्रीवास्तव द्वारा जागरण प्रकाशन लि. के लिए डी-210, 211, सेक्टर-63 नोएडा से मुद्रित एवं 501, आई.एन.एस. बिल्डिंग, रफी मार्ग, नई दिल्ली से प्रकाशित, संपादक (दिल्ली एनसीआर)-विष्णु प्रकाश त्रिपाठी
दूरभाष : नई दिल्ली कार्यालय : 011-43166300, नोएडा कार्यालय : **0120-4615800, E-mail: delhi@nda.jagran.com, R.N.I. No 50755/90** समस्त विवाद दिल्ली न्यायालय के अधीन ही होंगे। हवाई शुल्क अतिरिक्त। वर्ष 36 अंक 126

****

कल्पमेधा

जब आप सहर्ष वही बने रहने पर राजी होते हैं, जो आप हैं और तुलना, प्रतिस्पर्धा में नहीं पड़ते हैं, तो आखिर में सभी आपका सम्मान करते हैं और आपको इज्जत देते हैं।

– लाओत्से

जोखिम की हवा

हर वर्ष इस मौसम में ठंड की आहट के साथ ही दिल्ली और राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र की आबोहवा इस कदर प्रदूषित हो जाती है कि उसमें सभी लोगों के लिए अपनी सेहत को दुरुस्त रख पाना ही एक बड़ी चुनौती हो जाती है। मगर विडंबना यह है कि हर अगले वर्ष गहराती जा रही इस मुश्किल पर काबू पाने के ठोस उपाय करने के बजाय जैसी बहुस्तरीय लापरवाही देखी जाती है, वह इस समस्या के असर को और ज्यादा घातक बनाती है। होना यह चाहिए कि जब इन दो-तीन महीनों में वायु प्रदूषण की मुश्किल ज्यादा जटिल शक्ल अख्तियार कर लेती है, तो सबसे पहले स्कूल-कालेज या इस तरह की किसी भी जगह पर बच्चों के खेल से जुड़ी गतिविधियों को लेकर एक सुचिंतित नियम-कायदे बनाए जाएं, ताकि विद्यार्थियों को प्रदूषण की मार से बचाया जा सके। मगर होता है इसके उलट कि कई बार स्कूल-कालेज से लेकर खेल के मैदानों में होने वाली गतिविधियों के लिए जो कार्यक्रम तैयार किए जाते हैं, उनमें प्रदूषण से पैदा होने वाली मुश्किल के पहलू को नजरअंदाज किया जाता है।

जाहिर है, यह शैक्षणिक परिसरों में खेल गतिविधियों के लिए कार्यक्रम का खाका तैयार करने में अदूरदर्शिता का परिचायक है। इसमें यह ध्यान रखना जरूरी नहीं समझा जाता कि जहरीली हवा के बीच बच्चे किस तरह खेलों या अन्य गतिविधियों में हिस्सा ले सकेंगे और उनकी सेहत पर क्या असर पड़ेगा। इसी के मद्देनजर सुप्रीम कोर्ट ने बुधवार को वायु गुणवत्ता प्रबंधन आयोग से कहा कि वह हवा में प्रदूषण के स्तर को ध्यान में रखते हुए दिल्ली सहित राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र में नवंबर और दिसंबर में प्रस्तावित खेल प्रतियोगिताओं को 'सुरक्षित महीनों' तक के लिए स्थगित करने का निर्देश देने पर विचार करे। सुप्रीम कोर्ट के इस निर्देश के बाद आयोग ने दिल्ली, हरियाणा, राजस्थान और उत्तर प्रदेश की सरकारों को पत्र लिख कर विद्यार्थियों की सुरक्षा के लिए नवंबर और दिसंबर महीने में होने वाली शारीरिक मेहनत और खेल प्रतियोगिताओं को स्थगित करने को कहा है। पिछले कुछ वर्षों से देश के कई हिस्सों में ठंड की शुरुआत के साथ ही बादलों के घनीभूत होने की वजह से वायु प्रदूषण की समस्या जटिल हो जाती है। खासतौर पर दिल्ली सहित समूचे राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र में हालत यह हो जाती है कि लोगों के सामने कहीं भी साफ हवा में सांस ले पाना चुनौती होती है। कई बार ऐसा लगता है मानो दिल्ली किसी गैस चेंबर की तरह हो गई है।

इस मसले पर अदालतें कई बार सख्त रुख दर्शा चुकी हैं। मगर अब भी ऐसा लगता है कि संबंधित सरकारी महकमे प्रदूषण की गहराती समस्या के मद्देनजर स्कूल-कालेज आदि जगहों पर खेल प्रतियोगिताओं या बच्चों की शारीरिक मेहनत वाली गतिविधियों का समय टालना जरूरी नहीं समझते। यह स्पष्ट रूप से अदूरदर्शिता है, क्योंकि इन महीनों में दिल्ली-एनसीआर के समूचे इलाके में वायु गुणवत्ता सूचकांक 'बहुत खराब' की श्रेणी में पहुंच जाता है। इसका नतीजा जगजाहिर रहा है कि गहराते प्रदूषण के बीच आम लोगों और खासतौर पर स्कूली बच्चों और किशोरों को एक तरह की सेहत की जंग लड़नी पड़ती है। यह केवल दिल्ली की समस्या नहीं है। देश के कई दूसरे शहरों में भी इन दिनों वायु गुणवत्ता की स्थिति बुरी तरह प्रभावित होती है। इसलिए दिल्ली के अलावा वायु गुणवत्ता सूचकांक के मामले में 'गंभीर' श्रेणी में पहुंचे सभी शहरों में प्रदूषण से उपजी स्थिति से निपटने को लेकर एक व्यापक और ठोस नीति की जरूरत है।

वादे और चुनौतियां

बिहार में चुनावी प्रक्रिया पूरी होने के बाद गुरुवार को नई सरकार का गठन हो गया। पटना के गांधी मैदान में नीतीश कुमार ने मुख्यमंत्री पद की दसवीं बार शपथ ली। इसी के साथ उन्होंने ज्यादा समय तक सत्ता में रहने वाले शीर्ष दस मुख्यमंत्रियों की सूची में जगह बना ली। इसमें दोराय नहीं कि लंबे समय तक सत्ता में रहते हुए नीतीश कुमार ने कई तरह के उतार-चढ़ाव देखे। मगर उनके गठबंधन को इस बार जितना बड़ा जनादेश मिला है, उसके मद्देनजर शायद उतनी ही बड़ी चुनौतियां भी सामने हैं। अपने पिछले कार्यकाल के दौरान नीतीश कुमार ने सुशासन सुनिश्चित करने के दावे करने से लेकर महिलाओं के सशक्तीकरण के लक्ष्य से कई कदम उठाए। चुनाव में मिले समर्थन से ऐसा लगता भी है कि उनकी विश्वसनीयता कायम रही। मगर अब नई सरकार के सामने उन वादों को पूरा करने की चुनौती होगी जो इस बार के चुनावों के दौरान जनता से किए गए। खासतौर पर नीतीश कुमार को कानून-व्यवस्था की स्थिति में गुणात्मक सुधार लाना होगा, क्योंकि पिछले कुछ वर्षों में राज्य में आपराधिक घटनाओं में काफी तेजी आई है और इसके लिए उनके नेतृत्व पर लगातार सवाल उठे।

बिहार में इस बार जो प्रमुख चुनावी मुद्दे रहे, उसके मुताबिक वहां अब आर्थिक और सामाजिक विकास को तेज करने की जरूरत है। चुनाव के दौरान राजग ने अपने संकल्प-पत्र को लेकर जो दावे और वादे किए थे, उसे पूरा करने के लिए अब सरकार को कई मोर्चे पर ठोस नतीजे देने वाले काम करने होंगे। नए रोजगारों के सृजन और लघु उद्योगों को प्रोत्साहन देने से ही बिहार की नई विकास यात्रा शुरू हो सकती है। इस दिशा में बिहार सरकार अगर ईमानदार इच्छाशक्ति के साथ आगे बढ़ती है और रोजगार की नई संभावनाएं खड़ी होती हैं, तो राज्य को पलायन के दंश से मुक्ति मिल सकती है। नीतीश कुमार ने अपने पहले के कार्यकाल में शिक्षा के क्षेत्र में अच्छा काम करने का दावा जरूर किया है, पर अब भी इसमें बड़े सुधार की दरकार है। बिहार पिछड़े राज्यों की श्रेणी से कैसे बाहर निकले, इस पर भी उन्हें मंथन करना होगा।

चमकते शहरों में उपेक्षित बेघर लोग

शहरीकरण की होड़ में गांव खाली हो रहे हैं और शहर बड़े हो रहे हैं, लेकिन गरीबों के लिए जगह सिकुड़ रही है। दिल्ली मास्टर प्लान 2041 के तहत शहर को 'स्मार्ट' बनाने का सपना है, लेकिन इसमें बेघरों का कोई जिक्र नहीं।

देवेंद्रराज सुथार

कड़ाके की ठंड में फुटपाथों पर बिखरी पुरानी रजाइयां, प्लास्टिक की फटी हुई चादरें और कभी-कभार धुंधली आग की लौ शहर की जगमगाती रोशनी से कटी हुई दुनिया जैसी लगती हैं। कहीं से आई कोई छोटी-सी खबर चुपचाप दब जाती है कि कड़ाके की ठंड ने फिर कुछ जिंदगियां लील लीं। ये जिंदगियां उन गुमनाम चेहरों की हैं, जो पुल के नीचे सिकुड़ कर लेटी रहती हैं, रेलवे स्टेशन के कोने में दुबकी रहती हैं या किसी पार्क की टूटी बेंच पर आखिरी सांस लेती हैं, लेकिन ये मौतें केवल मौसमी हादसे नहीं हैं। ये हमारी व्यवस्था की तल्ख सच्चाई हैं, समाज की संवेदनहीनता का क्रूर आईना हैं।

कुछ समय पहले एक आंकड़ा 'सेंटर फार होलिस्टिक डेवलपमेंट' ने जुटाया था कि नवंबर 2024 से जनवरी 2025 के बीच महज 56 दिनों में दिल्ली में 474 बेघर लोगों की ठंड से मौत हो गई। यह आंकड़ा जिला स्तर के डेटा, अस्पताल के दस्तावेज और सर्वे पर आधारित था। राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग ने इस पर स्वतः संज्ञान लेते हुए दिल्ली प्रशासन से विस्तृत रपट मांगी। मगर वास्तविक संख्या इससे कहीं ज्यादा हो सकती है। फुटपाथ पर पड़ी लाशों को अक्सर अज्ञात शव मान कर दफना दिया जाता है। विशेषज्ञों का अनुमान है कि 80 फीसद ऐसी मौतें बिना किसी पहचान के गुम हो जाती हैं। राष्ट्रीय अपराध रिकार्ड ब्यूरो के अनुसार, 2019 से 2023 तक पूरे देश में शीतलहर से 3,639 मौतें हुईं, जिनमें बेघर और गरीब तबका सबसे ज्यादा शिकार रहा। वर्ष 2024 में ही पूरे भारत में 3,238 मौतें हुईं, जो 2022 में हुई मौतों से 18 फीसद ज्यादा हैं। यानी शीतलहर अब पहले से अधिक घातक हो रही है।

यह संकट दिल्ली तक सीमित नहीं है। कानपुर में जनवरी 2023 के दौरान एक हफ्ते में ही 98 लोगों की मौत हो गई थी। वर्ष 2024 में उत्तर प्रदेश में ही 1,200 से ज्यादा लोगों की मौत हुई। 'नेशनल फोरम फार होमलेस हाउसिंग राइट्स' की रपट में यह जानकारी दी गई। लखनऊ, आगरा, पटना और जयपुर जैसे शहरों में भी यही कहानी दोहराई गई। एनएचआरसी ने अक्तूबर 2025 में 19 राज्यों और चार केंद्र शासित प्रदेशों को चेतावनी जारी की, जिसमें बेघरों, नवजातों, बुजुर्गों और कमजोर वर्गों को ठंड से बचाने के लिए कदम उठाने को कहा गया, लेकिन ये चेतावनियां कागजों पर धरी रह गईं।

वर्ष 2011 की जनगणना के अनुसार, देश के शहरी क्षेत्रों में नौ लाख 38,348 लोग बेघर थे। मगर आज यह संख्या डेढ़ करोड़ पार कर चुकी है। दिल्ली में ही करीब तीन से चार लाख बेघर लोग हैं, जो मुख्य रूप से प्रवासी मजदूर, रिक्शा चालक, सब्जी विक्रेता, घरेलू कामगार और बुजुर्ग हैं। अगस्त 2024 में कराई गई गिनती में 1,56,369 लोग रात ग्यारह बजे से सुबह 5.30 तक सड़कों पर सोते पाए गए। ये वे लोग हैं जो दिनभर शहर को चला रहे होते हैं। वे सुबह चार बजे से रिक्शा चलाते हैं, बाजारों में फल बेचते हैं, घरों में झाड़ू लगाते हैं, लेकिन शाम ढलते ही इनके लिए कोई जगह नहीं बचती। एक रपट के मुताबिक, महामारी के बाद प्रवासी मजदूरों की संख्या में 30 फीसद की बढ़ोतरी हुई, जिनमें से आधे से ज्यादा शहरी झुग्गियों या खुले आकाश तले रहने के लिए मजबूर हैं। आर्थिक मंदी, नौकरियों की

कमी और ग्रामीण पलायन ने इन्हें सड़कों पर धकेल दिया।

ये लोग हमारे बीच के ही हैं। एक समय वे किसानों के बेटे थे, मजदूर थे, छोटे व्यापारी थे। मगर सूखा पड़ने से और बाढ़, कर्ज तथा महंगाई ने उन्हें शहरों की ओर धकेल दिया। शहरीकरण की होड़ में गांव खाली हो रहे हैं।

> **सरकार बेघर लोगों की मुश्किल को दूर करने का दावा करती हैं, लेकिन जमीन पर वे खोखली साबित हो रही हैं। प्रधानमंत्री आवास योजना (पीएमएवाई) का नारा था- सबको घर। वर्ष 2015 में शुरू हुई यह योजना 2022 तक सभी को पक्का घर देने का वादा लेकर आई, लेकिन 2025 आ गया और योजना का विस्तार कर पीएमएवाई-अर्बन 2.0 लाया गया। दूसरी ओर बेघरों की संख्या घटने के बजाय बढ़ रही है। सरकार दावा करती है कि हर 20 मिनट में 150 घर बन रहे हैं, लेकिन ये आंकड़े कागजों के हैं। असल में बेघरों को इन घरों तक पहुंच ही नहीं मिलती।**

शहर बड़े हो रहे हैं, लेकिन गरीबों के लिए जगह सिकुड़ रही है। दिल्ली मास्टर प्लान 2041 के तहत शहर को स्मार्ट बनाने का सपना है, लेकिन इसमें बेघरों का कोई जिक्र नहीं। उल्टे, झुग्गी-झोपड़ियां तोड़ी जा रही हैं। कुछ समय पहले यमुना किनारे सैकड़ों झुग्गियों पर बुलडोजर चला दिया गया। लोग मलबे पर सोने लगे। बच्चे ठिठुरे, महिलाएं रोईं, लेकिन विकास का पहिया रुका नहीं। एक सर्वे के अनुसार, दिल्ली में 40 फीसद बेघर लोग झुग्गी तोड़ने के बाद सड़कों पर आ गए। मौसम विभाग चेतावनी देता है, एनएचआरसी निर्देश देता है, संगठन आवाज उठाते हैं, लेकिन प्रशासन सोता रहता है।

सरकार की योजनाएं इस संकट को दूर करने का दावा करती हैं, लेकिन जमीन पर वे खोखली साबित हो रही हैं। प्रधानमंत्री आवास योजना (पीएमएवाई) का नारा था – सबको घर। वर्ष 2015 में शुरू हुई यह योजना 2022 तक सभी को पक्का घर देने का वादा लेकर आई, लेकिन 2025 आ गया और इस योजना का विस्तार कर पीएमएवाई-अर्बन 2.0 लाया गया। दूसरी ओर बेघरों की संख्या घटने के बजाय बढ़ रही है। सरकार दावा करती है कि हर 20 मिनट में 150 घर बन रहे हैं, लेकिन ये आंकड़े कागजों के हैं। असल में बेघरों को इन घरों तक पहुंच ही नहीं मिलती। सितंबर 2025 में मंत्रालय ने राज्यों के साथ समीक्षा की, लेकिन समय पर केंद्रीय सहायता जारी न होने से प्रगति ठप है। यह योजना गरीबों को सशक्त बनाने का दावा करती है, लेकिन वास्तव में भवन निर्माता कंपनियों की जेब भर रही है।

रैन बसेरे इस समस्या का तात्कालिक हल माने जाते हैं, लेकिन इनकी हालत देख कर बेहद निराशा होती है। 'दिल्ली अर्बन शेल्टर इम्प्रूवमेंट बोर्ड' के अनुसार, शहर में 325 रैन बसेरे हैं, जिनकी कुल क्षमता 16,338 लोगों की है। लेकिन 'विंटर एक्शन प्लान 2024-25' के तहत 197 स्थायी बसेरों में से मात्र 82 कार्यरत हैं, क्षमता सिर्फ 7,092 की है। बाकी 'पोर्टा केबिन' और तंबुओं में चल रहे हैं। दिल्ली सरकार ने 250 नए अस्थायी बसेरे खोलने का वादा किया। लाहौरी गेट या सराय काले खां जैसी जगहों पर भीड़ इतनी कि लोग फर्श पर सोते हैं। महिलाओं के लिए 17 बसेरे हैं, लेकिन असुरक्षित। एक रपट के अनुसार, यहां चोरी, नशाखोरी और हिंसा आम है। मास्टर प्लान के मुताबिक 330-350 स्थायी रैन बसेरे होने चाहिए थे, लेकिन अभी 80 ही हैं। यह कमी केवल उदासीनता नहीं, बल्कि पारदर्शिता के अभाव को दिखाती है।

हमारा समाज, जो 'वसुधैव कुटुंबकम' की बात करता है, सड़क पर ठिठुरते व्यक्ति को देख कर नजरें फेर लेता है। राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग की रपट कहती है कि बेघरों को भिखारी या नशेड़ी समझा जाता है। कोई सर्वे नहीं होता कि कितने लोग खुले में सो रहे हैं। प्रशासन अनुमान पर चलता है। कानपुर की 98 मौतें टाली जा सकती थीं, अगर समय रहते बेघरों का पता लगा लिया जाता। वैश्विक नजरिए से देखें, तो न्यूयार्क या लंदन में रैन बसेरों में चिकित्सा और बुनियादी सुविधाएं देना अनिवार्य है। मगर भारत में? महज एक एक कंबल और चाय।

समाधान संभव है, अगर इच्छाशक्ति हो। सबसे पहले, हर शहर में एक व्यापक सर्वेक्षण किया जाना चाहिए, ताकि बेघर लोगों की सटीक संख्या, उनकी जरूरतों का पता लगाया जा सके। इसके बाद रैन बसेरों का विस्तार करना चाहिए। रात में गश्त की जाए, ताकि ठिठुरते लोगों को बचा कर सुरक्षित स्थानों पर ले जाया जा सके। कंबल, गर्म कपड़े और सूप वितरण की व्यवस्था नियमित रूप से हो। प्रशासन को जवाबदेह बनाया जाए, हर जिले में एक नोडल अधिकारी नियुक्त हो। वहीं एनएचआरसी के निर्देशों को सख्ती से लागू करना होगा। कानूनी रूप से जीने का अधिकार मौलिक है और गरिमापूर्ण जीवन का अर्थ सिर पर छत और भोजन से भी जुड़ा है।

ठहराव के बीच

दुनिया मेरे आगे

पवन शर्मा

हम एक ऐसे समय में जी रहे हैं जहां हर पल कुछ न कुछ बदल रहा है, लेकिन इस बदलाव की गति ने हमारी चेतना को लगभग सुन्न कर दिया है। खबरें आती हैं, हिलाती हैं और अगले ही पल किसी और सनसनी के नीचे दब जाती हैं। इस तेजी से भागती दुनिया में सबसे दुर्लभ चीज है ठहराव, और शायद सबसे जरूरी भी। देश में चुनावी शोर होता ही रहता है। हर गली-कूचे में नारों की गूंज, मीडिया में बहसों की गरमी, सोशल मीडिया पर आरोप-प्रत्यारोप की झड़ी लगी रहती है। लेकिन अगर हम इन आवाजों के बीच कुछ देर चुप बैठकर सोचें, तो पाएंगे कि आम आदमी की आवाज कहीं खो-सी गई है। वास्तव में जिसे लोकतंत्र का केंद्र होना चाहिए, वही सबसे हाशिये पर है। गांवों में पानी नहीं है, शहरों में हवा नहीं है, किसान आज भी कर्ज के बोझ तले आत्महत्या कर रहे हैं और युवा बेरोजगारी के दुश्चक्र में फंसे हुए हैं,। लेकिन चुनावी बहसें मंदिर-मस्जिद, जाति-धर्म, राष्ट्रवाद और विरोधियों की गालियों के इर्द-गिर्द घूमती हैं। हम जैसे देखना ही भूल गए हैं कि राजनीति का मतलब लोगों की जिंदगी बेहतर करना है।

इस सबके बीच, ऐसा लगता और दिखता है कि तकनीक ने हमारी दुनिया को व्यापक स्तर पर जोड़ा है। मगर सच्चाई यह है कि तकनीकी दुनिया का विस्तार जैसे-जैसे होता गया है, उतना ही हम अलग-थलग भी हुए हैं। हम घंटों मोबाइल, कंप्यूटर या टीवी के स्क्रीन पर टिके रहते हैं, लेकिन पास बैठे लोगों से आंख मिलाने का हमारे पास वक्त नहीं होता। हम आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस यानी कृत्रिम बुद्धिमत्ता, अंतरिक्ष तकनीकी और जैव तकनीकी के युग में हैं, लेकिन मनुष्यता का सबसे बड़ा प्रश्न आज भी वही है- सहानुभूति। सवाल है कि क्या हम एक-दूसरे के दुख को महसूस करना भूल गए हैं? दिल्ली की किसी झुग्गी में बैठी एक मां, जो दिन भर घरों में झाड़ू-पोंछा कर अपना पेट पालती है, आज महंगाई की मार से दो जून की रोटी भी मुश्किल से जुटा पा रही है। उसकी पीड़ा और अभाव की हालत किसी 'विकास दर' में दर्ज नहीं होती। न ही वह किसी आधुनिक और मशहूर ट्रेन की तस्वीर में शामिल है। मगर असल भारत वहीं सांस लेता है- गर्मी के मौसम की झुलसती दोपहर में, टूटी हुई चप्पलों के साथ।

कभी-कभी लगता है कि जैसे हम एक बड़े भ्रम में जी रहे हैं। एक विकासशील देश होने का भ्रम, एक महान संस्कृति के वाहक होने का भ्रम, एक विश्वगुरु बनने की आकांक्षा का भ्रम, लेकिन क्या हमने अपने भीतर झांककर देखा है? सार्वजनिक रूप से भी बोली जाने वाली हमारी भाषा कितनी आक्रामक हो गई है। असहमति का मतलब दुश्मनी, आलोचना का मतलब राष्ट्रद्रोह और सवाल पूछने का मतलब साजिश बन गया दिखता है। यह केवल भारत की कहानी नहीं है। पूरी दुनिया जैसे किसी अस्थायी असंतुलन से गुजर रही है। यूक्रेन में युद्ध अब पुराना हो चला है, गाजा में बच्चों की लाशें अब आंकड़ों में बदल चुकी हैं। जलवायु संकट सिर पर है, लेकिन औद्योगिक राष्ट्र अपने मुनाफे से आगे कुछ सोचने को तैयार नहीं। अफ्रीका की भूख, एशिया की बेरोजगारी और अमेरिका की बंदूकें- ये सब मिलकर एक थके हुए, डरे हुए और भविष्यविहीन मानवता की तस्वीर पेश करते हैं।

सब तरफ निराशा की धुंध दिखती है, लेकिन इसी अंधकार के बीच कुछ रोशनी भी है। एक बच्चा जब स्कूल में दाखिला पाता है, एक लड़की जब बिना डर के साइकिल चला पाती है, एक किसान जब अपने खेत से उपज लेकर लौटता है, तो एक छोटी-सी आशा जन्म लेती है। ये छोटी आशाएं ही बड़े बदलाव की जमीन तैयार करती हैं। अब सवाल यह है कि हम किस ओर जाना चाहते हैं? क्या हम केवल एक उपभोक्ता समाज बनकर संतुष्ट रहेंगे, जहां मनुष्य केवल एक ग्राहक है? या फिर हम एक ऐसा समाज बनाएंगे या बनाना चाहते हैं, जहां हर जीवन की गरिमा हो?

> **सब तरफ निराशा की धुंध दिखती है, लेकिन इसी अंधकार के बीच कुछ रोशनी भी है। एक बच्चा जब स्कूल में दाखिला पाता है, एक लड़की जब बिना डर के साइकिल चला पाती है, एक किसान जब अपने खेत से उपज लेकर लौटता है, तो एक छोटी-सी आशा जन्म लेती है। ये छोटी आशाएं ही बड़े बदलाव की जमीन तैयार करती है।**

हमें इस बात पर फिर से विचार करना होगा कि लोकतंत्र केवल पांच साल में एक बार वोट डालने का नाम नहीं है। यह रोजमर्रा की भागीदारी, सवाल करने की संस्कृति और जवाबदेही की मांग से ही जीवित रहता है। और अगर हम अपने अधिकारों के प्रति सजग नहीं होंगे, तो इतिहास गवाह है कि सत्ताएं धीरे-धीरे नागरिकों के मुंह बंद करना जानती हैं। इसलिए जरूरी है कि हम ठहरें और देखें कि हमारे आसपास क्या हो रहा है। क्या हम वाकई बेहतर हो रहे हैं या बस बेहतर दिखने की कोशिश में लगे हैं? देश से लेकर दुनिया भर में आंकड़ों का जो चकाचौंध परोसा जा रहा है, क्या वह जमीनी स्तर पर भी वास्तव में अपनी तेज जितना ही प्रभाव दिखा पा रहा है?

दुनिया आगे जा रही है या कहें कि आगे जाती हुई दिख रही है, लेकिन हमें यह तय करना होगा कि यह आगे बढ़ना किस दिशा में है। क्या दुनिया का 'आगे जाना' मानवीय मूल्यों के साथ है या फिर ये मूल्य पीछे छूट रहे हैं, नजरअंदाज किए जा रहे हैं या कहीं इसके विरुद्ध भी तो रास्ता नहीं तैयार किया जा रहा है? बिना मूल्यों के, बिना करुणा के, बिना आत्मनिरीक्षण के कोई भी प्रगति खोखली होती है। और खोखली इमारतें, चाहे कितनी भी ऊंची हों, एक दिन ढह जाती हैं। हम अभी भी संभल सकते हैं।

अनुमानों के बरक्स

बिहार विधानसभा चुनाव के हालिया नतीजों ने राजनीति में नई हलचल पैदा कर दी है। राजग को मिला प्रचंड बहुमत उन कयासों को ध्वस्त कर गया, जिनमें कहा जा रहा था कि चुनाव कांटे का होगा। परिणामों ने साबित कर दिया कि यह मुकाबला बराबरी का नहीं था। राजद, कांग्रेस और वीआइपी जैसे दलों का गठबंधन ऐसा परास्त हुआ कि उससे उबरने में उन्हें लंबा समय लगेगा। प्रशांत किशोर के लिए भी यह परिणाम एक सख्त सबक है कि लोगों को चुनाव जितवाने और खुद चुनाव जीतने के बीच जमीन-आसमान का फर्क होता है। इन नतीजों का असर सिर्फ बिहार तक सीमित नहीं रहेगा। पहली बार भाजपा राज्य की सबसे बड़ी पार्टी बन कर उभरी है, वहीं जद (एकी) ने भी पिछली बार की तुलना में शानदार वापसी की है। नीतीश कुमार पांचवीं बार अपने नेतृत्व में सरकार बनाने में सफल रहे, जो उन्हें देश के उन चुनिंदा नेताओं में शामिल करता है जिन्होंने लगातार अपनी प्रासंगिकता बनाए रखी है। वास्तविकता यह है कि राजग का प्रत्येक कदम लाभकारी साबित हुआ और महागठबंधन का लगभग हर दांव उलटा पड़ा।

– विभूति बुपक्या, दिल्ली

समाज की सेहत

विचारों की गुणवत्ता केवल व्यक्तिगत स्तर पर ही नहीं, समाज पर भी असर डालती है। जब नागरिक विचारशील, सहिष्णु और संवेदनशील होते हैं, संवाद जीवंत रहता है। मगर जब विचारों की जगह शोर, असहमति की जगह आक्रोश और समझ की जगह पूर्वाग्रह हावी हो जाता है, तो समाज का स्वास्थ्य कमजोर पड़ने लगता है। कार्यालय में, जहां हर किसी का दृष्टिकोण है, किसी निर्णय पर विचार करने के लिए समय लेना और सहकर्मियों की राय समझना दिखाता है कि विचारों की गुणवत्ता केवल बुद्धि का नहीं, अनुभव और सहानुभूति का परिणाम भी है। परिवार में, बच्चों और बुजुर्गों के विचारों को समझना, उनकी भावनाओं और अपेक्षाओं को ध्यान में रखना हमारी सोच को परिष्कृत करता है। विचारों की गुणवत्ता का संकेत यह भी है कि वे परिवर्तनशीलता को स्वीकार करते हैं। नया अनुभव, ज्ञान और संवाद विचारों को चुनौती देते हैं। हम लचीले नहीं हैं तो विचार रूढ़िवादी हो जाते हैं।

– अमन सिंह गौर, वाराणसी

सावधानी की जरूरत

बिहार विधानसभा चुनाव के दौरान सोशल मीडिया पर भ्रमित करने वाली खबरों से लोगों का विश्वास उस पर से उठता जा रहा है। हालांकि इस पर अंकुश लगाना मुश्किल है, लेकिन सोचने की बात है कि सोशल मीडिया पर कई खबरें ऐसी भी होती थीं, जिससे अशांति फैलने की आशंका गहराने लगती थी। ऐसे में अगर संबंधित पार्टी के समर्थन या मतदाताओं में इसकी तत्काल प्रतिक्रिया होने लगे, तब क्या होगा? लिहाजा अब लोगों को सचेत हो जाना चाहिए कि वे विश्वसनीय स्रोत से मिली खबरों पर ही यकीन करें। व्यक्ति विशेष द्वारा प्रसारित खबर में उनकी अपनी राजनीतिक निष्ठा हो सकती है। वैसे इस मामले में यह कहना अतिशयोक्ति नहीं कि प्रिंट मीडिया की विश्वसनीयता बरकरार है। लिहाजा माध्यमिक कक्षा या उसके बाद के छात्रों को समाचारपत्र पढ़ने के लिए प्रेरित करना भविष्य में उन्हें सच्ची और झूठी खबरों के बीच अंतर को परखना सिखा सकता है।

– मुकेश कुमार मनन, पटना

हिंसा के बजाय

देश में नक्सलवाद लंबे समय से आंतरिक सुरक्षा के लिए एक गंभीर चुनौती बना हुआ था। ऐसे में शीर्ष नक्सली कमांडर माड़वी हिड़मा का खात्मा सरकार और सुरक्षा बलों के लिए एक बड़ी रणनीतिक सफलता है। लगभग दो दशकों से वांछित हिड़मा दंतेवाड़ा के मारे जाने से नक्सलियों के शीर्ष नेतृत्व पर गहरी चोट पहुंची है और संगठन की कमान और रणनीति, दोनों पर गंभीर असर पड़ा है। सरकारी एजंसियां दावे के साथ कह रही हैं कि यह कार्रवाई देश को अगले वर्ष 31 मार्च तक नक्सली हिंसा से पूरी तरह मुक्त करने के लक्ष्य को और करीब ले आई है। सुरक्षा बलों के लगातार अभियानों में इस वर्ष तीन सौ से अधिक नक्सली ढेर किए जा चुके हैं। वहीं, सरकार ने हथियार छोड़ कर मुख्यधारा में लौटने वालों के लिए आत्मसमर्पण की नीति को खुला रखा है, जिससे कई भटके युवा हिंसा का रास्ता छोड़ कर मुख्यधारा में लौट रहे हैं।

– चंद्र प्रकाश शर्मा, दिल्ली

हमें लिखें, हमारा पता : edit.jansatta@expressindia.com | chaupal.jansatta@expressindia.com

https://t.me/AllNewsPapersPaid1

{ संपादकीय }

नई दिल्ली, शुक्रवार 21 नवम्बर 2025
संस्थापक-सम्पादक : स्व. मायाराम सुरजन

देश सेवा- नौकरी के साथ भी, नौकरी के बाद भी

सात अगस्त 2025 को भारतीय राजनीति में एक अभूतपूर्व घटना हुई थी। नेता प्रतिपक्ष राहुल गांधी ने एक प्रेस कांफ्रेंस बुलाकर 1 घंटे 11 मिनट तक कर्नाटक की महादेवपुरा विधानसभा सीट पर 22 पन्नों का प्रजेंटेशन दिया था। राहुल गांधी ने आरोप लगाया था कि इस सीट पर 6.5 लाख वोट में से 1 लाख वोटों की चोरी हुई है। कांग्रेस के शोध में यहां एक लाख के करीब गलत पते और एक ही पते पर थोक मतदाताओं और नकली मतदाताओं का पता चला। जिसका पूरा खुलासा राहुल गांधी ने किया था। महाराष्ट्र और हरियाणा चुनावों में मतदाता सूची में हेर फेर करके भाजपा ने चुनाव जीता है, यह आरोप तो विपक्ष पहले से लगा रहा था। लेकिन यह पहली बार था जब किसी एक सीट का इस तरह पूरा कच्चा-चिट्ठा मीडिया के जरिए देश के सामने रखा था।

राहुल गांधी के इस खुलासे के फौरन बाद ही चुनाव आयोग ने इस पर फेक और मिसलीडिंग यानी फर्जी और भ्रामक होने का ठप्पा तो लगा दिया, साथ ही एक प्रेस कांफ्रेंस कर मुख्य चुनाव आयुक्त ज्ञानेश कुमार ने राहुल गांधी को एक सप्ताह के भीतर हलफनामा पेश करने कहा था। जबकि राहुल गांधी का कहना था कि वे कोई हलफनामा पेश नहीं करेंगे, उन्होंने अपनी बात सबूतों के साथ रखी है, अब दारोमदार चुनाव आयोग पर है कि वह इसे या तो गलत साबित करे या फिर अपनी गलती माने। लेकिन चुनाव आयोग ने ऐसा कुछ नहीं किया।

अगस्त के बाद सितम्बर और इसी महीने की 4 तारीख को राहुल गांधी ने दो और प्रेस वार्ताएं की और उन दोनों में फिर से इसी तरह की मतदाता सूची की गड़बड़ी को दिखाया, जिसके बूते भाजपा ने चुनाव जीता। राहुल गांधी केवल मुंहजबानी आरोप नहीं लगा रहे, बल्कि सबूतों के साथ उसे मीडिया के सामने रख रहे हैं। अपनी तीनों प्रेस वार्ताओं में राहुल मंच पर अकेले ही थे और पत्रकारों को खुला अवसर दिया गया कि वे राहुल गांधी से प्रश्न-प्रतिप्रश्न करें, उन पर तीखे सवाल दागें, उन पर आरोप लगाएं कि कांग्रेस कई राज्यों में हार चुकी है, इसलिए ऐसे आरोप लगा रही है। यानी पत्रकारों के पास पूरा मौका था कि वे अपने सवालों से राहुल गांधी को ऐसा घेरें कि उन्हें जवाब देना मुश्किल हो जाए। लेकिन ऐसा एक ही सूरत में हो सकता है जब राहुल गांधी के पास कोई जवाब न हो, या अपने बचाव में सामने रखने के लिए तथ्य न हों। आंकड़ें, तथ्य और सबूत तीनों से लैस होकर ही राहुल गांधी ने पत्रकारों का सामना किया, इसलिए अब तक किसी ने भी उन्हें गलत साबित नहीं किया। जबकि भाजपा ने चुनाव आयोग पर लगते हर आरोप पर आगे बढ़कर सफाई दी और इसमें राहुल गांधी पर निशाना साधा कि वे संवैधानिक संस्था को बदनाम कर रहे हैं।

अब भाजपा का परोक्ष साथ देते हुए 272 लोगों का एक खुला खत सामने आया है। खुद को नागरिक समाज यानी सिविल सोसाइटी का नुमांइदा बताने वाले इस खत के हस्ताक्षरकर्ताओं में सेवानिवृत्त जज, नौकरशाह, सैन्य अधिकारी शामिल हैं। खत में कहा गया कि चुनाव आयोग भारत की चुनाव प्रणाली का सबसे अहम स्तंभ है। उस पर बार-बार सवाल उठाने से जनता का भरोसा कमजोर होता है और लोकतंत्र को नुकसान पहुंचता है। इस खुली चिट्ठी में लिखा है कि पहले सेना, फिर न्यायपालिका और संसद पर सवाल उठाए गए, और अब चुनाव आयोग को निशाना बनाया जा रहा है। यह एक 'खतरनाक चलन' बन गया है, जिसमें चुनावी हार को छिपाने के लिए संस्थाओं की साख पर हमला किया जा रहा है। राहुल गांधी ने चुनाव आयोग पर 'वोट चोरी' का आरोप लगाया, उसे 'गद्दार' तक कहा और अधिकारियों को धमकाया, लेकिन इसके बावजूद उन्होंने कोई आधिकारिक शिकायत या हलफनामा पेश नहीं किया। यह सिर्फ 'राजनीतिक नाराजगी' है, जिसका कोई ठोस आधार नहीं है। जब विपक्षी पार्टियां जीतती हैं, तब चुनाव आयोग पर कोई आरोप नहीं लगता, लेकिन हार मिलते ही आयोग को दोषी ठहराना शुरू हो जाता है। यह 'राजनीतिक अवसरवाद' है। चिट्ठी में लिखा है कि टीएन शेषन और एन गोपालस्वामी जैसे पूर्व मुख्य चुनाव आयुक्तों ने आयोग को बेहद मजबूत और निष्पक्ष संस्था बनाया है, इसलिए आज उस पर बेबुनियाद हमले लोकतंत्र के लिए नुकसानदायक हैं। इस चिट्ठी में अपील की गई है कि सभी भारतीय चुनाव आयोग और अन्य संवैधानिक संस्थाओं पर विश्वास बनाए रखें। फर्जी वोटर, गैर-नागरिक और अवैध प्रवासियों को वोटर लिस्ट से बाहर रखना देश की सुरक्षा और लोकतंत्र दोनों के लिए जरूरी है।

इस खुली चिट्ठी की सामग्री, उसकी भाषा और चयनित तरीके से राहुल गांधी पर हमला बोलना दिखा रहा है कि हस्ताक्षर करने वाले भले ही सेवानिवृत्त लोग रहे हों, लेकिन यह सब भाजपा के दिशा-निर्देश पर हो रहा है। वैसे सवाल है कि इन सेवानिवृत्त लोगों को केवल राहुल गांधी के आरोप ही क्यों दिख रहे हैं। पूर्व मुख्य चुनाव आयुक्त एस वाय कुरैशी, राज्यसभा सांसद और वरिष्ठ वकील कपिल सिब्बल, प्रशांत भूषण, परकला प्रभाकर (निर्मला सीतारमण के पति) समेत कई और लोगों ने चुनाव आयोग पर ऐसे ही आरोप लगाए हैं। कांग्रेस के अलावा आरजेडी, टीएमसी, सपा, वामदल, डीएमके, शिवसेना, एनसीपी ने भी मतदाता सूची में गड़बड़ी के आरोप लगाए हैं। तो फिर अकेले राहुल गांधी को क्यों गलत दिखाया जा रहा है कि वे देश का नुकसान कर रहे हैं। वैसे तो चुनाव आयोग को खुद इतना सक्षम होना चाहिए कि वह अपने ऊपर लग रहे आरोपों को गलत साबित करे और उनका माकूल जवाब दे। लेकिन यहां कभी भाजपा और कभी ऐसे सिविल सोसाइटी के नुमाइंदे आयोग की ढाल बन कर आ रहे हैं। राहुल गांधी ने जब भी वोट चोरी के आरोप लगाए तो उन्हें कहा गया कि अपनी शिकायत लेकर सुप्रीम कोर्ट क्यों नहीं जाते। क्या यही बात यहां सिविल सोसाइटी के इन लोगों को नहीं कही जानी चाहिए कि आप पीआईएल दायर करिए। फिर अदालत ही तय करेगी कि किसकी रक्षा किससे करनी है। वैसे इन सेवानिवृत्त लोगों को हमारी सलाह है कि दिल्ली का प्रदूषण, ट्रेनों की बदहाली, एसआईआर के काम में कथित बोझ से आत्महत्या करते बीएलओ, आतंकवाद, घुसपैठ, असुरक्षित महिलाएं और न जाने कितने तरह की समस्याएं देश में हैं, जिनका समाधान हो तो देश का वाकई भला हो जाए। क्यों न इन्हें अपना अनुभव, शक्ति और सामर्थ्य वहां लगाना चाहिए। ताकि नौकरी के साथ भी और नौकरी के बाद भी देशसेवा का जज्बा बना रहे।

वैसे इस चिट्ठी के बाद अब 175 प्रमुख हस्तियों ने बिहार चुनाव, चुनाव आयोग और एसआईआर को लेकर खुला पत्र लिखा है। जिसमें कहा गया, हम देश के नागरिक पूरी तरह पारदर्शी, जवाबदेह, मुक्त और निष्पक्ष चुनावों की मांग करते हैं। हम बिहार चुनाव परिणाम को धोखाधड़ी मानते हैं और विपक्ष से भी यही मांग करते हैं कि वह इन परिणामों को स्वीकार न करे।

महिला विकास उद्देश्य या वोट पाना

चुनाव घोषणा से ठीक पहले बिहार की डेढ़ करोड़ महिलाओं के खाते में दस-दस हजार रुपए भेजने को इस बार के अपूर्व जनादेश का बड़ा कारण माना जा रहा है। ऐसा फैसला करने वाले भी यही मानकर इस योजना को ले ये और बाद में यह सफाई भी दी गई कि यह धन वापस नहीं करना और अगर इससे शुरू हुआ धंधा ठीक लगा तो दो लाख रुपए तक की राशि और उपलब्ध कराई जाएगी। विपक्ष इसे सीधे-सीधे मतदाताओं को घूस देना बता रहा है और संभवत: की दर्जन मामले अदालतों में पहुंच भी चुके है। जब विपक्षी महागठबंधन को इस कदम के असर का अंदाजा होना शुरू हुआ तो तेजस्वी यादव ने अपनी सरकार बनाने पर अगले 14 जनवरी को हर महिला के खाते में तीस-तीस हजार अर्थात महिला सम्मान राशि को बढ़ाकर ढाई हजार करने और साल भर का पैसा एक साथ देने की घोषणा की। उन्होंने हर परिवार में एक सदस्य को सरकारी नौकरी देने जैसा असंभव वायदा भी किया पर कोई फायदा नहीं हुआ। नीतीश सरकार ने ऐसी तत्काल लाभकारी दर्जन भर योजनाओं में राशि बढ़ाकर पहले से ही एक ज्यादा बड़ी जमीन तैयार कर ली थी। बल्कि कई लोग इसे नीतीश कुमार के राजनैतिक स्वभाव से अलग मानते हुए इसके लिए मोदी और शाह अर्थात भाजपा को श्रेय देते हैं। वैसे भी डबल इंजन की सरकार चल ही रही है।

अब भले इस बदलाव का श्रेय अकेले नरेंद्र मोदी और भाजपा को न दिया जाए लेकिन 'डायरेक्ट बेनीफिट' योजनाओं का चलन ब्राजील और अर्जेन्टीना के देखादेखी सारी दुनिया में बढ़ा है और अपने यहां यूपीए सरकार के समय ही इसकी शुरुआत हुई। पहले वृद्धावस्था पेंशन और विधवा पेंशन जैसी योजनाएं आई और फिर अचानक सबको बहनों/माताओं से प्यार उमड़ा। मध्य प्रदेश इस मामले में आगे हुआ और उसके मुख्यमंत्री शिवराज सिंह चौहान तो खुद को मामा कहलाकर खुश होने वाले संभवत: पहले नेता होंगे। धीरे-धीरे हर राज्य के चुनाव में महिलाओं को सीधे नकद देने वाली योजनाओं और वायदों की लाइन लग गई। बल्कि स्थिति यह हो गई कि कई जगह सरकार बन जाने पर भी वायदे पूरे करने में दिक्कत होने लगी क्योंकि वित्तीय संसाधन जवाब देने लगे। महाराष्ट्र का उदाहरण सबसे बड़ा है जबकि कर्नाटक में भी कुछ समय तक ऐसा हुआ था। निस्संदेह ग्रामीण और गरीब महिलाओं के खाते में धन देना काफी लाभदायक रहा है- चुनाव की दृष्टि से भी। यह सवाल बड़ा है कि महिलाओं की यह स्थिति बनी कैसे? इसके लिए जो आर्थिक, सामाजिक और सांस्कृतिक कारण हैं उनके दुरुस्त करने में नेताओं, पार्टियों और सरकारों की रुचि क्यों नहीं है। ईश्वरचंद विद्यासागर, गांधी, लोहिया और जयप्रकाश सरीखे नेताओं में औरतों की स्थिति बदलने में सफलता पाई जबकि उनके पास न सत्ता थी न संसाधन!

अरविन्द मोहन

> नीतीश कुमार की ज्यादा चर्चित मुख्यमंत्री साइकिल और वर्दी योजना हुई और इसे क्रांति जैसा माना गया। फिर उन्होंने पंचायतों में महिलाओं को पचास फीसदी आरक्षण देने का फैसला किया जिससे बिहार के पंचायतों में औरत प्रमुखों का अनुपात पचास फीसदी से ज्यादा हो गया। और फिर इसी क्रम में उन्होंने अपने दूसरे कार्यकाल में महिलाओं से किया यह वायदा भी पूरा कर दिया कि बिहार में पूर्ण शराबबंदी रहेगी।

इस चुनाव में एनडीए को अपूर्व जीत दिलाने वाले नीतीश कुमार के भक्त मानते हैं कि यह दस हजारी योजना या चुनाव पूर्व की रेवड़ियों में उनकी बहुत आस्था हो न हो गांधी, लोहिया और जयप्रकाश के विचारों और कार्यक्रमों में उनकी बहुत आस्था है। इसी के चलते उन्होंने 2005 में सत्ता हाथ में आने के बाद से ही लड़कियों और औरतों के लिए एक पर एक बड़े कार्यक्रम शुरू किए थे। इसलिए उनको सिर्फ इस बार के चुनाव जिताऊ और एक हद तक अनीतिक फैसलों से नहीं जोड़ना चाहिए। जब वे सत्ता में आये थे तब बिहार में स्कूल से बाहर रह गए बच्चों की संख्या सबसे ज्यादा थी। सत्ता में आते ही उन्होंने मदन मोहन झा जैसे जुनूनी अधिकारी और शांता सिन्हा के एनजीओ की सहायता से जो बिहार शिक्षा परियोजना शुरू की, उसमें हर टोले में जगजगी केंद्र के माध्यम से लड़कियों को पढ़ाना शुरू हुआ और फिर स्कूलों में दाखिले का अभियान चला जिस क्रम में बिहार में निरक्षरों की संख्या तो लगभग समाप्त हो गई और स्कूली बच्चों की संख्या पौने तीन करोड़ तक पहुंच गई। दोपहर का भोजन योजना चलाने में भी दिक्कत आई पर अंतत: यह सब बच्चों को खाना देने और करीब दो लाख ग्रामीण महिलाओं को रसोइया का काम दिलाने वाला साबित हुआ।

नीतीश कुमार की ज्यादा चर्चित मुख्यमंत्री साइकिल और वर्दी योजना हुई और इसे क्रांति जैसा माना गया। फिर उन्होंने पंचायतों में महिलाओं को पचास फीसदी आरक्षण देने का फैसला किया जिससे बिहार के पंचायतों में औरत प्रमुखों का अनुपात पचास फीसदी से ज्यादा हो गया। और फिर इसी क्रम में उन्होंने अपने दूसरे कार्यकाल में महिलाओं से किया यह वायदा भी पूरा कर दिया कि बिहार में पूर्ण शराबबंदी रहेगी। तभी महिलाओं की चुनावी भागीदारी बढ़ने लगी और पहली बार वोट देने वाली महिलाऑ का अनुपात पुरुषों से ऊपर हुआ। इस क्रम में नरेंद्र मोदी का चुनाव भागीदार बनने का लाभ भी हुआ जो बेटी बचाओ और बेटी पढ़ाओ जैसे नारे के साथ शौचालय निर्माण और रसोई गैस के सिलिन्डर बांटने जैसे प्रयोग करने लगे थे। लोहिया के एक अन्य शिष्य रघुवंश प्रसाद सिंह ने ग्रामीण विकास मंत्री होने के बाद ऐसी योजनाओं की पहल की जिनकी लोहिया के भाषणों में प्रमुखता थी। मोदी जी के पहले तक भाजपा को दंगा-फसाद की पार्टी मानकर एक फीसदी कम महिलाएं वोट देती थी। अब भाजपा और एनडीए को ज्यादा वोट मिलने लगा है।

जिस मौके पर आकर लड़कियों की पढ़ाई, लोकतान्त्रिक भागीदारी बढ़ाने और कुछ मदद से उनके आगे आने की शुरुआत होनी चाहिए थी वह प्रगति रुक गई है। लंबे समय से नीतीश राज में बिहार में उच्चतर शिक्षा व्यवस्था चौपट हुई है। अच्छे घरों की लड़कियां तो दिल्ली, पुणे और कर्नाटक पहुंचकर पढ़ाई कर लेती हैं पर गरीब घरों की लड़कियों के लिए सिपाही भर्ती के अलावा कम ही विकल्प होते हैं। और जदयू समेत किसी भी दल ने महिला नेतृत्व को बढ़ावा नहीं दिया है। सुषमा स्वराज और सुमित्रा महाजन के बाद भाजपा को भी कोई ढंग की महिला नेता नहीं मिली है और वसुंधरा राजे केन्द्रीय नेतृत्व को पसंद नहीं आतीं। बिहार में बीस साल में एक भी ढंग की महिला नेता को आगे आने का अवसर नहीं दिया गया। यहां बार-बार गांधी याद आते हैं जिनको चंपारण पहुंचने पर महिलाओं के बीच काम करने में दिक्कत हुई तो कस्तूरबा के अलावा कोई न मिला। विज्ञापन देकर दो-तीन महिलाओं को बुलाया गया और सहयोगी लोगों की पत्नियों को जिम्मा देकर आगे किया गया। लेकिन मात्र तेरह साल बाद जब गांधी ने नमक सत्याग्रह किया तो जेल जाने वाली औरतों की संख्या पच्चीस हजार थी। इतनी महिलाएं आज तक किसी क्रांति, किसी आंदोलन में जेल नहीं गई हैं। सन् 1942 में तो कमलदेवी, अरुणा आसफ अली, उषा मेहता और सुचेता कृपलानी जैसी लड़कियों ने नेतृत्व ही किया। नोआखाली में गांधी का साथ ज्यादा महिलाओं ने दिया। इसलिए बिहार और नीतीश कुमार की महिला क्रांति पर यह शक होता है कि यह महिलाओं को आगे बढ़ा रहा है या सिर्फ उनके वोट का इंतजाम है।

डिजिटल गार्ड हो गये फेल, साइबर सुरक्षा की कमजोरी हुई उजागर

■ के रवींद्रन

साइबर-सिक्योरिटी फर्म और वेब-इंफ्रास्ट्रक्चर प्रदाता कंपनी द्वारा की गई रुकावट एक गंभीर याद दिलाती है कि किस प्रकार रक्षक भी कमजोर हैं। 19 जुलाई 2024 को क्राउड स्ट्राइक ने अपडेट से जुड़ा ब्लैकआउट किया था, जिससे कुल मिलाकर 5.4अरब डालर से ज़्यादा का नुकसान हुआ। ट्रांसपोर्ट फर्म, बैंक और अस्पताल ठप हो गए क्योंकि दुनिया भर में सिस्टम क्रैश हो गए और ऑपरेशन रुक गए। अब 18 नवम्बर 2025 कोदुनिया भर में आउटेज के लिए, क्लाउडफ्लेयर, जो इसी तरह के ऑपरेशन में लगा हुआ था, जिम्मेदार था क्योंकि वेब-सर्विस प्रोवाइडर ने हजारों वेबसाइटों को ऑफ लाइन कर दिया, कुछ मर्जर और एरिक्विजिशन प्रोसेस को रोक दिया और एक इंफ्रास्ट्रक्चर लेयर पर ग्लोबल बिजनेस की निर्भरता को उजागर कर दिया।

ये दोनों घटनाएं हमारी डिजिटल नेटवर्क की दुनिया की एक बड़ी उलझन को उजागर करती हैं: साइबर-खतरों के रखवालों को ही अब खुद को बचाने की ज़रूरत है। इनमें से पहली घटना सिक्योरिटी वेंडर के फ्लैगशिप प्लेटफॉर्म से जुड़ी थी, जिसने माइक्रोसॉफ्ट विंडो एनवायरनमेंट में एक गलत सॉफ्टवेयर अपडेट डाल दिया था। उस अपडेट की वजह से लाखों डिवाइस क्रैश हो गए या काम करना बंद कर दिया, जिससे बड़ी एयरलाइंस, हेल्थकेयर सिस्टम और फाइनेंशियल इंस्टीट्यूशन पर असर पड़ा। अकेले एक बड़ी एयरलाइन ने कई दिनों तक हजारों फ्लाइट्स कैंसिल करने के बाद करीब आधा अरब डॉलर का नुकसान बताया। इसका असर तुरंत डाउनटाइम से कहीं ज़्यादा था: हॉस्पिटल मरीज़ों के हेल्थ-रिकॉर्ड्स को एक्सेस नहीं कर पा रहे थे, पेमेंट प्रोसेस नहीं हो पा रहे थे, और ऑपरेशनल कंट्रोल रूम बंद हो गए थे। घटना के बड़े लेवल ने दिखाया कि इंफ्रास्ट्रक्चर सॉफ्टवेयर में एक भी खराबी पूरे सेक्टर में सिस्टम-वाइड पैरालिसिस का कारण बन सकती है।

दूसरी घटना वेब-इंफ्रास्ट्रक्चर प्रोवाइडर से जुड़ी थी, जिसका नेटवर्क ग्लोबल वेब-ट्रैफिक का लगभग पांचवां हिस्सा हैंडल करता है। 'अजीब ट्रैफिक' में बढ़ोतरी से इंटरनल डिग्रेडेशन हुआ, जिसके नतीजे में सोशल-मीडिया नेटवर्क, एआई-टूल्स और स्ट्रीमिंग सर्विस जैसे बड़े प्लेटफॉर्म पर एरर मैसेज आए। यूज़र-ट्रैकिंग टूल्स में हजारों रिपोर्ट सामने आईं, और जबकि कंपनी ने खराबी को ठीक करने के लिए जल्दी कदम उठाए, बीच का नुकसान दिखाता है कि कैसे कंसन्ट्रक्टेड डिपेंडेंसी ग्लोबल ऑपरेशन को कमजोर कर सकती है। दोनों ही मामलों में कंपनियों को सुरक्षा के लिए बनाया गया था—एक साइबर-खतरों से, दूसरी वेब-इंफ्रास्ट्रक्चर में रुकावट से—लेकिन उनकी नाकामियों ने साबित कर दिया कि कोई भी कंपनी सुरक्षित नहीं है।

इन घटनाओं से कई सबक सीखे जा सकते हैं। पहला, लचीलापन और रिडंडेंसी पूरी तरह से वेंडर्स पर नहीं डाली जा सकती। जो ऑर्गनाइज़ेशन सिंगल-वेंडर सॉल्यूशन या इंफ्रास्ट्रक्चर के मोनोकल्चर पर बहुत ज़्यादा निर्भर हैं, अगर वह वेंडर फेल हो जाता है तो वे खतरे में पड़ जाते हैं। उदाहरण के लिए, जो एयरलाइंस सिक्योरिटी वेंडर के प्लेटफॉर्म पर बहुत ज़्यादा निर्भर थीं, वे खुद को विवश पाती थीं क्योंकि मैनुअल फ़ॉलबैक सिस्टम नहीं थे या काफ़ी नहीं थे।

दूसरा, जब किसी वेंडर को खास तौर पर गलत हमलों को रोकने का काम सौंपा जाता है, तब भी उस वेंडर की अपनी मज़बूती को मिशन-क्रिटिकल माना जाना चाहिए। यह मानना कि साइबर-डिफेंडर फेल होने से परे है, अब सही नहीं है। तीसरा, सिस्टमिक रिस्क इंफ्रास्ट्रक्चर कंट्रोल के कंसट्रेशन में होता है। जब एक फर्म के पास बहुत ज़्यादा ट्रैफिक या प्रोटेक्शन होता है—चाहे वह वेब-ट्रैफिक का 20 परसेंट हो या बड़ी कंपनियों का 60परसेंट—तो सिस्टम के फेल होने के तरीके सिर्फ अलग-अलग नहीं, बल्कि ग्लोबल हो जाते हैं।

चौथा, सही टेस्टिंग सिस्टम, फेज़ में रोल-आउट और ट्रांसपेरेंट कम्युनिकेशन बुनियादी हैं। सिक्योरिटी-सॉफ्टवेयर मामले में कंपनी ने माना कि उसका अपडेट डिप्लॉयमेंट गलत हो गया था; रिपल डैमेज एक कॉन्फ़िगरेशन फ़ाइल में खराबी के बाद हुआ जिससे कैस्केडिंग मशीन क्रैश होने लगीं। वेब-ट्रैफ़िक प्रोवाइडर का पोस्ट-मॉर्टम भी इसी तरह असामान्य ट्रैफ़िक में बढ़ोतरी की ओर इशारा करता है जिसे उसके सिस्टम बिना गलती के एब्ज़ॉर्ब नहीं कर सके। लेकिन सुधार के लिए कार्रवाई बाद में की जाती है।

सबसे ज़रूरी बात, इंसानी पहलू अब भी केन्द्रीय बना हुआ है। कई संगठनों या कम्पनियों ने साइबर-सिक्योरिटी और इंफ्रास्ट्रक्चर सर्विसेज़ को बिज़नेस-कंटिन्यूटी से जुड़े स्ट्रेटेजिकलिंचपिन के बजाय कमोडिटी सॉल्यूशन के तौर पर देखा। यह बात कि एक साइबर-सिक्योरिटी वेंडर के एक अपडेट ने एयरलाइन फ्लीट को कई दिनों तक जमीन पर खड़ा कर दिया, यह दिखाता है कि फेल-सेफ प्रोटोकॉल, अल्टरनेटिवरूटिंग, मैनुअल ओवरराइड और इंसिडेंट-प्लेबुक या तो गायब थे या उनकी ठीक से टेस्टिंग नहीं की गई थी। वेब-ट्रैफ़िक फ़ेलियर में, बड़े पैमाने पर यूज़र-इम्पैक्ट से पता चलता है कि कई सेक्टर्स को अपनी सर्विस-चेन डिपेंडेंसीज़ के बारे में काफ़ी जानकारी नहीं थी— कुछ को शायद यह एहसास नहीं हुआ होगा कि उनकी कितनी फ़ंक्शनैलिटी उस प्रोवाइडर के नेटवर्क से गुज़रती थी जब तक कि वह गायब नहीं हो गया।

> पॉलिसी और कॉर्पोरेट-गवर्नेंस के नज़रिए से इसके मतलब जानना बहुत ज़रूरी हैं। बोर्ड और सीनियर एग्जीक्यूटिव को थर्ड-पार्टी साइबर-प्रोवाइडर्स और इंफ्रास्ट्रक्चर सर्विसेज़ को सिर्फ़ वेंडर्स के तौर पर नहीं, बल्कि उन ज़रूरी डिपेंडेंसीज़ के तौर पर मानना चाहिए जिन पर कड़ी निगरानी की ज़रूरत है। ड्यू-डिलिजेंस और वेंडर-रिस्क मैनेजमेंट को कॉन्ट्रैक्ट वाले सर्विस लेवल एग्रीमेंट्स से आगे बढ़कर वेंडरफ़ेलियर के लिए सिनेरियो-प्लानिंग तक बढ़ाना होगा।

पॉलिसी और कॉर्पोरेट-गवर्नेंस के नज़रिए से इसके मतलब जानना बहुत ज़रूरी हैं। बोर्ड और सीनियर एग्जीक्यूटिव को थर्ड-पार्टी साइबर-प्रोवाइडर्स और इंफ्रास्ट्रक्चर सर्विसेज़ को सिर्फ़ वेंडर्स के तौर पर नहीं, बल्कि उन ज़रूरी डिपेंडेंसीज़ के तौर पर मानना चाहिए जिन पर कड़ी निगरानी की ज़रूरत है। ड्यू-डिलिजेंस और वेंडर-रिस्क मैनेजमेंट को कॉन्ट्रैक्ट वाले सर्विस लेवल एग्रीमेंट्स से आगे बढ़कर वेंडरफ़ेलियर के लिए सिनेरियो-प्लानिंग तक बढ़ाना होगा। रेगुलेटर्स और इंश्योरेंस कंपनियों को भी अपने फ्रेमवर्क को बेहतर बनाने की ज़रूरत होगी ताकि ऐसी सर्विस के एक्सपोज़र को कम किया जा सके। आइस-प्रोवाइडर की खराबी को साफ तौर पर मापा और बताया जाता है। सिक्योरिटी-सॉफ्टवेयर की खराबी से कई इंडस्ट्रीज़ में अरबों का इंश्योर्ड नुकसान हुआ। संगठन या कंपनियां यह मान सकते हैं कि वे बाहरी हमलों से सुरक्षित हैं, लेकिन अगर प्रोटेक्टर फेल हो जाता हैं, तो इसका असर भी उतना ही नुकसानदायक हो सकता है।

साइबर-डिफेंस में 'ट्रस्ट बट वेरिफाई' के दौर को 'प्रोटेक्टर को वेरिफाई' में बदलना होगा। दूसरे शब्दों में, किसी वेंडर पर भरोसा उस वेंडर की रेज़िलिएंस, इंसिडेंट रिकवरी और फॉल्ट आइसोलेशन की क्षमता के इंडिपेंडेंट असेसमेंट से सपोर्टेड होना चाहिए। कोई भी सर्विस प्रोवाइडर जिसकी खराबी फाइनेंशियल-ट्रांज़ैक्शन, हॉस्पिटल सिस्टम या ग्लोबल सप्लाई-चेन को डिसेबल कर सकती है, उसे एंड-पॉइंट पर उन सिस्टम की तरह ही जांच की ज़रूरत होती है। इसके अलावा, नेटवर्क वाले सिस्टम के डिज़ाइन में यह मानना होगा कि बेसिक डिफेंडर भी फेल हो सकते हैं: फ़ॉलबैक आर्किटेक्चर, लेयर्ड डिफेंस, इंडिपेंडेंट डिटेक्शन और रिस्पॉन्स क्षमताएं डिज़ाइन का ज़रूरी हिस्सा होनी चाहिए—बाद में नहीं जोड़ी जानी चाहिए।

आखिरकार, ये दो हाई-प्रोफाइल फेलियर इस बात पर ज़ोर देते हैं कि मॉडर्न बिज़नेस का आर्किटेक्चर उतना ही मज़बूत है जितना कि उसकी सबसे कमज़ोर बड़ी कड़ी। ऐसी दुनिया में जहां खतरे का माहौल लगातार बदलता रहता है, और जहां सर्विस देने वाले अपने अंदरूनी बग या ट्रैफिक की गड़बड़ियों के शिकार हो सकते हैं, यह सोच कि सुरक्षा पक्की है, एक भ्रम साबित हुई है। अब पहरेदारों की सुरक्षा करनी होगी। चिंतन प्रक्रिया को 'हम बाहरी हमलावरों से खुद को कैसे बचाएं?' से बदलकर 'अगर हमारा रक्षक गिर जाए तो हम खुद को कैसे बचाएं?' पर लाना चाहिए।

ललित सुरजन की कलम से

पत्रकारिता की मिशनरी परंपरा और पतन

मुझे दो मुख्य कारण समझ में आते हैं जिन्होंने 1975 के आसपास, शायद कुछ पहले से, पत्रकारिता को प्रभावित करना प्रारंभ किया। एक तो मुद्रण तकनीकी में हो रहे विकास के चलते अखबारों की पूंजीगत लागत व आवश्यकता निरंतर बढ़ने लगी थी जिसने छोटे और मझोले अखबारों पर प्रतिकूल प्रभाव डाला। दूसरे, इसी दरम्यान नवपूंजीवादी ताकतें मजबूत होने लगीं थीं, बहुराष्ट्रीय कंपनियों का दबदबा कायम होने लगा था, और वे विभिन्न देशों की आंतरिक राजनीति में अधिक खुलकर हस्तक्षेप करने लगी थीं। अमेरिका का सैन्य-औद्योगिक गठजोड़ बांग्लादेश निर्माण के समय से इंदिरा गांधी से क्षुब्ध था और भारत में उनका साथ देने पूंजीवादी शक्तियाँ भी आगे आ गई थीं। करेले पर नीम चढ़ने की कहावत यहाँ चरितार्थ हुई। कल तक जिसे हम जूट प्रेस के नाम से जानते थे, वह अब कारपोरेट मीडिया में कायाकल्प होने की ओर बढ़ने लगा था।

(तद्भव के पत्रकारिता विशेषांक में प्रकाशित लेख)

https://lalitsurjan.blogspot.com/2020/09/blog-post_5.html

पावन प्रसंग

आत्मप्रज्ञा का जागरण

इस संसार की अनुपम, सबसे कीमती धरोहर है-अपने अंत:करण से सशक्त एवं जीवन से आरोग्य एवं तेज का प्रस्फुटन होना। यह तभी संभव है, जब मनुष्य अपनी आत्मप्रेरणा को पहचान ले; क्योंकि गिरने के बहुत साधन हो सकते हैं, परंतु उठने का एक ही, वह है आत्मविगलन।

इसके बिना वह समर्थता नहीं आती जो कि हमें चाहिए। जीवन का स्वरूप ही परिवर्तित हो जाता है, यदि हम यह समझ लें कि अपने भीतर एक महान शक्ति का निवास स्थान है। जो रुकना, बहकना या बिखरना नहीं जानती, जो पदार्थ की गुलामी से कोसों दूर है, जिसे जीवन ने हमें किसी विशेष उद्देश्य से दिया है।

यह शक्ति है आत्मा की वह पुकार कि उसे सतत ऊंचा उठना है, इस संसार के झंझावातों के मध्य कभी भी विचलित नहीं होना है। जब यह हो जाएगा तो मनुष्य एक पारदर्शी चेतना का धनी कहलाएगा, जिसके द्वारा सभी प्रकार की उन्नति संभव है।

हम यह भूल जाते हैं कि हमें बल देने वाला कौन है? वह कौन है जो हमारी सभी आकांक्षाओं के तले मुखरित हो रहा है, जिसके द्वारा मनुष्य का रूप अपने अतीव सौंदर्य को प्राप्त हो रहा है-वह है आत्मा। जिसने उसकी प्राप्ति कर ली उसे संसार में कुछ भी प्राप्त करना शेष नहीं रह जाता है।

आत्मा की अमर सत्ता को अपने कार्यों द्वारा अभिव्यक्ति प्रदान करने को ही साधना कहते हैं। इस अत्यंत ही महान उद्देश्य के लिए जीवन मिला है और मनुष्य उसे किन प्रयोजनों में, जड़ताग्रस्त, अंधकार से प्रेरित ओछे कार्यक्रमों में लगा देता है।

जब तक हमारा अंतर्मन शुद्ध, निष्पाप एवं हर प्रकार की संकीर्णता से परे नहीं हुआ, हममें जीवन को नवरूप में सुगठित करने की प्रेरणा नहीं उभरी, हम पूर्ववत मान्यताओं और चाल-चलन को त्यागने में समर्थ नहीं हो सके, तब तक जीवन का प्रकाश हमसे वंचित ही रहेगा; क्योंकि हम एक अधूरी चेतना के धनी होंगे, जिसने अभी तक उठना ही नहीं सीखा है।

जिसे सच में जाग्रति चाहिए वह अपने बंधनों को पूर्ण रूप से त्यागना सीखे, इसके उपरांत किसी महान प्रेरणा के आशीष में अपने जीवन को संवारने एवं अपने उद्देश्य की प्राप्ति की दिशा में बढ़े।

जो व्यक्ति यह कर सका, उसे जीवन में कभी भी निराश होने की आवश्यकता नहीं; क्योंकि इसके उपरांत मनुष्य का चिंतन उस अलौकिक आभा एवं तदनुरूप गति को प्राप्त होता है, जिसे कभी ऋषियों ने स्वीकारा था, संतों ने जिसका गुणगान किया तथा जो कभी भारत की मूल परंपरा का अनिवार्य अंग रहा था।

इसे ही आत्मप्रज्ञा कहते हैं, जो समर्पण से, विश्वास से और धैर्यपूर्वक अपने जीवन के अनुसंधान से प्राप्त होती है। इसके उपरांत जीवन साधारण नहीं रह जाता, उसके चरम उत्कर्ष को हमारा हृदय प्रतिपल बेचैन रहने लगता है, अंतरंग का विषय-व्यापार थमने लगता है तथा हमें लघु से विराट बनने का अवसर प्राप्त होता है।

-अखंड ज्योति

आपके पत्र

वंदे मातरम राष्ट्रवाद की आध्यात्मिक प्रेरणा

बंकिमचंद्र चट्टोपाध्याय द्वारा रचित यह गीत उनकी प्रसिद्ध कृति आनंदमठ (1882) में शामिल किया गया था। 'वंदे मातरम' ने भारतीय स्वतंत्रता आंदोलन को एक भावनात्मक, सांस्कृतिक और आध्यात्मिक दिशा दी। यह गीत भारतीय राष्ट्रीयता का वह ज्योति-पुंज बन गया जिसने अंधकारमय औपनिवेशिक काल में प्रकाश फैलाया। आज भी जब इसकी धुन बजती है, तो प्रत्येक भारतीय के भीतर एक अलौकिक गर्व, श्रद्धा और कृतज्ञता का भाव जाग उठता है। यह केवल अतीत की स्मृति नहीं, बल्कि भविष्य के लिए प्रेरणा का स्रोत है—जो हमें यह सिखाती है कि जब तक 'वंदे मातरम' की भावना जीवित है, भारत की आत्मा अमर है।

इसने राष्ट्रवाद को केवल राजनीतिक विचार नहीं, बल्कि एक भक्ति-भावना में परिवर्तित किया। बंग-भंग आंदोलन से लेकर क्रांतिकारी संघर्षों तक यह गीत स्वतंत्रता सेनानियों की प्रेरणा बना। आज भी यह राष्ट्रीय सम्मान, एकता और स्वाभिमान का प्रतीक है। 'वंदे मातरम' ने भारत की आत्मा को जागृत किया और यह सदा हमारी राष्ट्रीय चेतना की धड़कन बना रहेगा।

'वंदे मातरम' ने औपनिवेशिक भारत में राष्ट्रवाद के बीज बोए और उन्हें एक ऐसे वृक्ष में परिवर्तित किया जिसकी छाया में भारत ने स्वतंत्रता का फल पाया। इसने यह सिद्ध किया कि जब कोई राष्ट्र अपनी संस्कृति, अपनी भाषा और अपनी मातृभूमि को आत्मा के रूप में पहचान लेता है, तो कोई भी बाहरी शक्ति उसे लंबे समय तक दास नहीं बना सकती। यह गीत भारतीय स्वतंत्रता का नहीं, बल्कि भारतीय आत्मजागरण का गीत है।

इस गीत ने भारतीय जनमानस को यह सिखाया कि स्वतंत्रता केवल अधिकार नहीं, बल्कि उत्तरदायित्व भी है—अपनी संस्कृति, अपनी मातृभूमि और अपने समाज के प्रति। 'वंदे मातरम' में गूंजती आवाज़ केवल एक कालखंड की नहीं, बल्कि युगों-युगों तक प्रेरणा देने वाली पुकार है। यह पुकार हमें बार-बार स्मरण कराती है कि राष्ट्र की सच्ची शक्ति उसकी एकता, उसकी आस्था और उसके स्वाभिमान में निहित है।

भारतीय स्वतंत्रता संग्राम के दौरान जब भी आंदोलन कमजोर पड़ता, 'वंदे मातरम' की गूंज लोगों में फिर से ऊर्जा भर देती। यह गीत लोगों के दिलों में इतना गहराई से बस गया कि यह स्वतंत्रता की प्रतीक ध्वनि बन गया। भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के अधिवेशनों में इसे गाना परंपरा बन गई। महात्मा गांधी ने इसे भारत की आत्मा का गीत कहा। हालांकि कुछ धार्मिक समुदायों ने इसकी कुछ पंक्तियों पर आपत्ति की, फिर भी अधिकांश भारतीयों के लिए यह राष्ट्र की भावना का सर्वोच्च प्रतीक बना रहा।

स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद जब भारत का संविधान तैयार हुआ, तब 'वंदे मातरम' को राष्ट्रीय गीत के रूप में मान्यता दी गई, जबकि 'जन गण मन' को राष्ट्रीय गान के रूप में स्वीकृत किया गया। संविधान सभा की चर्चाओं में यह स्पष्ट किया गया कि 'वंदे मातरम' का सम्मान राष्ट्रगान के समान रहेगा, क्योंकि इसने भारतीय स्वतंत्रता संघर्ष में अनुपम योगदान दिया था। आज भी जब यह गीत गाया जाता है, तो उसकी ध्वनि में वही जोश, वही भक्ति और वही मातृभाव झलकता है जो स्वतंत्रता सेनानियों के समय था। यह गीत हमें याद दिलाता है कि राष्ट्र केवल राजनीतिक सीमाओं का नाम नहीं, बल्कि एक जीवंत संस्कृति, एक साझा भावना और एक आत्मा है जो हमें एक साथ जोड़ती है।

डॉ. प्रियंका सौरभ

प्रकाशक, मुद्रक : राजीव रंजन श्रीवास्तव द्वारा पत्रकार प्रकाशन प्रा. लि. के लिए 506, आई.एन.एस. बिल्डिंग, 9, रफी मार्ग, नई दिल्ली से प्रकाशित एवं बीएफएल इंफोटेक लि., सी 9, सेक्टर-3, नोएडा से मुद्रित। सम्पादक : राजीव रंजन श्रीवास्तव, (पी.आर.बी. एक्ट के तहत समाचार चयन के लिए जिम्मेदार)। आर.एन.आई. नं. DELHIN/2008/24216. दिल्ली कार्यालय :फोन: 011-23718195,23357784, फैक्स: 011-43581404, नोएडा कार्यालय: फोन: 0120-4114404 फैक्स: 0120-4273770
ई-मेल: deshbandhudelhi@gmail.com वेब: www.deshbandhu.co.in

https://t.me/AllNewsPapersPaid

चिंतन

बिहार में एक बार फिर सुशासन बाबू सरकार

बिहार में एक बार फिर से सुशासन राज का श्रीगणेश हो गया। मिस्टर क्लीन नाम से प्रसिद्ध नीतीश कुमार 10वीं बार बिहार के मुख्यमंत्री बन गए हैं। गुरुवार को उन्होंने पद की शपथ ली। मुख्यमंत्री के साथ 26 मंत्रियों ने भी शपथ ली है। जमुई से जीतीं श्रेयसी सिंह समेत 10 नए चेहरों को नीतीश कैबिनेट में जगह दी गई है। चुनाव से पहले नितीश कुमार के स्वास्थ्य को लेकर तरह- तरह की बातें होती रहीं, लेकिन उन्होंने चुनाव प्रचार के दौरान सैकड़ों रैलियां करके दिखा दिया कि वे पूरी तरह से तैयार हैं। जेडीयू ने 2020 में मिली अपनी सीटों की संख्या लगभग दोगुनी करते हुए 85 सीटें हासिल कीं। नतीजों ने नीतीश की उस क्षमता को भी दिखाया, जिसमें वे गठबंधन को अपना वोट ट्रांसफर कर सकते हैं। चाहे वह किसी भी गठबंधन में हों। हालांकि यह क्षमता लालू प्रसाद और तेजस्वी, मायावती, मुलायम सिंह यादव और अखिलेश यादव और चिराग पासवान में भी है, लेकिन नीतीश को जो बात विशिष्ट बनाती है, वह यह है कि वे अपने साथ जुड़ी सभी जातियों के बीच यह कर दिखाते हैं। नीतीश की अपनी जाति, कुर्मी की संख्या बेहद कम है, लेकिन यह तथ्य उनके लिए कोई बाधा नहीं रहा है, ईबीसी, गैर-यादव ओबीसी और महिलाओं का गठबंधन बनाने में उनकी राजनीतिक प्रतिभा को दर्शाता है। अगड़ी जातियों में भी उनके प्रति कोई द्वेष नहीं है। ऐसे राज्य में जहां जातिगत समीकरण गहरे हैं, यह उन्हें एक खास स्थान दिलाता है। नीतीश अपने विकास कार्यों और नेक नियति के लिए जाने जाते हैं। राजनीति में इतनी लंबी पारी गुजारने के बाद भी विरोधियों के पास उनके खिलाफ बोलने के लिए कुछ नहीं है। न तो कोई भ्रष्टाचार का मामला और न ही फेराफेरी की गुंजाइश। इसीलिए उन्हें मिस्टर क्लीन भी कहा जाता है। उनके मंत्रियों पर आरोप लगते हैं, लेकिन किसी ने भी सीएम पर भ्रष्टाचार की उंगली नहीं उठाई। राजद प्रमुख लालू यादव के उलट, उन पर अपने बेटे को बढ़ावा देने का आरोप भी नहीं लगाया जा सकता। लालू-राबड़ी के शासनकाल के बाद बिहार को फिर से पटरी पर लाने के लिए उनके शासन और नीतिगत प्रयासों की व्यापक रूप से सराहना की जाती है। बिजली की नियमित उपलब्धता, जो अब समाज के बड़े हिस्से के लिए लगभग मुफ्त है, राजमार्गों और ग्रामीण सड़कों का जाल और बेहतर कानून-व्यवस्था ने उन्हें प्यार दिलाया। वे बिहार के चहेते बन गए। उनके द्वारा किए गए विकास के चर्चे पूरे बिहार ही नहीं देशभर में होते हैं। पहली बार वह मार्च 2000 में सीएम बने, लेकिन बहुमत न होने के कारण सिर्फ सात दिन बाद ही इस्तीफा देना पड़ा। 2005 में उन्होंने लालू प्रसाद के वर्चस्व को खत्म कर एनडीए सरकार बनाई। 2010 के चुनाव में भी उन्हें बड़ी जीत मिली, जिसके बाद वह फिर मुख्यमंत्री बने। हालांकि 2014 लोकसभा चुनाव में जदयू की हार के बाद उन्होंने पद छोड़ दिया। इसके बाद उन्होंने जीतन राम मांझी को सीएम बनाया, लेकिन फरवरी 2015 में एक बार फिर खुद मुख्यमंत्री की कुर्सी संभाल ली। नवंबर 2015 के विधानसभा चुनाव में महागठबंधन को भारी सफलता मिली और उस सरकार में भी नीतीश ही मुख्यमंत्री रहे। 2017 में राजद से टकराव के बाद उन्होंने फिर एनडीए सरकार बनाई। 2020 चुनाव के बाद वे फिर से मुख्यमंत्री बने। 2022 में 8 बार सीएम बने और फिर 2024 में मुख्यमंत्री पद की शपथ ली। ये अपने आप में रिकार्ड है और नीतीश इसके नायक। उम्मीद की जानी चाहिए कि वे अपनी सुशासन बाबू की छवि को और बेहतर निखारेंगे।

दिवस विशेष

डॉ.रमेश ठाकुर

सूचना संसार पर 'टेलीविजन' ने जमाया अंगद की तरह कदम

चाहें सूचनाएं हों या मनोरंजन के साधन, दोनों ही धड़े अब टेलीविजन के इर्द-गिर्द ठहर गए हैं। सूचनाओं के प्लेटफार्म बेशक बहुतेरे हों, जैसे अखबार, रेडियो, सोशल मीडिया आदि, टीवी ने दर्शकों का सर्वाधिक हिस्सा अपनी ओर घुमा लिया है। आज 'विश्व टेलीविजन दिवस' है जो सालाना नवंबर की 21 तारीख को समूचे संसार में मनाया जाता है। वर्ष 1996 में संयुक्त राष्ट्र महासभा ने इस मकसद के साथ घोषित किया, ताकि निर्णय लेने में टेलीविजन के बढ़ते प्रभाव को पहचाना जा सके और शांति, सुरक्षा और आर्थिक व सामाजिक मुद्दों पर ध्यान केंद्रित करने में इसकी भूमिका को सराहा भी जा सके। टेलीविजन दर्शकों को उनकी पसंद का सारा मनचाहा मैटेरियल घर बैठे-बिठाए परोस रहा है। इसलिए कह सकते हैं कि टेलीविजन ने अंगद की भांति देश-दुनिया की तमाम सूचनाओं और मनोरंजनों के साधनों को पहुंचाने और विचारों के आदान-प्रदान के तौर पर अपने पांव मजबूती से जमा लिए हैं। भारत में टेलीविजन प्रसारण की शुरुआत दिल्ली से 15 सितंबर, 1959 को हुई, जो कुछ वर्षों में तेजी से रफ्तार पकड़ी। टीवी के आविष्कार की जहां तक बात है, तो एक प्रसिद्ध स्कॉटिश इंजीनियर थे जिन्होंने टीवी को पहली मर्तबा खोजा। नाम था 'जॉन लोगी बेयर्ड'। जॉन ने वर्ष-1924 में टीवी का श्रीगणेश किया। फिर 1927 में संसार में पहले वर्किंग टेलीविजन का निर्माण हुआ, जिसे सितंबर की पहली तारीख और सन 1928 को प्रेस के सामने प्रस्तुत किया गया। इसके बाद टीवी ने अपना ऐसा प्रभाव छोड़ा, जिसके सामने समूचा संसार नतमस्तक हो गया। वैसे, कलर टेलीविजन के आविष्कार का भी श्रेय महान वैज्ञानिक 'जॉन लोगी बेयर्ड' को ही जाता है जिन्होंने 1928 में टीवी के सफेद पर्दे को रंगीन में बदला था। उसके बाद से रंगीन टीवी का प्रचलन आरंभ हुआ। रेडियो ने जहां आवाज और अखबार ने पठनीय माध्यमों से सूचनाओं को पंख लगाए हैं। वहीं, टेलीविजन ने संचार को दृश्यात्मकता तौर पर आंखें प्रदान कर दी हैं। टेलीविजन की पकड़ सिर्फ मनोरंजन तक नहीं है, बल्कि, समाचार, विचार, शिक्षा और जागरूकता जैसे असंख्य क्षेत्रों में भी अभूतपूर्व कीर्तिमान स्थापित किए हैं। टीवी आमजनों की विभिन्न जिज्ञासाओं को भांप कर उन्हें वैसा ही स्वाद देने का प्रयास करता है। सरकारी योजनाएं हों या सार्वजनिक सूचनाएं सभी में टीवी का पर्दा अभूतपूर्व और अव्वल भूमिका निभा रहा है। कह सकते हैं कि टेलीविजन ने सशक्त और द्रुतगति का जरिया बनकर सुगमता के अनगिनत रास्ते खोलने की महती भूमिका निभाई है। विकास और आविष्कार हमेशा से एक-दूसरे के समानार्थी सहयोगी रहे हैं। ये तथ्य समानरूपी चरितार्थ इसलिए हैं कि विकास और आविष्कार ने मिलकर विगत तीन दशकों में बड़ा विस्तार किया है जिसमें टेलीविजन की अग्रणी भूमिका रही है। यूं कहें कि टेलीविजन का पर्दा प्रत्येक इंसान के जीवन का अहम हिस्सा बन गया है। वर्ष 1996 के आसपास की बात है, जब पहली मर्तबा विश्व टेलीविजन फोरम की याद में हर साल 21 नवंबर को 'विश्व टेलीविजन दिवस' मनाने का प्रचलन शुरू हुआ। उसके बाद संयुक्त राष्ट्र ने लोगों के निर्णय की क्षमता पर ऑडियो-विजुअल मीडिया के बढ़ते प्रभाव और अन्य प्रमुख मुद्दों पर ध्यान केंद्रित करने में टीवी की संभावित भूमिका को पहचानने के लिए एक प्रस्ताव पारित किया। 21वीं सदी में टेलीविज़न ने मुद्रित माध्यम की साक्षर होने की शर्त को भी अनावश्यक प्रमाणित कर दिया। भारतीय संदर्भ में देखें, तो सिनेमा उद्योग आज भी अपनी फिल्मों के प्रमोशन से लेकर रिएलिटी शोज़ को आगे बढ़ाने के लिए टेलीविज़न की ओर ही दौड़ते हैं। दरअसल, उनको टीवी की ताकत का अंदाजा अच्छे से है। प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी को जब देशवासियों से कुछ कहना होता है, तो वह भी टीवी के जरिए ही अपनी जरूरी बात को सभी तक पहुंचाते हैं। मौजूदा वक्त में टीवी की भूमिका में एक और बड़ा अध्याय जुड़ गया है। संचार क्रांति फोटोग्राफी, टेलीग्राफी, रेडियो और टेलीविज़न के आविष्कारों से समृद्ध होते हुए बदलाव का सिलसिला अब इंटरनेट तक पहुंच गया है। ये बात तथ्यात्मक है कि इंटरनेट से पहले रेडियो-टेलीविज़न ने ही संचार क्रांति को आगे बढ़ाया था। मार्च 2025 तक, भारत में 918 निजी उपग्रह टेलीविजन चैनल थे जिनमें से 908 भारत में डाउनलिंकिंग के लिए उपलब्ध हैं। हालांकि चैनलों की संख्या घटती-बढ़ती रहती हैं। दृश्य टीवी की ताकत होते हैं। कवरेज के दौरान दिखाए गए दृश्यों पर दुनिया आंख मूंदकर विश्वास करती है। सूचनाओं के आदान-प्रदान में टीवी की भूमिका अहम रही है और सिलसिला आगे भी बदस्तूर जारी रहेगा।

(लेखक स्वतंत्र पत्रकार हैं, ये उनके अपने विचार हैं।)

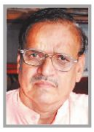

अंकुश

प्रमोद भार्गव

अंतिम सांसें गिनता नक्सली माओवाद

मुठभेड़ में सुरक्षाबलों ने शीर्ष माओवादी क्रूर हिंसा के प्रतीक बन चुके हिड़मा को मार गिराने के बाद सात अन्य नक्सलियों को भी मार गिराया है। इसके साथ तय है कि अब नक्सली हिंसा अपने अंतिम चरण में है। मार्च 2026 तक इसका समूल नाश हो जाएगा, क्योंकि अब प्रमुख नक्सली सरगनाओं की गिनती मात्र 3-4 तक सिमट गई है। यदि वे हथियार डालकर समर्पण नहीं करते हैं तो उनका भी अंत होना तय है। माओवादी किसी भी प्रकार की लोकतांत्रिक प्रक्रिया और अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता को पसंद नहीं करते हैं। इसलिए जो भी उनके खिलाफ जाता है, उसकी बोलती बंद कर दी जाती है लेकिन अब इस चरमपंथ पर पूर्ण अंकुश लगने जा रहा है।

छत्तीसगढ़ और आंध्रप्रदेश की सीमा पर हुई मुठभेड़ में सुरक्षाबलों ने शीर्ष माओवादी क्रूर हिंसा के प्रतीक बन चुके हिड़मा को मार गिराने के बाद सात अन्य नक्सलियों को भी मारने के साथ तय है कि अब नक्सली हिंसा अपने अंतिम चरण में है। मार्च 2026 तक इसका समूल नाश हो जाएगा, क्योंकि अब प्रमुख नक्सली सरगनाओं की गिनती मात्र 3-4 तक सिमट गई है। यदि वे हथियार डालकर समर्पण नहीं करते हैं तो उनका भी अंत होना तय है। हालांकि इस मुठभेड़ में मप्र के बालाघाट में पदस्थ निरीक्षक आशीष शर्मा को बलिदान देना पड़ा है। माओवादी अर्से से देश में एक ऐसी जहरीली विचारधारा रही है, जिसे नगरीय बौद्धिकों का समर्थन मिलता रहा है। ये बौद्धिक नक्सली संगठनों को आदिवासी समाज का हितचिंतक मानते रहे हैं, जबकि जो आदिवासी नक्सलियों के विरोध में रहे, उन्हें इनकी हिंसक क्रूरता का शिकार होना पड़ा है। बावजूद इसे दुर्भाग्य ही कहा जाएगा कि देश के वामपंथी दलों को कभी भी सुरक्षाबलों का नक्सलियों के खिलाफ चलाया जा रहा सफाये का अभियान पसंद नहीं आया। इससे पहले छत्तीसगढ़ के अबूझमाड़ के जंगल में सुरक्षा बलों के नक्सल विरोधी अभियान में बड़ी सफलता तब मिली थी, जब डेढ़ करोड़ के इनामी बसव राजू समेत 27 माओवादियों को सुरक्षा बलों ने मार गिराया था। यह कुख्यात दरिंदा होने के साथ गुरिल्ला लड़ाका था। माओवादी पार्टी का इसे पर्याय माना जाता था। इसका नक्सली सफर 1985 से शुरू हुआ था। इसने वारंगल के क्षेत्रीय इंजीनियरिंग कॉलेज में पढ़ाई की थी।

नक्सली हिंसा लंबे समय से देश के अनेक प्रांतों में आंतरिक मुसीबत बनी हुई है। वामपंथी माओवादी उग्रवाद कभी देश की आंतरिक सुरक्षा के लिए बड़ा खतरा माना जाता रहा है। चाहे जहां रक्तपात की नदियां बहाने वाले इस उग्रवाद पर लगभग नियंत्रण किया जा चुका है। नई रणनीति के अंतर्गत अब सरकार की कोशिश है कि सीआरपीएफ की तैनाती उन सब अज्ञात क्षेत्रों में कर दी जाएं जहां नक्सली अभी भी ठिकाना बनाए हुए हैं। इस नाते केंद्रीय रिजर्व पुलिस बल छत्तीसगढ़ के बस्तर जिले में सबसे अधिक नक्सल हिंसा प्रभावित क्षेत्रों में 4000 से अधिक सैन्यबल तैनात करने जा रहा है। केंद्र सरकार की कोशिश है कि 31 मार्च 2026 तक इस क्षेत्र को पूरी तरह नक्सलवाद से मुक्त कर दिया जाए। इतनी बड़ी संख्या में सैन्यबलों की अज्ञात क्षेत्र में पहुंच का मतलब है कि अब इस उग्रवाद से अंतिम लड़ाई होने वाली है। मजबूत और कठोर कार्य योजना को अमल में लाने का ही नतीजा है कि सुरक्षाबलों के साथ मुठभेड़ में 2024 में 153 नक्सली मारे जा चुके हैं। शाह का कहना है कि 2004-14 की तुलना में 2014 से 2024 के दौरान देश में नक्सली हिंसा की घटनाओं में 53 प्रतिशत की कमी आई है। 2004 से 2014 के बीच नक्सली हिंसा की 16,274 वारदातें दर्ज की गई थीं, जबकि नरेंद्र मोदी के प्रधानमंत्री बनने के बाद 10 सालों में इन घटनाओं की संख्या घटकर 7,696 रह गई। इसी अनुपात में देश में माओवादी हिंसा के कारण होने वाली मौतों की संख्या 2004 से 2014 में 6,568 थीं, जो पिछले दस साल में घटकर 1990 रह गई हैं और अब सरकार ने जो नया संकल्प लिया है। उससे तय है कि जल्द ही इस समस्या को निर्मूल कर दिया जाएगा। जिस

तरह से नरेंद्र मोदी सरकार ने जम्मू-कश्मीर से आतंक और अलगाववाद खत्म करने की निर्णायक लड़ाई लड़ी थी, वैसी ही स्थिति अब छत्तीसगढ़ में अनुभव होने लगी है। इसमें कोई दो राय नहीं कि छत्तीसगढ़ में नक्सली तंत्र कमजोर हुआ है, लेकिन उसकी शक्ति अभी शेष है। अब तक पुलिस व गुप्तचर एजेंसियां इनका सुराग लगाने में नाकाम होती रही थीं, लेकिन नक्सलियों पर शिकंजा कसने के बाद से इनको भी सूचनाएं मिलने लगी हैं। इसी का नतीजा है कि सैन्यबल इन्हें निशाना बनाने में लगातार कामयाब हो रहे हैं। छत्तीसगढ़ के ज्यादातर नक्सली आदिवासी हैं। इनका कार्यक्षेत्र वह आदिवासी बहुल इलाके हैं, जिनमें ये खुद आकर नक्सली बने हैं। इसलिए इनका सुराग सुरक्षाबलों को लगा पाना मुश्किल होता है। लेकिन ये इसी आदिवासी तंत्र से बने मुखबिरों से सूचनाएं आसानी से हासिल कर लेते हैं। दुर्गम जंगली क्षेत्रों के मार्गों में छिपने के स्थलों और जल स्रोतों से भी ये खूब परिचित हैं। इसलिए ये और इनकी शक्ति लंबे समय से यहीं के खाद-पानी से पोषित होती रही है। हालांकि अब इनके हमलों में कमी आई है। दरअसल इन वनवासियों में अर्बन माओवादी नक्सलियों ने यह भ्रम फैला दिया था कि सरकार उनके जंगल, जमीन और जल-स्रोत उद्योगपतियों को सौंपकर उन्हें बेदखल करने में लगी है, इसलिए यह सिलसिला जब तक थमता नहीं है, विरोध की मुहिम जारी रहनी चाहिए। सरकारें इस समस्या के निदान के लिए बातचीत के लिए भी आगे आईं, लेकिन कामयाबी नहीं मिली। इन्हें बंदूक के जरिए भी काबू में लेने की कोशिशें हुई हैं। लेकिन नतीजे पूरी तरह अनुकूल नहीं रहे। एक उपाय यह भी हुआ कि जो नक्सली आदिवासी समर्पण कर मुख्यधारा में आ गए थे, उन्हें बंदूकें देकर नक्सलियों के विरुद्ध खड़ा करने की रणनीति भी अपनाई गई। इस उपाय में खून-खराबा तो बहुत हुआ, लेकिन समस्या बनी रही। गोया, आदिवासियों को मुख्यधारा में लाने से लेकर विकास योजनाएं भी इस क्षेत्र को नक्सल मुक्त करने में अब तक सफल नहीं हो पाई हैं। इस मुठभेड़ में मारे गए हिड़मा का बस्तर के इस जंगली क्षेत्र में बोलबाला रहा है। अब हिड़मा के मारे जाने के बाद नक्सली समस्या के हल की गुंजाइश बढ़ गई है। कांग्रेस की पूर्व केंद्र तथा छत्तीसगढ़ की राज्य सरकार नक्सली समस्या से निपटने के लिए दावा करती रही हैं कि विकास इस समस्या का निदान है। यदि तत्कालीन छत्तीसगढ़ की कांग्रेस सरकार के विकास संबंधी विज्ञापनों में दिए जा रहे आंकड़ों पर भरोसा करें तो छत्तीसगढ़ की तस्वीर विकास के मानदण्डों को छूती दिख रही है, लेकिन इस अनुपात में यह दावा बेमानी है कि समस्या पर अंकुश विकास की धारा से लग रहा है, क्योंकि इसी दौरान बड़ी संख्या में महिलाओं को नक्सली बनाए जाने के प्रमाण भी मिले थे। 2023 के विधानसभा चुनाव में कांग्रेस को अपदस्थ कर भाजपा फिर सत्ता में आई, उसके बाद से ही नक्सलियों के सफाए का सिलसिला चल रहा है। दरअसल, देश में अब तक तथाकथित शहरी बुद्धिजीवियों का एक तबका ऐसा भी रहा, जो माओवादी हिंसा को सही ठहराकर संवैधानिक लोकतंत्र को मुखर चुनौती देकर नक्सलियों का हिमायती बना हुआ था। बावजूद इसे विडंबना ही कहा जाएगा कि जब ये राष्ट्रघाती बुद्धिजीवी पुख्ता सबूतों के आधार पर गिरफ्तार किए गए तो बौद्धिकों और वकीलों के एक गुट ने देश के सर्वोच्च न्यायालय को भी प्रभाव में लेने की कोशिश की थी और गिरफ्तारियों को गलत ठहराया था।

माओवादी किसी भी प्रकार की लोकतांत्रिक प्रक्रिया और अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता को पसंद नहीं करते हैं। इसलिए जो भी उनके खिलाफ जाता है, उसकी बोलती बंद कर दी जाती हैं। लेकिन अब इस चरमपंथ पर पूर्ण अंकुश लगने जा रहा है।

(लेखक वरिष्ठ स्तंभकार हैं, ये उनके अपने विचार हैं।)

लेख पर अपनी प्रतिक्रिया haribhoomi@gmail.com पर दे सकते हैं।

हर मानव में शुभ व अशुभ इच्छाएं होती है

संकलित

दर्शन

शिव कल्याणकारी हैं। शिव कैलाश पर्वत पर निवास करते हैं। कैलाश का अर्थ ही है कि जहां केवल उत्सव हो, केवल आनंद हो। श्रावण के महीने में संपूर्ण वातावरण उत्सव से भर जाता है। शिव-तत्व अपने चरम पर होता है, वह सहजता से उपलब्ध होता है। इसलिए यह मास भगवान शिव की पूजा करने के लिए सर्वोत्तम मास है। हमारे प्राचीन ऋषि अत्यंत बुद्धिमान थे। वे जानते थे कि हर मानव के भीतर इच्छाएं होती हैं, कुछ शुभ और कुछ अशुभ। जीवन में प्रगति के लिए आवश्यक है कि शुभ इच्छाएं फलित हों। विवेक के उपयोग से मनुष्य यह निर्णय ले सकता है कि कौन-सी इच्छाएं उसके लिए लाभदायक हैं और उन इच्छाओं को प्राप्त करने के लिए क्या कार्य कर सकता है। लेकिन कभी-कभी ऐसा भी हो सकता है कि व्यक्ति चाहे कितना भी प्रयत्न कर ले, लेकिन वह अपने इच्छित लक्ष्य को हासिल नहीं कर पाता है। उसे मार्ग में अनेक बाधाओं का सामना करना पड़ता है। कारण विविध हो सकते हैं, कुछ अत्यंत सूक्ष्म, कुछ अधिक सूक्ष्म नहीं। ऋषियों ने इस समस्या पर विचार किया और एक अद्भुत समाधान निकाला। उन्होंने मानव कल्याण के लिए संकल्प और पूजा की प्रक्रिया तैयार की। पूजा आरंभ करने से पूर्व पूजा करने वाले यजमान द्वारा संकल्प लिया जाता है। संकल्प वह विशिष्ट उद्देश्य है, जिसके लिए पूजा आयोजित की जा रही है। संकल्प का उच्चारण करने से पहले स्थान (देश) और समय (काल) को परिभाषित किया जाता है, जहां पूजा आयोजित की जा रही है।

श्रीकृष्ण ने अर्जुन को भ्रम से बचने की सलाह दी

संकलित

प्रेरणा

महाभारत युद्ध की तैयारियां पूरी हो चुकी थीं। कुरुक्षेत्र में कौरव और पांडव पक्ष की सेनाएं आमने-सामने खड़ी थीं। संख्या और शक्ति के हिसाब से कौरवों की सेना ज्यादा अच्छी दिख रही थी। जब अर्जुन ने कौरव पक्ष में अपने परिवार, कुटुंब के लोगों को देखा तो वे भ्रमित हो गए। अर्जुन ने अपने सारथी यानी श्रीकृष्ण से रथ को दोनों सेनाओं के बीच में ले जाने के लिए कहा। श्रीकृष्ण रथ लेकर युद्ध मैदान के बीच में ले गए। वहां पहुंचकर अर्जुन ने भीष्म पितामह, द्रोणाचार्य, कृपाचार्य जैसे योद्धाओं को देखा। इन सभी को देखकर अर्जुन ने युद्ध करने का विचार ही छोड़ दिया और अपने धनुष-बाण नीचे रख दिए। अर्जुन ने श्रीकृष्ण से कहा कि मेरे कुटुंब के सभी लोग मेरे सामने खड़े हैं, मैं उनसे युद्ध नहीं कर सकता। श्रीकृष्ण समझ गए कि अर्जुन भ्रम में फंस गए हैं। उस समय श्रीकृष्ण ने अर्जुन को गीता का उपदेश दिया। भगवान ने समझाया कि जब लक्ष्य बड़ा हो तो सभी बातें चल सकती हैं, लेकिन भ्रम नहीं चल सकता है। तुम्हें अपने सारे भ्रम छोड़कर सिर्फ अपने कर्म पर ध्यान देना चाहिए। जब हम अपने काम अधूरे मन और भ्रम के साथ करते हैं तो सफलता नहीं मिलती है। सफलता चाहते हैं तो सभी भ्रम दूर करते हुए, अपने काम पूरे मन से और एकाग्रता के साथ करना चाहिए।

अंतर्मन

आज की पाती

आधुनिक तकनीक से कृषि करना जरूरी

फसलों की पैदावार बढ़ाने के लिए आधुनिक तकनीक से कृषि करना जरूरी है, क्योंकि इससे किसानों को ज्यादा फायदा हो सकता है। हमारे देश का किसान अब आधुनिक तकनीक से कृषि करने भी लगा है। लेकिन अगर विज्ञान का उचित प्रयोग किया जाए तो यह प्राणी जाति के लिए वरदान सिद्ध हो सकती है, और अनुचित प्रयोग अभिशाप भी बन जाता है। कुछ किसान अपनी फसलों की पैदावार बढ़ाने के लिए कुछ ऐसी दवाइयों, खादों का प्रयोग करते हैं, जो उनकी फसलों को किसी भी रूप में खाता है, उस पर उनका विपरीत असर भी पड़ता है। फल-सब्जियों की पैदावार या इनकी संभाल करने के लिए भी जो रासायनिक खादों और अन्य कैमिकल का प्रयोग किया जा रहा है, वह भी शरीर के लिए बहुत ज्यादा हानिकारक है। *- मनोज वर्मा, दुर्ग*

ट्रेंड

शपथ लेने पर बधाई

बिहार के मुख्यमंत्री पद की पुनः शपथ लेने पर नीतीश कुमार और उप मुख्यमंत्री सम्राट चौधरी एवं विजय सिन्हा को हार्दिक बधाई! साथ ही आज शपथ लेने वाले सभी मंत्रियों को भी बहुत बधाई। सभी के सफल कार्यकाल की शुभकामनाएँ।

-राजनाथ सिंह, रक्षा मंत्री

मिल्खा सिंह को श्रद्धांजलि

भारतीय खेल जगत के गौरव, 'फ्लाइंग सिख', 'पद्म श्री' मिल्खा सिंह को उनकी जयंती पर विनम्र श्रद्धांजलि! उनके हर कदम में संघर्ष की गूंज थी, हर जीत में राष्ट्र का गौरव था। मिट्टी के ट्रैक से विश्व मंच तक पहुंचने की उनकी यात्रा ने दुनिया को सिखाया कि मेहनत ही सबसे बड़ा पदक है।

- योगी आदित्यनाथ, सीएम, उप्र

हेली पर्यटन सेवा

मध्यप्रदेश में पर्यटन क्षेत्र के नए युग का शुभारंभ... आज से पीएमश्री हेली पर्यटन सेवा का नियमित रूप से संचालन होने जा रहा है। इस सुविधा से कम समय में अधिक गंतव्यों की यात्रा पूर्ण होगी। अर्थव्यवस्था, रोजगार और पर्यटन में भी वृद्धि होगी।

- डा. मोहन यादव, सीएम, मध्यप्रदेश

हवा स्वच्छ बनाने के प्रयास

दिल्ली की हवा को स्वच्छ बनाने के लिए स्प्रिंकलर, एंटी-स्मॉग गन, मैकेनिकल स्वीपर्स, मिस्ट-स्प्रे सिस्टम, निर्माण स्थलों पर एंटी-स्मॉग व्यवस्था और रोजाना कचरे की बायो-माइनिंग जैसे प्रयास निरंतर जारी हैं।

- रेखा गुप्ता, सीएम, नई दिल्ली

करंट अफेयर

मेटा ने आस्ट्रेलियाई किशोरों को डेटा के लिए किया सचेत

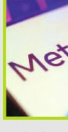

प्रौद्योगिकी क्षेत्र की दिग्गज कंपनी मेटा ने बृहस्पतिवार को ऑस्ट्रेलिया के हजारों किशोर उपयोगकर्ताओं को दो हफ्तों में अपनी डिजिटल 'हिस्ट्री' डाउनलोड करने तथा फेसबुक, इंस्टाग्राम और थ्रेड्स से अपना खाता हटाने की चेतावनी भेजनी शुरू कर दी है। यह कदम दुनिया में पहली बार लागू होने वाले उस सोशल मीडिया प्रतिबंध से पहले उठाया गया है, जिसके तहत 16 साल से कम उम्र के बच्चों के खाते बंद किए जाएंगे। ऑस्ट्रेलियाई सरकार ने दो सप्ताह पहले घोषणा की थी कि मेटा के तीनों मंचों फेसबुक, इंस्टाग्राम, थ्रेड्स के साथ ही स्नैपचैट, टिकटॉक, एक्स और यूट्यूब को भी 10 दिसंबर से 16 वर्ष से कम उम्र के ऑस्ट्रेलियाई खाता धारकों को हटाने के लिए कदम उठाने होंगे। कैलिफोर्निया स्थित मेटा ने बृहस्पतिवार को किशोर खाता धारकों को एसएमएस और ईमेल भेजकर चेतावनी दी कि चार दिसंबर से संदिग्ध नाबालिग उपयोगकर्ताओं की इन मंचों तक पहुंच रोक दी जाएगी। मेटा ने एक बयान में कहा, 'हम आज से प्रभावित किशोरों को सूचित करना शुरू कर रहे हैं ताकि वे अपने संपर्कों और यादों को सुरक्षित कर सकें।' मेटा ने यह भी कहा कि इस अवधि में किशोर उपयोगकर्ता अपनी संपर्क जानकारी अपडेट कर सकते हैं।

ऑफ बीट

भोजन के साथ आपके संबंध कैसे हैं

क्या आप अपने शरीर के संकेतों को समझते हैं, जिसका अर्थ है कि आपको पता है कि आपको कब भूख लगी है, कब नहीं और कब पेट भरा हुआ महसूस हो रहा है? सभी खाद्य समूहों में नियमित अंतराल पर उचित मात्रा और विभिन्न प्रकार के खाद्य पदार्थ खा रहे हैं ताकि आपकी पोषक तत्व, स्वास्थ्य और कल्याण संबंधी ज़रूरतें पूरी हों? दूसरों के साथ खाना और अकेले खाना भी आरामदायक है? क्या आप भोजन का आनंद लेने में सक्षम हैं, यदि आपको अधिक जवाब हां में नहीं मिले, तो आपको भोजन के साथ अपने रिश्ते को बेहतर बनाने पर काम करने की आवश्यकता हो सकती है। समस्या यह है कि यह मस्तिष्क के पुरस्कार केंद्र को ट्रिगर करता है, जिसका अर्थ है कि यद्यपि आप बेहतर महसूस करते हैं, यह व्यवहार प्रबल हो जाता है, इसलिए नकारात्मक भावनाओं के जवाब में आपके खाते रहने की संभावना अधिक होती है। भावनात्मक खान-पान और अनियंत्रित खान-पान की प्रवृत्ति खाने के विकार के लक्षणों और खराब गुणवत्ता वाले आहार से जुड़ी होने की अधिक संभावना है, जिसमें सब्जियों का कम सेवन और कम पोषक तत्वों वाले खाद्य पदार्थों का अधिक सेवन शामिल है।

अपने विचार

हरिभूमि कार्यालय

टिकरापारा, रायपुर में पत्र के माध्यम से या फैक्स : 0771-4242222, 23 पर या सीधे मेल से hbcgpati@gmail.com पर भेज सकते हैं।

https://t.me/AllNewsPaperPaid1